बिहार सरकार

एस.सी.ई.आर.टी., बिहार
द्वारा विकसित

S2

दो वर्षीय सेवापूर्व डिप्लोमा इन एलिमेन्ट्री एजुकेशन

संज्ञान, सीखना और बाल विकास

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद् (एस.सी.ई.आर.टी.),
महेन्द्रू, पटना, बिहार

पाठ्य पुस्तक विकास समूह

पत्र–S-2

(संज्ञान, सीखना और बाल विकास)

दिशाबोध	श्री दीपक कुमार सिंह, भा.प्र.से., अपर मुख्य सचिव, शिक्षा विभाग,बिहार,पटना
	श्री सज्जन राजसेकर, भा.प्र.से., निदेशक, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्,महेन्द्रू बिहार, पटना
	डॉ0 एस.पी.सिन्हा, सलाहकार, शिक्षा विभाग,बिहार,पटना
समन्वयक	श्रीमती विभा रानी,विभाग प्रभारी,शिक्षा मनोविज्ञान विभाग,एस.सी.ई.आर.टी.,पटना
लेखक समूह	श्री राकेश कुमार सिंह, प्रभारी प्राचार्य,प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय, बिहिया,भोजपुर।
	डॉ0 नीतु सिंह,वरीय व्याख्याता,अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय,गया।
	श्रीमती रेणु कुमारी,वरीय व्याख्याता,अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय,छपरा।
समीक्षक	डा0 मीनाक्षी चतुर्वेदी, प्रभारी प्राचार्य, अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय, भागलपुर।
	श्री राहुल पटेल, प्रभारी प्राचार्य, डायट सीवान।
भाषा समीक्षक	डॉ0 सोनी कुमारी, प्रतिनियुक्त व्याख्याता, बी0एन0आर0 ट्रेनिंग कॉलेज, गुलजारबाग, पटना।

पाठ–सूची

इकाई	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
1	बच्चे में संज्ञानात्मक एवं संप्रत्यय विकास	4-35
2	बाल विकास एवं सीखना	36-61
3	सीखने के व्यवहारवादी एवं सूचना प्रसंस्करण सिद्धांतों की समझ	62-92
4	बच्चे के विकास एवं सीखने में समाज की भूमिका	93-118
5	सीखने को प्रभावित करनेवाले कारक	119-144
6	संदर्भ सूची	145-146

Unit – 1 बच्चे में संज्ञानात्मक एवं संप्रत्यय विकास

प्रस्तावना

बच्चे किस प्रकार से सोचते हैं ? वे अपने परिवेश का कैसे अनुभव करते हैं ? चीजों का कैसे पता लगाते है ? रोजमर्रा के जीवन में आनेवाली समस्याओं का समाधान कैसे करते हैं यह ज्ञान, कौशल, समस्या समाधान एवं चीजों को बेहतर ढ़ंग से समझने का विकास है, जो बच्चे को उनके आस–पास की दुनिया के बारे में सोचने और समझने में मदद करता है। शिक्षकों के लिए बच्चे के संज्ञानात्मक विकास को समझना और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि बच्चे के सीखने–सीखाने की प्रक्रिया में संज्ञानात्मक पक्षों पर सबसे ज्यादा जोर होता है। बच्चे की विभिन्न आयु में एक दूसरे से भिन्न–भिन्न परिवेश के कारण संज्ञानात्मक विकास की गति भिन्न होती है। बच्चे द्वारा अर्जित ज्ञान के भंडार का स्वरूप विकास की प्रत्येक अवस्था में बदलता है और परिमार्जित होता रहता है। संज्ञानात्मक विकास का एक पहलू बुद्धि भी है जिसकी कई जटिल अवधारणाएँ हैं जो विद्यालय में बच्चे के सीखने–सीखाने की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। संज्ञानात्मक विकास के माध्यम से मनुष्य अपने वातावरण से सामंजस्य स्थापित करता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात हम:

- संज्ञानात्मक विकास के अर्थ एवं स्वरूप को जान सकेंगे।
- संज्ञानात्मक विकास के संदर्भ में पियाजे एवं ब्रुनर के सिद्धांतों को जानेंगे।
- बुद्धि एवं संज्ञानात्मक विकास से संबंधित विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- संज्ञानात्मक विकास के ऐतिहासिक एवं समकालीन संदर्भ के बारे में जानेंगे।
- किसी कार्य के पीछे क्या कारण है ? इसकी समझ विकसित कर पाएँगे।

4.

संज्ञानात्मक विकास का अर्थ एवं संकल्पना

संज्ञानात्मक विकास से तात्पर्य बच्चे की सोचने, समझने, स्मरण करने, विचार करने तथा समस्या समाधान करने, ध्यान लगाने की शक्ति, प्रत्यक्ष ज्ञान एवं संकल्पना, जिज्ञासा एवं चिंतन आदि से है। संज्ञानात्मक सिद्वांत के अंतर्गत इस बात की विवेचना की जाती है कि व्यक्तियों में स्वयं के प्रति तथा अपने वातावरण के प्रति विवेक किस प्रकार विकसित

होता है और वे अपने वातावरण के परिप्रेक्ष्य में कैसे कार्य करते हैं। मनुष्यों द्वारा किये जाने वाले लगभग सभी कार्य में मानसिक प्रक्रियाएँ शामिल रहती है। बच्चे जैसे-जैसे बड़े होते जाते हैं, वैसे-वैसे उनकी मानसिक योग्यताएँ एवं क्षमताएँ बढ़ती जाती हैं और ऐसी समस्याएँ जिन्हें वे बचपन में नहीं सुलझा पाते थे, आसानी से सुलझाने लगते हैं।

मनोवैज्ञानिक अवधारणा के अनुसार संज्ञान वह मानसिक क्रिया है जिसके द्वारा ज्ञानार्जन होता है। संज्ञान (Cognition) शब्द का प्रयोग अक्सर सीखनाऔर चिंतन की व्याख्या करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। कॉगनिशन शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के कॉगनोसियर (Cognoscere) शब्द से हुयी है, जिसका अर्थ है- 'जानना या ज्ञान'। संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया को समझने के लिए सर्वप्रथम यह समझना आवश्यक है कि बच्चा संसार का प्रत्यक्षीकरण कैसे करता है? आयु एवं अनुभव के आधार पर बच्चे इस दुनिया को समझने के लिए विकसित होते जाते है, इसे ही संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development) कहा जाता है। यह विकास की वह प्रक्रिया है जिसमें बच्चे की ज्ञान अर्जित करने की जन्मजात योग्यता सम्मिलित होती हैं जो मस्तिष्क की संरचना तथा क्रियाओं से संबंधित होती है। इस प्रकार से मानसिक विकास अथवा संज्ञानात्मक विकास का तात्पर्य ''बालक की उन सभी मानसिक योग्यताओं और क्षमताओं में वृद्धि और विकास से है जिसके परिणामस्वरूप वह अपने निरंतर बदलते हुए वातावरण में ठीक प्रकार समायोजन करता है और बड़ी-बड़ी कठिन तथा उलझन पूर्ण समस्याओं को सुलझाने में अपनी मानसिक शक्तियों को पूरी तरह समर्थ पाता है''(मंगल, 2016, पृ० 99)

संज्ञान में निहित प्रमुख प्रक्रियाएँ (Important process in congnition)

संज्ञानात्मक विकास एक विकासात्मक प्रक्रिया है। जिसके द्वारा एक बच्चे ा बुद्धिमान व्यक्ति बनता है। बच्चे ो के विकास के क्रम में पहले चार वर्षो में बालक का 80 प्रतिशत मानसिक विकास हो जाता है। बालक की उन सभी मानसिक क्षमताओं और योग्यताओं का विकास जिसके परिणामस्वरूप वह अपने निरंतर बदलते वातावरण में ठीक प्रकार से समायोजन करता है, और बड़ी-बड़ी कठिन तथा उलझनपूर्ण समस्याओं को सुलझाने में अपनी मानिसक शक्तियों को पूर्ण रूप से समर्थ पाता है, संज्ञानात्मक विकास कहलाता है। संज्ञानात्मक विकास के अंतर्गत बच्चे अपनी आयु के साथ-साथ किस प्रकार आगे बढ़ते है इस पर चर्चा करेंगे।

1. संवेदीकरण और प्रत्यक्षीकरण (Sensation and perception)

संवेदीकरण और प्रत्यक्षीकरण दोनों ही संज्ञानात्मक विकास के महत्वपूर्ण पहलू हैं। हमे अपने ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से जो कुछ भी अनुभूति होती है उसे संवेदना कहते हैं। और जब हम संवेदनाओं से कोई निश्चित अर्थ निकालने की चेष्टा करते हैं तो वो

प्रत्यक्षीकरण कहलाता है। शैशवास्था में ज्ञानेन्द्रियाँ इतनी विकसित नहीं होती फलस्वरूप बच्चे न वस्तुओं को पहचान पाते हैं और न ही उनसे कोई विशेष अर्थ ग्रहण कर पाते हैं। इसे हम एक उदाहरण के माध्यम से आसानी से समझ सकते हैं। छोटे बच्चे मोमबत्ती और दीपक की रौशनी देखकर खुश होते हैं पर उन्हें अभी तक अनुभव नहीं होता है कि उसे छूने से उनके हाथ जल सकते हैं। और एक दिन जब अपने अभिभावकों की अनुपस्थिति में जलती मोमबत्ती को छू लेता है तो उसे जलन का अनुभव होता है। इसके बाद अगर वह इसी तरह कभी जलते हुए दीपक या बल्ब को छू लेता है तो उसे यह बात समझ में आ जाती है कि जलती हुयी चीजों को छूने से हाथ जल सकता है।

इस प्रकार बच्चे जब अपनी ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग करना प्रारंभ कर देते हैं तो उन्हें अपने चारो ओर के वातावरण के बारे में जानने की जिज्ञासा बढ़ जाती है। जितना ज्यादा वो अपने प्रश्नों का उत्तर जानने का प्रयास करते हैं, उतनी जल्दी उनकी प्रत्यक्षीकरण की योग्यता विकसित होने लगती है। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं, उनके ज्ञानेन्द्रियों (आँख, कान, नाक, जीभ, और त्वचा) की कार्यकुशलता एवं क्षमता बढ़ती जाती है और उनके प्रत्यक्षीकरण का अनुभव अधिक निश्चित एवं अर्थपूर्ण हो जाते हैं।

2. संप्रत्यय निर्माण (Concept Formation)

जब बच्चे कुछ और बड़े हो जाते हैं तो अपने प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर संप्रत्यय (concept) का निर्माण करने लगते हैं। बच्चे के संप्रत्यय निर्माण में उनके पूर्व के तथा वर्तमान अनुभव बहुत अधिक महत्व रखते हैं। संप्रत्यय (concept) का निर्माण होना भी बच्चे के संज्ञानात्मक विकास का महत्वपूर्ण पहलू है। संप्रत्यय निर्माण में निम्नांकित चार चरण (Concept formation) महत्वपूर्ण होते है-

1. अवलोकन (observation)
2. सामान्यीकरण (generalisation)
3. विभेदीकरण (Discrimination)
4. अमूर्तता (Abstraction)

संप्रत्यय के निर्माण का पहला चरण किसी वस्तु, घटना या अनुभव का अवलोकन है। यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दोनों हो सकता है। जैसे बच्चे प्रत्यक्षतः एक कुत्ते को देखता है अथवा अपने दादा-दादी या माता-पिता से सुन कर जानता है।

दूसरे चरण में बार-बार के अनुभव या विभिन्न वस्तुओं के अवलोकन से सामान्य विचार बनता है। इस प्रकार एक बच्चे ा पहले एक कुत्ते को देखता है, फिर दूसरे कुत्ते को फिर और भी अन्य को देखता है। और उसके मस्तिष्क में एक छवि अंकित हो

जाती है। इसे सामान्यीकरण की प्रक्रिया कहते है। सामान्यीकरण की प्रक्रिया बताती है कि बच्चे लिंग, आकृति, संख्या आदि जैसे अवधारणाओं को कैसे प्राप्त करता है।

संप्रत्यय निर्माण के तीसरे चरण में बच्चे अवलोकन एवं सामान्यीकरण के साथ-साथ चीजों के बीच अंतर करना जान जाते हैं। गाय और कुत्ता दोनों चार पैरों पर चलते हैं परंतु दोनो अलग जानवर है। इस प्रकार विभेदीकरण के माध्यम से अवधारणा का निर्माण होता है।

चौथे चरण में बच्चों में अमूर्त अवधारणा बनाने की क्षमता विकसित होती है। यह बच्चे की बौद्धिक क्षमता एवं उनके स्वयं के अनुभवों से विकसित होती है। बच्चे जब पहली बार किसी वस्तु को देखता है तो उसके मस्तिष्क में अस्पष्ट एवं सामान्य विचार बनता है। यही कारण है कि किसी चीज की स्पष्ट अवधारणा नहीं बनती है। सामान्यीकरण एवं विभेदीकरण के माध्यम से अवधारणा स्पष्ट होते जाते हैं। बच्चे पहले कुत्ता एवं गाय को एक ही समझता है क्योंकि उसकी अवधारणा है कि दोनों को चार पैर, एक पूँछ, दो आँख, दो कान होता है। बाद में बच्चे ने यह विभेद किया कि दोनों अलग जानवर है, तथा स्पष्ट अवधारणाओं का निर्माण किया। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं परिपक्वता ग्रहण करने के फलस्वरूप उनकी अमूर्त अवधारणाएँ अधिक स्पष्ट, विशिष्ट और निश्चित हो जाती हैं जिसके माध्यम से बच्चे के अंदर विभिन्न संप्रत्ययों का निर्माण होता है।

3. भाषा विकास (language development)

संज्ञानात्मक विकास में भाषा का विकास महत्वपूर्ण योगदान देता है। बच्चे में भाषा का विकास जीवन की शुरूआती प्रक्रिया है। प्रथम वर्ष में वह केवल कुछ शब्दों का उच्चारण ही सीख पाता है, परंन्तु उसके पश्चात् बोलने संबंधी शब्दकोश में तेजी से वृद्धि होती है। बच्चे अपने परिवेश में अपनों से बड़ो तथा साथियों का अनुकरण कर शीघ्रता से बोलना सीखता है।

4. समस्या समाधान योग्यता का विकास (Development of problem solving ability)

संज्ञानात्मक विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है समस्या समाधान करने की योग्यता का विकास। इसके अंतर्गत जीवन में आने वाली नयी समस्याओं के समाधान करने का तरीका विकसित होता है। छोटे बच्चे में समस्या समाधान की योग्यता नहीं होती है, परंतु परिपक्व होने के साथ ही, वे बड़े-बडें, समस्याओं के समाधान में निपुण होते जाते हैं।

स्पष्ट है कि बच्चे में आयु के साथ-साथ उसकी मानसिक शक्तियाँ एवं मानसिक प्रक्रियाएँ विकसित होती है जिसे हम संज्ञानात्मक विकास कहते है।

संज्ञानात्मक विकास और सीखना

एन.सी.एफ. 2005 के अनुसार, सीखना ज्ञान के निर्माण की एक प्रकिया है। बच्चे कई प्रकार की गतिविधियों के आधार पर अपने लिए ज्ञान की रचना करते हैं। अपने ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से प्रत्येक पल कुछ नया अनुभव करते हैं तथा उनको पुराने अनुभवों के आधार पर पुनः व्यवस्थित करते हैं। यदि बच्चे को आत्म अभिव्यक्ति या प्रश्न पूछने की अनुमति नहीं मिलती तो वे निष्क्रिय हो जाते हैं। बच्चे खुद ही खोज करके एवं प्रमाण जुटा के सीखते हैं एवं ज्ञान का सृजन करते हैं। इसके विपरीत व्यवहारवादी विचारधारा यह मानती थी कि सीखने वाला निष्क्रिय है। वे बच्चे को एक खाली स्लेट की तरह मानते थे जिस पर कुछ भी लिखा जा सकता है। व्यवहारवाद मनुष्यों और अन्य जानवरों के व्यवहार को समझने के लिए एक दृष्टिकोण हैं जो व्यवहार निर्माण में अनुवांशिकता को महत्वपूर्ण मानते थे। परंतु वाटसन, व्यवहार को अनुवांशिक न मानकर पर्यावरणीय बलों द्वारा निर्धारित मानते थे। उन्होनें कहा कि –

''मुझे एक दर्जन स्वस्थ बच्चे दें, आप जैसा चाहे मैं उसको उस रूप में बना दूँगा।''

"Give me a dozen healthy children, I will make them as you want."

स्कीनर ने सीखने के लिए 'प्रोग्राम्ड लर्लिग' विधि दी। उन्होनें कहा कि सीखने हेतु सीखने वाले को पहले कोई न कोई किया करनी पड़ती है, सक्रिय होना पड़ता है, इस व्यवहार को जब कोई उचित पुनर्बलन (re-inforcement) प्राप्त हो जाता है तो उसे उसी रूप में दोहराने की संभावना बढ़ती जाती है और फलस्वरूप सीखना होता है।

कोहलर ने सीखने के लिए सर्वप्रथम अंतः दृष्टि (insight) शब्द का प्रयोग किया। उनका कहना था कि बच्चे सीखने के लिए उल्टे-सीधे हाथ-पॉव नहीं मारते बल्कि अपनी सूझबूझ का प्रयोग करते है।

लेविन ने बताया कि सीखना व्यक्ति और वातावरण दोनो का प्रतिफल है। थार्नडाइक ने बताया कि सीखने वाला तभी सीखता है जब वह उसके लिए तत्पर हो।

जीन पियाजे के अनुसार बालकों का मानसिक विकास

जीन प्याजे (Jean Piaget) स्वीटजरलैंड निवासी एक 'मनोवैज्ञानिक थे। वह जीव विज्ञान के बच्चे थे और मनोविज्ञान एवं दर्शन में भी गहरी रूचि रखते थे। अल्फ्रेड बिने प्रयोगशाला में बुद्धिलब्धि के अध्ययन में उनकी रूचि जागृत हुई। अपने कार्य के दौरान,

वह बहुत से बच्चे से मिले एवं उन्होनं बच्चे के चिंतन से संबंधित कुछ रोचक बातें प्रेक्षित की। बच्चे द्वारा तार्किक सोच के लिए आवश्यक सवालों के गलत जबाब देने के कारण वह लोगों से उलझ गए। उनका मानना था कि इन गलत उत्तरों से व्यस्कों और बच्चे की सोच के बीच महत्वपूर्ण अंतर सामने आया है।

जीन पियाजे (1936) संज्ञानात्मक विकास का व्यवस्थित अध्ययन करने वाले पहले मनोवैज्ञानिक थे। इनसे पहले मनोवैज्ञानिकों की धारणा थी कि बच्चे व्यस्कों की तुलना में कम सक्षम है, उन्हें अक्सर मिनी व्यस्क के रूप में सोचा जाता था परंतु पियाजे ने अनुभव किया कि जैसे-जैसे बच्चे की आयु बढ़ती है वैसे-वैसे उसका संज्ञानात्मक विकास (cognitive development) भी होता जाता है। उन्होनें यह भी महसूस किया कि बड़े बच्चे समान परीक्षण पर अधिक उत्तर देने में सक्षम हैं। यह भी अनुभव किया कि बच्चे द्वारा दिये गए गलत उत्तर, सही उत्तर की तुलना में उनकी सोच एवं तर्क के विश्लेषण में अधिक उपयोगी है, साथ ही एक ही आयु के बच्चे के गलत तर्कों के मध्य समानता होती है।

व्यवहारवादियों के विपरीत पियाजे ने अपने अनुभवों से समझा कि नियंत्रित एवं संरचनात्मक वातावरण (Controlled and Structural Environment) में बच्चे स्वयं को अभिव्यक्त करने में सक्षम नहीं होते हैं। अत: वे बच्चे से उसी वातावरण में मिले जिसमें वो निश्चिन्त थे। उन्होनें अपनी दी हुयी क्रियाओं पर कार्य करते हुए बच्चे का अवलोकन किया व उनसे बातचीत की। बच्चे से अंत: क्रिया के दौरान उन्होंने कोई हस्तक्षेप नहीं किया। उन्होनें बच्चे से एक प्रश्न पूछा और बच्चे की प्रतिक्रिया के आधार पर अगले प्रश्न का निर्माण किया। इस प्रक्रिया से उन्होनें निष्कर्ष निकाला कि जीवन के प्रारंभिक वर्षो में चिंतन की प्रक्रिया एवं ज्ञान कैसे विकसित होता है। बच्चे कैसे सोचते है? वे अपने आस-पास के परिवेश के बारे में क्या अनुभव करते हैं ? बच्चे जैसे-जैसे बड़े होते हैं वह संसार को कैसे बेहतर समझने लगते हैं? इन सभी प्रश्नों को जीन प्याजे ने अपने सिद्धांतों के आधार पर समझाने का प्रयास किया। उनका मानना था कि बच्चे क्रियाओं के माध्यम से दुनिया का अनुभव करते हैं, शब्दों के साथ चीजों का प्रतिनिधित्व करते हैं तार्किक रूप से सोचते हैं और तर्क का उपयोग करते हैं।

बच्चे में संज्ञानात्मक विकास किस प्रकार होता है इसे जानने के लिए पियाजे ने स्वयं के बच्चे को अपनी खोज का विषय बनाया। बच्चे जैसे-जैसे बड़े होते गये उनके संज्ञानात्मक विकास संबंधी क्रियाओं का वे बड़ी बारीकी से अध्ययन करते रहे। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप उन्होनें जिन विचारों का प्रतिपादन किया उसे पियाजे का संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत के नाम से जाना जाता है। इस सिद्धांत को भली-भाँति समझने के लिए हमे पियाजे के केन्द्रीय प्रत्ययों को समझना होगा-

1. आत्मसातीकरण–

आत्मसातीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें हम अपने स्कीमा (जो हम पहले से जानते है) में फिट के लिए नई जानकारी को संशोधित करते हैं या बदलते है। 'स्कीमा' से तात्पर्य ऐसी मानसिक संरचना से हैं जो व्यक्ति के मस्तिष्क में सूचनाओं को संगठित करने हेतु विद्यमान होती है। स्पष्ट है कि आत्मसातीकरण के अंतर्गत बालक नये ज्ञान को पूर्व ज्ञान के साथ शामिल कर लेता है, अर्थात् नये ज्ञान का आत्मसात अपने पुराने स्कीमा में कर लेता है।

2. समायोजन (Accommodation) -

वह मानसिक प्रक्रिया जिसमें बच्चे ा सूचना के अनुसार समायोजन करता है अर्थात स्कीमा को वातावरण के अनुसार समायोजित कर लेता है। साथ ही जब बच्चे के सामने ऐसी परिस्थिति या समस्या आती है, जिसका उसे कभी अनुभव नहीं हुआ तो इससे उसमें एक तरह का संज्ञानात्मक असंतुलन (disequilibrium) उत्पन्न होता जाता है जिसे दूर करने के लिए या उनमें संतुलन लाने के लिए बच्चे ा आत्मसातीकरण एवं समायोजन (equilibrium) या दोनों प्रक्रियाएँ करना आरंभ करते हैं। चित्र 1.1 में आत्सातीकरण (assimilation) तथा समायोजन (Accommodation) की प्रक्रिया को समझाया गया है। बच्चे ा नई परिस्थिति में अपनी स्किमा को समायोजित कर नई परिस्थिति में अपने आप को समायोजित कर लेता है।

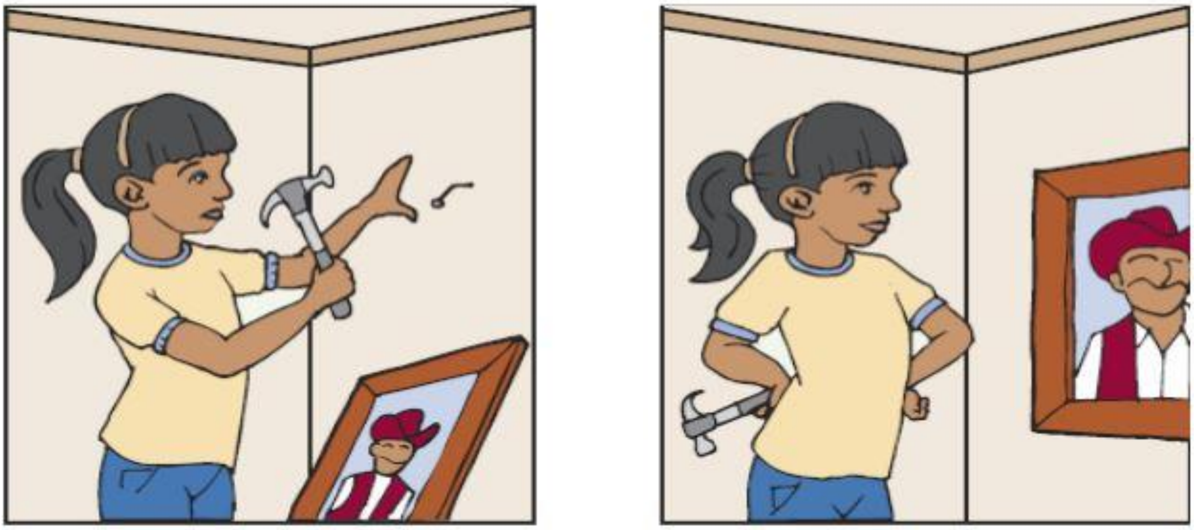

Assimilation occurs when people incorporate new information into their existing schematic knowledge. *How might this 8-year-old girl first attempt to use the hammer and nail, based on her preexisting schematic knowledge about these objects?*

Accommodation occurs when people adjust their knowledge schemas to new information. *How might the girl adjust her schemas regarding hammers and nails during her successful effort to hang the picture?*

चित्र संख्या 1.1 : आत्मसातीकरण (Assimilation) तथा समायोजन की प्रक्रिया।

3. साम्यधारण (Equilibration) –

साम्यधारण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चे आत्मसातीकरण (Assmidation) तथा समायोजन (Accommodation) की प्रक्रियाओं के बीच एक संतुलन कायम करता है। जब एक बच्चे का स्कीमा आत्मासात (assimilation) के माध्यम से नई जानकारी हासिल करता है तो यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक नये ज्ञान के लिए समायोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती।

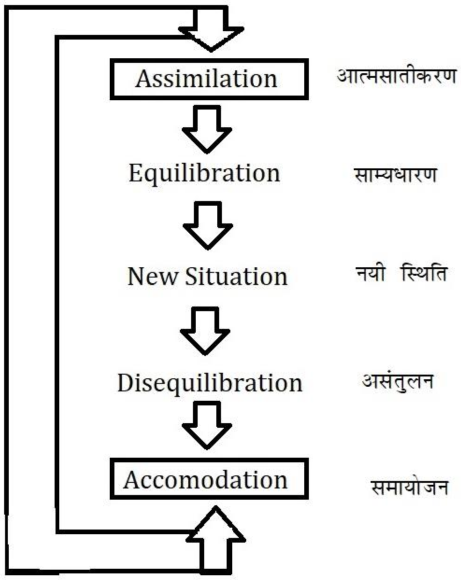

चित्र संख्या 1.2: संज्ञानात्मक प्रक्रिया

आत्मसातीकरण का उदाहरण– यदि कोई बच्चे ा जोड़ (addition) की जानकारी रखता है तो उसको गुणा (Multiplication) सीखने में मदद मिलेगी क्योंकि उसने अपनी जोड़ की स्कीमा में थोड़ा सा परिवर्तन करके गुणा सीख लिया। एक और उदाहरण है कि यदि कोई बच्चे ा साइकिल चलाना जानता है तो वह मोटरसाईकिल चलाना सीख लेता है क्योंकि अपनी स्कीमा में वह थोड़ा परिवर्तन करता है।

समायोजन का उदाहरण–

अगर व्यक्ति को कार चलाना सीखना है तो उसे मौजूदा स्कीमा (साइकिल, मोटर साइकिल चलाना) में बदलाव लाना होगा तथा नये स्कीमा का विस्तार करना होगा।

संतुलन अथवा साम्यधारण (Equilibration)-

उपर्युक्त उदाहरण में जब मौजुदा स्कीमा (साइकिल, मोटर साइकिल चलाना) नये अनुभव (कार चलाना) को नहीं समझा पाता तो मानसिक असाम्यता की स्थिति उत्पन्न हुयी इसके निवारण के लिए संतुलन तथा समायोजन की प्रक्रिया चलती रहती है।

■ संज्ञान में इन्हीं मूल प्रवृतियों के आधार पर पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास के चार चरण की बात की। ये चरण सिर्फ संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया को समझने का आधार है जिन्हें किसी खास उम्र विशेष से नहीं बाँधा जाना चाहिए।

पियाजे द्वारा प्रतिपादित संज्ञानात्मक विकास की चार अवस्थाएँ	अवस्थाओं का आयु वर्ग
संवेदी क्रियात्मक अवस्था (Sensory motor stage)	जन्म से 2 वर्ष
पूर्व संक्रियात्मक अवस्था Pre-operational stage	02–07 वर्ष
मूर्त संक्रियात्मक अवस्था (Concrete operational stage)	07–11 वर्ष
औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था Formal operational stage	11 से ऊपर

1. संवेदी क्रियात्मक अवस्था (Sensory Motor Stage) -

यह अवस्था जन्म से लकर दो वर्ष तक होती है। जैसा कि नाम से स्पष्ट है बच्चे इस अवस्था की शुरूआत में संसार के विषय में अपनी ज्ञानेन्द्रियों – स्पर्श, स्वाद, श्रवण, दृश्य एवं घ्राण के माध्यम से अनुभव करते हैं। जन्म के समय बालक केवल सरल क्रियाएँ ही करता है। इन सरल क्रियाओं को ही पियाजे स्कीमा कहते हैं। बच्चे के व्यवहार में मुख्यत: चूसने व रोने जैसी सहज क्रियाएँ सम्मिलित होती है। इस अवस्था की मुख्य विशेषता वस्तु स्थायित्व है। अर्थात् इस अवस्था में बच्चे को यह बोध होने लगता है कि वस्तुएँ दिखाई दे अथवा न दिखायी दें उनका अस्तित्व हमेशा रहता है। सामान्यत: 8 या 9 माह की आयु तक 'वस्तु स्थायित्व' के लक्षण दिखने लगते हैं। इससे पूर्व बच्चे (object permanence) जिन वस्तु को अपनी इन्द्रियों (sense organ) से अनुभव कर सकते हैं, उन्हीं का अस्तित्व है ऐसा समझते हैं। इस अवस्था में होने वाले विकास में समाहित होते हैं–

→ सहज क्रियाओं का समन्वय

Coordinating Reflexes

→ शारीरिक क्रियाओं पर श्रेष्ठ नियंत्रण

Greater control over body by movement

→ सामान्य चालक क्रियाओं का समन्वय

Coordinating simple motor action

इसी तरह बच्चे धीरे–धीरे यह समझने लगते हैं कि सभी वस्तुओं का अपना अलग स्वतंत्र अस्तित्व होता है, जो उनके स्वयं के अस्तित्व से अलग होता है। इसी आयु में भाषा विकास भी प्रारंभ हो जाता है।

चित्र:1.3 पियाजे की संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ

2. पूर्व संक्रियात्मक अवस्था (Pre-operational stage) –

यह अवस्था दो से सात वर्ष की आयु की है। प्रारंभिक विद्यालय के अध्यापकों के लिए इस अवस्था को समझना महत्वपूर्ण है क्योंकि बच्चा इस अवस्था के उत्तरार्ध में विद्यालय जाना प्रारंभ कर देता है। संवेदी क्रियात्मक अवस्था (sesory motor stage) की मानसिक प्रक्रियाएँ इस अवस्था में ठीक प्रकार विकसित होती है। संवेदी क्रियात्मक अवस्था के अन्त तक बच्चे में सांकेतिक विचार (symbolic thought) उभरने शुरू हो जाते हैं। पूर्व संक्रियात्मक अवस्था इसी क्षमता पर आधारित होती हैं। बच्चे में प्रतीक (शब्दों, चिह्नों, चित्रों आदि) बनाने व इस्तेमाल करने की क्षमता विकसित हो जाती है।

इस अवस्था में भाषा का विकास बहुत तीव्र गति से होता है परंतु यह क्षमता बच्चे के संज्ञानात्मक विकास में उच्चतर स्तर पर कोई प्रमुख भूमिका निभाती है ऐसा नहीं है। परंतु बच्चे में भाषागत सीमाएँ होने के बावजूद भी वे बच्चे सोचते हैं और समस्याओं को हल भी कर पाते हैं। पियाजे का मानना था कि भाषा विचारों को आकार देने में ज्यादा समर्थ होते हैं।

इस चरण में बच्चे विपरीत दिशा में तर्क करने में सक्षम नहीं होते हैं। वे अपने अनुभव से दुनिया के बारे में सीख रहे होते हैं, परंतु जो भी उन्होंनें सीखा है उसमें हेर–फेर करने में सक्षम नहीं हैं। इस अवस्था में बच्चे मानसिक प्रतीकों का इस्तेमाल करते

हैं, जैसे कि बात करने के लिए खिलौनें का टेलीफोन, या चाय पीने के लिए कप का इस्तेमाल, ये नाटक बड़ों के कामों का नकल होते हैं।

पियाजे ने पूर्व संक्रियात्मक अवस्था की दो सीमाएँ बतायी है जो इस प्रकार है-

1. **आत्मकेन्द्रिता (egocentriem)** –इसका तात्पर्य है कि बच्चे मानते हैं कि अन्य लोग भी वहीं चीजें देखते, सुनते एवं महसूस करते हैं जो वे करते हैं। किसी अन्य व्यक्ति के दृष्टिकोण को समझने में बच्चे असमर्थ होते हैं। संज्ञानात्मक विकास के प्रारंभिक अवस्था में छोटे बच्चे में इस तरह की सोच आम है। उदाहरणस्वरूप, अगर बच्चे को उसकी कॉपी दिखाने को बोले तो वह कॉपी को अपनी दिशा में रखेगा न ही आपकी तरफ और बच्चे को यह लगेगा कि जैसे वह कॉपी देख पा रहा है वैसे ही आप भी देखेंगे।

ऐसा इसलिए होता है क्योंकि जब बच्चे पहले पहल संसार को मानसिक रूप से निरूपित करते हैं तो उनकी प्रवृति अपने ही दृष्टिकोण पर ध्यान केन्द्रित करने की होती है।

2. **संरक्षण (conservation) को समझने में असमर्थता** – संरक्षण से तात्पर्य इस विचार से है कि वस्तुओं के कुछ भौतिक गुण, उनके बाहरी रूप बदलने पर भी वैसे ही बने रहते हैं, बदलते नहीं हैं। इस अवस्था के बच्चे संरक्षण के गुण को समझने में असमर्थ होते हैं। उदाहरण स्परूप यदि बच्चे को पानी से भरे एक जैसे लंबे दो गिलास दिखाये जाते है और उसे पूछा जाता है कि क्या दोनों में पानी की मात्रा बराबर है? बच्चे ा जब इस बात से सहमत हो जाता है कि दोनों में बराबर पानी है, तब एक गिलास का पानी चौड़े बर्तन में उडेल दिया जाता है जिससे पानी के आकार का रूप बदल जाता है परंतु उसकी मात्रा नहीं बदलती है। परंतु इस अवस्था के बच्चे सोचते हैं कि मात्रा बदल गई है। वे समझते हैं कि ''अब पानी कम है क्योंकि वह इतना नीचे चला गया है। इसे निम्नांकित चित्र के माध्यम से समझ सकते है''-

चित्र 1.4 पियाजे द्वारा प्रतिपादित संरक्षण का गुण

बच्चे समझते हैं कि इस बर्तन में पानी डालने के बाद पानी की मात्रा कम हो गई।

3. **विपरीत प्रक्रिया (Reversibility)** – यह किसी समस्या के विभिन्न चरणों की क्रमिक श्रृंखला को क्रमबद्ध रूप से कर लेना और फिर मन में पूरी प्रक्रिया को दिशा उलटकर वापिस प्रारंभिक बिंदु पर लौट आने की क्षमता होती है। द्रव्य के संरक्षण (conservation) के मामले में इस उम्र के बच्चे उल्टा सोचकर पानी के वापस अपने मूल बर्तन गिलास में उडेले जाने की कल्पना नहीं कर पाते इसलिए वह यह नहीं समझ 'पाता' की पानी की समान मात्रा है। एक बहुत की सरल उदाहरण के माध्यम से Reversibility की प्रक्रिया को समझ सकते हैं

$7 + 5 = 12$ इस अवस्था के बच्चे
$12 - 5 = ?$ गणित के इस संप्रत्यय को
$12 - 7 = ?$ नहीं समझ पाते।

इस अवस्था के बच्चे गणित के इस संप्रत्यय को नहीं समझ पाते ।

इसी प्रकार **वर्गीकरण** एवं **क्रमांकन** आदि प्रत्यय भी इस अवस्था में पूरी तरह विकसित नहीं होते हैं। लगभग 4 से 7 साल के बीच के बच्चे का चिंतन एवं तर्क क्षमता पहले से अधिक परिपक्व हो जाती है जिसके कारण साधारण मानसिक प्रक्रियाओं के पीछे छिपे नियमों को वह नहीं समझ पाता और वह यह नहीं बता पाता कि ऐसा उसने क्यों किया।

3. मूर्त संक्रियात्मक अवस्था (concreter oprational stage) (7-11 वर्ष)-

यह अवस्था सात वर्ष से ग्यारह वर्ष की आयु तक रहती है अर्थात् मध्य (Middle) विद्यालय की आयु। इस अवस्था में बच्चे क्रियाओं को विकेन्द्रित एवं (decentralise) प्रत्यावर्तन (reversibility) करने में मानसिक रूप से सक्षम हो जाते हैं। अत: वे संरक्षण (conservation) सिद्धांत का प्रयोग कर सकते हैं। अब वे यह समझने में सक्षम होते हैं कि लंबे स्तर मे उँचाई का स्तर ज्यादा होते हुए भी लंबे व चौड़े बर्तन में पानी की समान मात्रा हो सकती है। यह विचारने की योग्यता निम्न प्रकार बढ़ती है (वुलफोल्क, 2008, पृ. 68)।

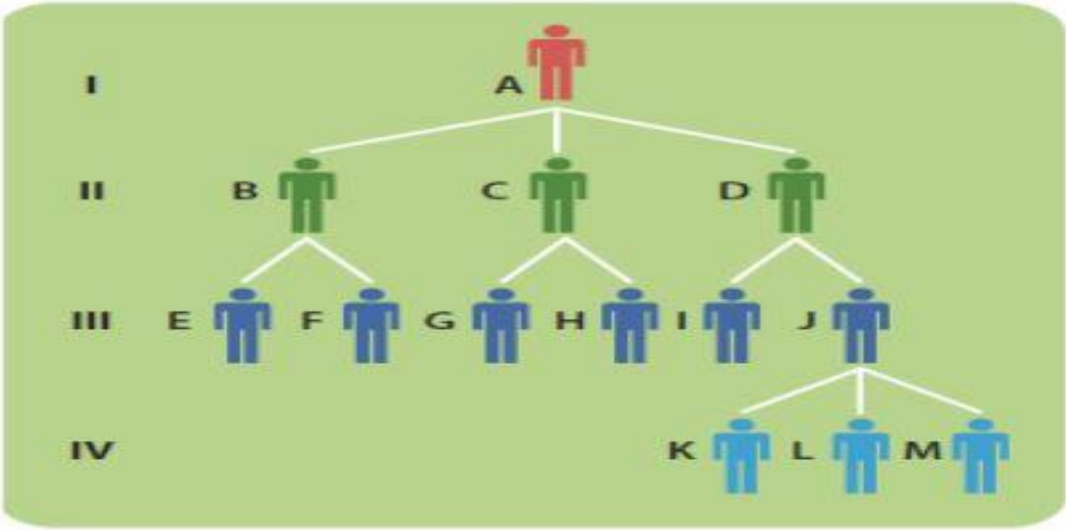

चित्र-1.5 मूर्त संक्रियात्मक अवस्था की महत्वपूर्ण क्षमता : वर्गीकरण

- इस अवस्था में बच्चे वर्गीकरण की क्षमता विकसित कर लेते हैं।

■ बच्चे यह समझ सकते हैं कि यदि हम वस्तुओं को दी गई मात्रा में समान मात्रा जोड़े और घटाएँ तो वहाँ कोई परिवर्तन नहीं होता।

■ वे गुण के आधार पर वस्तुओं का वर्गीकरण करने में सक्षम होते हैं।

■ वे क्रमांकीकरण (seriation) से युक्त तर्क के प्रयोग की क्षमता भी विकसित करते हैं अर्थात् वे $A < B < C$ जैसे क्रम को अनुभव कर सकते है। बच्चे समझ सकते हैं कि B, A से बड़ा हो सकता है पर उसी समय वह C से छोटा होगा।

■ बच्चे प्रतिवर्ती आधार चिंतन की योग्यता विकसित कर लेते हैं अर्थात् वे यह समझने में सक्षम होते हैं कि यदि $4 + 2 = 6$ तो $6 - 2 = 4$ होगा।

इस आयु में बच्चे पूर्व अवस्था की बहुत सीमाएँ पार कर लेते हैं। बच्चे में धीरे-धीरे दूसरों के दृष्टिकोण को समझने की योग्यता विकसित हो जाती है। तर्कपूर्ण चिंतन की ओर गति आरंभ होती है परंतु चिंतन अभी भी भौगोलिक संसार पर आधारित होता है। अर्थात् बच्चे का तर्क अभी भी प्रत्यक्ष संसार से जुड़ा होता है। वह अमूर्त चिंतन नहीं कर सकता। इसलिए इस अवस्था को मूर्त संक्रियात्मक (concrete operational) अवस्था कहते है।

4. औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था (formal operational stage) -

यह अवस्था लगभग 11 वर्ष की आयु में प्रारंभ होती है और प्रौढावस्था तक चलती है। इस अवस्था में बच्चे अमूर्त, वैज्ञानिक ढ़ंग से सोचने की क्षमता विकसित कर लेते हैं। इस अवस्था में जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है बच्चे ा परिचालक चिंतन के योग्य हो जाता है अर्थात् वह धीरे-धीरे अमूर्त चिंतन में सक्षम हो जाता है। उसके विचार केवल मूर्त वस्तुओं से बंधे नहीं रहते अब वह प्रतीकों, अंकों को समझ सकता है व चिंतन करता है। इस अवस्था में वे शाब्दिक परिकल्पनाओं के आधार पर तर्क करते हैं। किसी समस्या का संभावित हल निकालना औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था में संभव हो पाता है। यदि इस अवस्था के बच्चे ों को कुछ वर्ण दिए जाए जैसे- क, च, म, ब, फ, ट और उनसे कहा जाए कि इन वर्णो से जितने शब्द बन सकते है, बनाओ तो इस उम्र के बच्चे इस कार्य को बहुत ही व्यवस्थित एवं तर्कपूर्ण ढ़ंग से करेंगे। पियाजे के अनुसार इस आयु के बच्चे प्रतीकात्मक शब्दों (symbolic words) रूपकों व उपमानों का मतलब समझने लगते हैं। वह अमूर्त प्रत्ययों (abstract concept) का निर्माण करने लगते हैं।

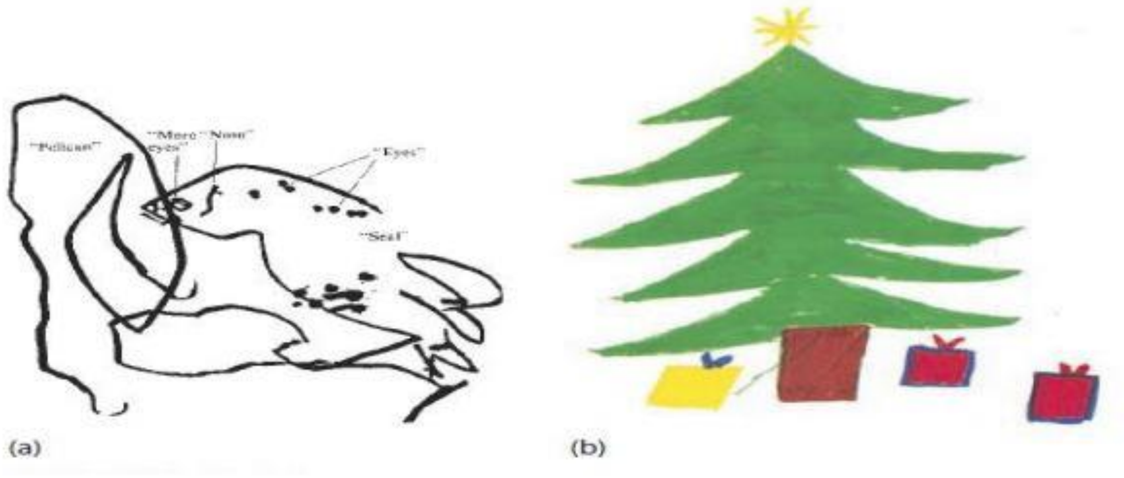

चित्र- 1.6 : बच्चे के चित्रांकन में विकासात्मक परिवर्तन

चित्र (अ) में साढ़े तीन वर्ष के बच्चे के सांकेतिक चित्रण को दर्शाया गया है जो अमूर्त है, वहीं ग्यारह वर्ष की आयु में ज्यादा स्वच्छ एवं वास्तविक चित्रण करते हैं।

यद्यपि पियाजे की दृष्टि में भाषा बच्चे के संज्ञानात्मक विकास में कोई केन्द्रीय भूमिका नहीं निभाती परंतु किशोरावस्था में इसके महत्व को उन्होनें स्वीकार किया है। इस अवस्था में भाषा संबंधी योग्यता तथा संप्रेषणशीलता का विकास अपनी उँचाई को छूने लगता है। सोचने, विचारने, तर्क करने, कल्पना करने तथा निरीक्षण, अवलोकन, परीक्षण प्रयोग आदि के द्वारा उचित निष्कर्ष निकालने की पर्याप्त क्षमता विकसित हो जाती है। स्मरण शक्ति रटने पर आधारित न होकर तर्क एवं समझ पर आधारित होने लगती है। बच्चे कल्पना शक्ति को सृजन या निर्माण कार्य के लिए अच्छी तरह उपयोग में लाने लगते हैं।

समस्या समाधान योग्यता का उचित विकास हो जाता है। फलस्वरूप इस आयु के बच्चे में समस्या का उचित विश्लेषण कर इसके संभावित हल की खोज करने की क्षमता विकसित हो जाती है। प्रयास एवं त्रुटि (trial and error) विधि के स्थान पर बौद्धिक शक्तियों के प्रयोग द्वारा सीखने की आदत विकसित हो जाती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते है, उनकी संज्ञानात्मक विकास की प्रकियाओं में एक गुणात्मक परिवर्तन होता जाता है।

- **पियाजे के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत का शैक्षिक निहितार्थ–**

पियाजे के संज्ञानात्मक विकास का शैक्षिक निहितार्थ यह है कि शिक्षकों को यह समझना चाहिए कि बच्चे कुछ कार्य तब तक नहीं कर सकते जब तक वे मानसिक रूप से परिपक्व न हो जाए। यह सिद्धांत स्पष्ट करता है कि जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते जाते हैं, उनकी मानसिक प्रक्रियाओं में एक गुणात्मक परिवर्तन होता है। सीखने की योग्यता बच्चे के विकास की अवस्था से संबंधित है विभिन्न अवस्थाओं में संज्ञानात्मक विकास एवं विकास के फलस्वरूप ज्ञान और मानसिक योग्यताओं और क्षमताओं में आयु के साथ-साथ होने वाले परिवर्तनों की अमूल्य जानकारी शिक्षकों के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो सकती है। पियाजे का मानना था कि, सभी बच्चे विकास के समान अनुक्रम से गुजरते हैं लेकिन इनकी गति अलग-अलग होती है, अतः शिक्षकों को हर बच्चे के लिए अलग-अलग योजना बनानी चाहिए। पियाजे के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत से शिक्षकों को अध्यापन कार्य के लिए अच्छा निर्देश एवं सुझाव मिलता है।

संज्ञानात्मक विकास और बुद्धि की अवधारणा का ऐतिहासिक संदर्भ तथा समकालीन संदर्भ में बुद्धि की सैद्धांतिक समझ।

संज्ञानात्मक विकास और बुद्धि की अवधारणा

हम अक्सर अपनी बातचीत म. किसी के लिए तेज, होशियार, समझदार, इंटेलिजट, बेवकूफ, मूर्ख जैसे शब्दों का इस्तेमाल करते हैं पर इन शब्दों के अर्थ को लेकर हम शायद ही कभी गंभीर चिंतन करते हैं। किसी बच्चे को हम तेज क्यों कह रहे हैं? किसी को होशियार कहने का क्या अर्थ है? कोई इंटेलिजट या मूर्ख किस प्रकार है? क्या जिसे हम होशियार या इंटेलिजट कहते हैं, वह हर प्रकार के काम म. होशियार है? क्या इन शब्दों के अर्थ समय, जगह और उम्र के आधार पर बदलते रहते हैं? क्या इन शब्दों का संबंध बुद्धि की अवधारणा से है? कैसे?

हम देखते है कि समाज म. बुद्धि की अवधारणा के कई अर्थ हैं, जैसे वह बच्चे बुद्धिमान है जो अन्य की तुलना म. अपने काम को अच्छे ढंग से कर सके जो आनेवाली समस्याओं को उपयुक्त तरीके से सुलझा सके, जिसकी शाब्दिक क्षमता अधिक हो, जिसम. सामाजिक व्यवहार कुशलता हो आदि। बुद्धि के अर्थ को लेकर समाज म. कई तरह की विचारधारा है। किसी के दृष्टिकोण से गांव का वह किसान बहुत बुद्धिमान है जो अपने खेतों म. नवीन एवं उच्च तकनीक अपनाकार अच्छी फसल उगाता है, वहीं किसी और के दृष्टिकोण से उस भाषा और रहन–सहन के आधार पर कम बुद्धिमान माना जाता है। इसी तरह किसी की नज़र म. स्कूल न जाने वाले बच्चे की तुलना म. स्कूल जाने वाले बच्चे को अधिक होशियार माना जाता है।

हर समाज म. अपनी संस्कृति एवं कार्य के प्रकार पर बुद्धि को लेकर कुछ न कुछ धारणाएँ जरूर हैं। जिसके आधार पर बुद्धि को परिभाषित किया जाता है। इन संदर्भो म. बुद्धि के अवधारणा की शुरूआत कैसे हुई और इसकी जरूरत क्यों पड़ी, इसे समझना आवश्यक है ।

बुद्धि की अवधारणा का ऐतिहासिक संदर्भ

बच्चे की बुद्धि और उसके विकास को समझने का प्रयास मनोवैज्ञानिक सदियों से करते आ रहे हैं। सभी संस्कृतियाँ इस बात को स्वीकार करती हैं कि बुद्धि के संदर्भ म. व्यक्तिगत अन्तर होते हैं। इनको ध्यान म. रखते हुए उन्नीसवीं शताब्दी के अंत से बुद्धि परीक्षणों के द्वारा बुद्धि को मापने की शुरूआत हुई। सबसे पहले बुद्धि परीक्षण पर कार्य यूरोप और अमेरिका म. शुरू हुआ क्योंकि वहाँ पर सबके लिए शिक्षा (सार्वभौमिक शिक्षा) की शुरूआत हो गई थी जिसका अर्थ था वहां के हर बच्चे को अनिवार्य रूप से किसी निश्चित कक्षा तक स्कूल म. शिक्षा देना। इसके कारण वे बच्चे भी स्कूल म. प्रवेश लेने लगे जो पहले कभी स्कूल नहीं गए थे और बच्चे की कक्षागत विविधता बहुत बढ़ने लगी। एक कक्षा म. ही बच्चे के सीखने की गति म. शिक्षकों द्वारा भारी अंतर महसूस

किया जाने लगा। इस कारण, उन्ह. ऐसे परीक्षणों की आवश्यकता हुई जिससे बच्चेको उनकी सीखने की क्षमता के आधार पर अलग-अलग किया जा सके और वे उनपर विशेष तरीके से ध्यान दे सक। इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ परीक्षण तैयार किये गये जिनम. फ्रांस के मनोवैज्ञानिक ऐल्फर्ड बिने और उसके सहयोगी साइमन द्वारा 1905 म. विकसित पहला बुद्धि परीक्षण महत्वपूर्ण है। यह एक प्रकार का वैयक्तिक बुद्धि परीक्षण (Individual Intelligence Test) था। इसम. कुछ प्रश्नों को पूछा गया जिसे अगले पृष्ठ पर दिया गया है। अपने परीक्षण म. उन्होंने यह पाया कि कम उम्र के तेज़ बच्चेके उत्तर बड़े बच्चेजैसे थे। जिसके आधार पर उन्होंने बच्चे की मानसिक उम्र को जांचना शुरू किया। कई सालों तक इस तरह के परीक्षण बहत लोकप्रिय रहे। लेकिन, धीरे.धीरे यह प्रतीत होने लगा कि इन परीक्षणों म. हमेशा एक विशेष परिवेश के बच्चे बेहतर करते थे और एक खास परिवेश के बच्चे खराब प्रदर्शन करते थे। यानि जो बच्चे भिन्न संस्कृति और आर्थिक परिवेश से आए थे वे इन परीक्षणों म. कम अच्छा कर पाते थे। इस प्रकार से इन परीक्षणों की शुरूआत जिस उद्देश्य के लिए की गई थी, उस पर ही प्रश्न चिन्ह लग गया। इन परीक्षणों का उपयोग यह सिद्ध करने म. किया जाने लगा कि कुछ विशेष समुदाय व वर्ग से आए बच्चे जन्म से ही कम बुद्धि वाले होते हैं। इस धारणा ने न सिर्फ सामाजिक विभेद को बढ़ाया बल्कि इसका राजनैतिक फायदा भी उठाया गया। उदाहरण के तौर पर, कई देशों में गोरे लोगों (यूरोपवासी) के द्वारा काले लोगों पर शासन करने को यह तर्क देकर उचित ठहराया जाता रहा कि काले लोगों के पास कम बुद्धि होती है अत: वे अपना शासन स्वयं नहीं चला सकते। इसलिए बुद्धिमान गोरे लोगों का उनपर शासन करना सही है। दक्षिण अफ्रीका में गोरे लोगों के द्वारा अपनायी गयी रंगभेद नीति और इसके विरोध में आंदोलन करनेवाले महान नेता नेल्सन मंडेला के विषय में सभी लोग जानते हैं। इस नीति के अंतर्गत उस देश में गोरे लोगों द्वारा काले लोगों को कई सारे आधिकारों से दूर रखा जाता था। इसके विषय में विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि यह सिर्फ राजनैतिक आंदोलन नहीं था बल्कि मनोसामाजिक चेतना की लड़ाई भी थी।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में भी अप्रत्यक्ष रूप से बौद्धिक क्षमता को मापने की परम्परा चली आ रही है। इसके अनुसार मापन एवं कार्य क्षमता के आधार पर उनको कार्य सौंपा जाता था। हमारे समाज में भी इसी प्रकार से बुद्धि के आधार पर कई स्तरों पर विभाजन मिलता है। ऐतिहासिक रूप से ऐसी धारणा बना दी गई कि कुछ जातियों व वर्गों के पास अधिक बुद्धि होती है, वहीं कुछ जातियों के पास बहुत कम बद्धि होती है। इसके कारण हमारे समाज में किसी जाति द्वारा अपने को श्रेष्ठ बताकर अन्य जातियों पर अपना मत थोपा जाता रहा तथा जातियों के बीच ऊँच-नीच का विभेदकारी सामाजिक अंतर बना रहा।

आगे सारणी में बिने के बुद्धि परीक्षण सूची से अलग-अलग आयु वर्ग के लिए कुछ परीक्षण प्रश्नों को दिया जा रहा है।

बिने के बुद्धि-परीक्षा प्रश्न	
3 वर्ष की आयु के लिए 1. तुम्हारी नाक, आंख ओर मुंह कहां है? 2. 2 अंकों से बनी संख्या को दोहराना। 3. 6 शब्दों से बने वाक्य को दोहराना। 4. अपना अंतिम नाम बताइए।	**8 वर्ष की आयु के लिए** 1. 20 से 0 तक पीछे की ओर गिनने को कहना। 2. दिन और तारीखों के नाम पूछना। 3. 5 अंकों की बनी संख्या को दोहराना। 4. 9 सिक्कों को गिनवाना। 5. 4 रंगों के नाम बताना। 6. किसी गद्य-खण्ड को पढ़वाना और दो बातों को याद रखने को कहना।
4 वर्ष की आयु के लिए 1. तुम लड़की हो या लड़का। 2. तीन अंकों की संख्याओं को दोहराओ। 3. चाभी, चाकू और सिक्का दिखाकर पूछना है कि ये क्या हैं?	**11 वर्ष की आयु के लिए** 1. निरर्थक कथनो की आलोचना करवाना। 2. किसी वाक्य में 3 शब्द प्रयुक्त करवाना। 3. 3 मिनट में 60 शब्द कहलवाना। 4. अमूर्त वस्तुओं की परिभाषा करवाना। 5. किसी वाक्य में बेतरतीब रखे शब्दों को तरतीब में रखवाना।
5 वर्ष की आयु के लिए 1. विभिन्न भार के दो बक्सों की तुलना करना। 2. वर्ग को दिखाकर उसे चित्र बनवाना। 3. धैर्य से खेल-खेलने को कहना। 4. चार सिक्कों को गिनवाना। 5. 11 शब्द-खण्डों वाले वाक्य को दोहराना।	**15 वर्ष की आयु के लिए** 1. 7 अंकों को दोहराना। 2. एक मिनट में दिए हुए शब्द से 3 प्रकार की लय निकलवाना। 3. 26 शब्दों से बने वाक्य को दोहराना।

बिने-साइमन परीक्षण में भाषायी ज्ञान, गणितीय योग्यता, प्रत्यक्षीकरण, विभेदीकरण, स्मृति, तुलनात्मक योग्यता, वाचन योग्यता, आलोचनात्मक योग्यता एवं अमूर्त संकल्पनाओं को परिभाषित करना आदि योग्यताओं का मापन करने का प्रयास किया गया है। यह परीक्षण विशेष वर्ग के लिए अधिक उपयोगी था । बिने तथा साइमन के परीक्षण में बुद्धि को मानसिक आयु के रूप में मापकर अभिव्यक्त किया गया। परन्तु टरमन ने जब इसका संशोधन किया तो उससे बुद्धिलब्धि (IQ) के सम्प्रत्यय का जन्म हुआ और बुद्धि को मापने में मानसिक आयु की जगह बुद्धिलब्धि का प्रयोग होने लगा।

बुद्धिलब्धि (IQ) मानसिक आयु (MA) तथा वास्तविक आयु (Chronological age, C. A.)का ऐसा अनुपात है जिसको 100 से गुणा कर प्राप्त किया जाता है। इन परीक्षणों में बच्चे के प्राप्तांकों की गणना विभिन्न आयु समूहों के बच्चे के औसत प्रदर्शन के आधार पर की जाती है।

$$\text{I. Q.} = \frac{\text{Mental Age (MA)}}{\text{Chronological Age (CA)}} \times 100$$

आगे चलकर बुद्धिलब्धि की भी आलोचना होने लगी जिससे बुद्धि को लेकर कई अन्य सवाल खड़े हुए जैसे- क्या बुद्धि को प्रभावित करनेवाले कारक उम्र के साथ बदलते रहते हैं? किस सीमा तक एक ही उम्र के बच्चे की बुद्धि में अन्तर हो सकता है? किस तरह के कारक इस अन्तर को स्पष्ट करते हैं? क्या आनुवांशिकता व वातावरण का बुद्धि पर प्रभाव पड़ता है? क्या बुद्धि परीक्षण के द्वारा वास्तविक तौर पर बुद्धि को मापना संभव है? इस संदर्भ में कई सिद्धांतों का विकास हुआ जिनमें से कुछ प्रमुख सिद्धांतों के बारे में यहां आगे चर्चा की जा रही है।

समकालीन संदर्भ में बुद्धि की सैद्धांतिक समझ

ऐतिहासिक संदर्भ में बुद्धि की जो संकल्पनाएं थी, उससे एक आशय तो निकाला ही जा सकता है कि उन्होंने बुद्धि को सिर्फ कुछ मान्यताओं के आधार पर अंकों में मापने पर जोर दिया। साथ ही बुद्धि को मापने के आधार के रूप में प्रयुक्त मान्यताएं भी पूर्वाग्रहों से ग्रस्त थीं। ऐसा नहीं है कि वे मान्यताएं पूर्णतः समाप्त हो गई। बल्कि, आज भी हम जाने-अनजाने उन मान्यताओं का प्रयोग करते हैं और आज के शिक्षकों में भी उन मान्यताओं की छाप मिलती है। आपने शिक्षकों को यह कहते सुना होगा कि *"मेरी कक्षा में सिर्फ दो-चार बच्चे ही तेज हैं बाकि सब को पढ़ाने का कोई फायदा नहीं है क्योंकि वे कभी नहीं सीख सकते''* आदि । यदि उनके इन कथनों का विश्लेषण करें तो हम पाएंगे कि वे उसी पारंपरिक स्वरूप में बच्चे की बुद्धि का मूल्यांकन कर रहे हैं जिसमें यह मान्यता प्रबल है कि जो पढ़ने में तेज है वही सबसे बुद्धिमान है। वे बुद्धि को बहुत संकुचित स्वरूप में देख रहे हैं जिसमें बच्चे की अन्य क्षमताओं को महत्व देने का कोई स्थान नहीं है। वे यह जानते हैं कि नौ साल की कमला जो विद्यालय में संख्या नहीं सीख पा रही है लेकिन बिना गलती किए घर का छोटा-मोटा सामान खरीदकर वही लाती है। रमेश जो विद्यालय में भाषा की कक्षा में कुछ बोल नहीं पाता है लेकिन अपने सब्जी की दुकान पर आनेवाले ग्राहकों से बात करने में उसे कोई झिझक नहीं होती है। नफीसा को विद्यालय में नि:शक्त बालिका के तौर पर देखा जाता है क्योंकि वह देख नहीं सकती पर संगीत के क्षेत्र में वह अन्य बच्चे से कहीं अधिक दक्ष है।

हम यह भी पाते हैं कि सीखने की क्षमता को ही बुद्धि मान लिया जाता है। सीखने की क्षमता का आकलन सीखने की गति, व्यवहारिक उपयोग या अधिक समय तक याद रखने की योग्यता आदि के आधार पर किया जाता है। यदि किसी बच्चे की सीखने की गति तुलनात्मक रूप से दूसरे बच्चे से अधिक है तो उसकी बुद्धि को अधिक मान लिया जाता है। कहने का आशय यह है कि जिसमें जितनी अधिक सीखने की क्षमताएं होती हैं; उसकी बुद्धि उतनी ही अधिक मानी जाती है। बुद्धि के संदर्भ में यह बात पूर्णतः संतुष्ट नहीं कर पाती है। आप अपनी कक्षाओं में ऐसे बच्चे ोंको भी पाएंगे जो काफी प्रतिभावान होते हुए भी परीक्षाओं में असफल हो जाते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि वे मूर्ख हैं बल्कि हमारी परीक्षा प्रणाली में वह संभावना नहीं है कि उनकी प्रतिभाओं को बुद्धि के तौर पर आंक सके।ऐसे कई उदाहरण है कि परीक्षा में असफल रहने वाले बच्चे अच्छे खिलाड़ी, कुशल अभिनयकर्ता, अच्छे नर्तक, सृजनशील लेखक, कुशल व्यापारी, आदि हैं।

अतः सवाल उठता है कि क्या पढ़ाई में अच्छा होना ही बुद्धि की कसौटी है या फिर इसके अन्य आयामों को भी समान महत्व दिया जाना जरूरी है। पहले, बुद्धि का मतलब सिर्फ इतना ही था कि बच्चे ा पढाई में कितना तेज है या वो किसी समस्या को कैसे सुलझाता है, किसी विषय का कितना जानकार है तथा किसी निर्णय पर कितनी जल्दी और कैसे पहुँचता है। लेकिन पियाजे के संज्ञानात्मक सिद्धांत के बाद बुद्धि की इस अवधारणा में परिवर्तन आया। पियाजे के अनुसार जो व्यवहार अपने वातावरण में समायोजन करने में मदद करे वही बुद्धिमतापूर्ण व्यवहार कहा जाता है। अपने सिद्धांत में पियाजे ने बुद्धि को मानसिक प्रक्रियाओं के विकास का ही एक स्वरूप माना है।

यदि हम बुद्धि की अवधारणा को लेकर विशिष्ट सिद्धान्तों की बात करें तो उसमें गिलफर्ड और गार्डनर के सिद्धान्त प्रमुख हैं। यहां हम केवल गार्डनर के सिद्धांत की चर्चा करेंगे जो सबसे नवीनतम है। गिलफर्ड के सिद्धांत का भी अध्ययन व्यापक समझ के लिए आवश्यक है।

गार्डनर का बहुबुद्धि सिद्धांत (Gardner's theory of Multiple Intilligence)

इस सिद्धांत का विकास गार्डनर द्वारा 1983 में किया गया। इस सिद्धांत में गार्डनर ने यह स्पष्ट किया कि बुद्धि का स्वरूप एककारकीय ना होकर बहुकारकीय होता है। गार्डनर ने मूलतः सात तरह की बुद्धि का वर्णन किया। 1998 में उन्होंने इसमें आठवाँ प्रकार तथा 2000 में उन्होंने नौवा प्रकार भी जोड़ा। इस तरह से गार्डनर के अनुसार अभी बुद्धि के नौ प्रकार है जो निम्नांकित हैं :-

	बहु-बुद्धि के प्रकार	बुद्धि से जुड़ी व्यक्तिगत विशेषता
1	भाषायी बुद्धि Linguistic Intelligence	भाषायी बुद्धि में वाक्यों तथा शब्दों के बोध क्षमता, शब्दावली, शब्दों के क्रमों के बीच के संबंधों को पहचानने की क्षमता आदि सम्मिलित होती है। लेखक, साहित्यकार, कवि आदि में यह बुद्धि उच्च स्तरीय पाई जाती है।
2	तार्किक-गणितीय बुद्धि Logical Mathematical Intelligence	इस बुद्धि में तर्क करने की क्षमता, गणितीय समस्याओं का समाधान करने की क्षमता, अंकों के क्रम (Sequence) के पीछे छिपे संबंध को पहचानने की क्षमता, सादृश्यता क्षमता (परिस्थितियों एंव समस्याओं में समानता देख पाना) आदि सम्मिलित होते हैं। किसी के व्यवहार में आये अकस्मात परिवर्तन को तर्क द्वारा समझना, गणितीय समस्याओं का समाधान आदि।
3	स्थानिक बुद्धि (स्थान संबंधी) Spatial Intelligence	इसमें स्थानिक चित्र को मानसिक रूप से परिवर्तन करने की क्षमता तथा स्थानिक कल्पना करने की क्षमता आदि सम्मिलित होती है। जैसे-देखे गये स्थान को मानचित्र द्वारा प्रस्तुत करना।
4	शारीरिक-गतिक बुद्धि Body Kinesthetic Intelligence	इस तरह की बुद्धि में अपनी शारीरिक गति पर नियंत्रण रखने की क्षमता तथा वस्तुओं को सावधानीपूर्वक एवं प्रवीण ढंग से घुमाने तथा उपयोग करने की क्षमता सम्मिलित होती है। इस तरह की बुद्धि नर्तकों तथा खिलाड़ियों में अधिक होती है, जिन्हें अपने शरीर की गति पर पर्याप्त नियंत्रण रखना होता है। उदा.- क्रिकेट खिलाड़ी, टेनिस खिलाड़ी, न्यूरोसर्जन तथा शिल्पकार आदि।
5	संगीतिक बुद्धि Musical Intelligence	इस बुद्धि में तारत्व (pitch) तथा लय (Rhythm) को सही-सही ढंग से समझने की क्षमता सम्मिलित होती है। इसमें संगीत सम्बन्धी सामर्थ्य एवं निपुणता विकसित करने की क्षमता भी सम्मिलित होती है। उदा. संगीतकार, गीतकार आदि ।
6	अन्त:वैयक्तिक-बुद्धि Intra personal Intelligence	इस तरह की बुद्धि में अपने भावों एवं संवेगो को समझने एवं नियंत्रित करने की क्षमता, उनमें विभेद करने की क्षमता तथा स्वयं के व्यवहार को निर्देशित करने में उन सूचनाओं का उपयोग करने की क्षमता आदि सम्मिलित होते है।जैसे-परिस्थितिनुसार अपने भावों एंव संवेगों को नियन्त्रित कर उपयुक्त व्यवहार करना।
7	व्यक्तिगत-अन्य बुद्धि Personal – other	इस तरह की बुद्धि में दूसरे व्यक्तिओं की प्रेरणाओं, इच्छाओं एवं आवश्यकताओं को समझने की क्षमता तथा उनकी

	Intelligence	मनोदशाओं (Moods) एवं चित्रप्रकृति को समझ करके किसी नई परिस्थिति में किस तरह से व्यवहार करेगा, के बारे में पूर्वकथन करने की क्षमता आदि होती है। उदा.– शिक्षक यह जान सकता है कि कौनसा बच्चे ा किस क्षेत्र में सफल हो सकेगा।
8	प्रकृतिवादी बुद्धि Naturalist Intelligence	इसे 1998 में जोड़ा है। इससे तात्पर्य बच्चे में प्रकृति (Nature) में मौजूद पैटर्न तथा समिति को सही–सही पहचान करने की क्षमता से है। इस ढंग की बुद्धि किसानों, जैव–विज्ञानी तथा वनस्पति वैज्ञानिक आदि में अधिक होती है।
9	अस्तित्ववादी बुद्धि Existential Intelligence	इसे 2000 के संशोधन में जोड़ा है। इससे तात्पर्य मानव संसार में छिपे रहस्यों को जिन्दगी, मौत तथा मानव अनुभूति की वास्तविकता के बारे में उपयुक्त प्रश्न पूछकर जानने की क्षमता से है। इस ढंग की बुद्धि दार्शनिक चिंतकों में अधिक देखने को मिलती है।

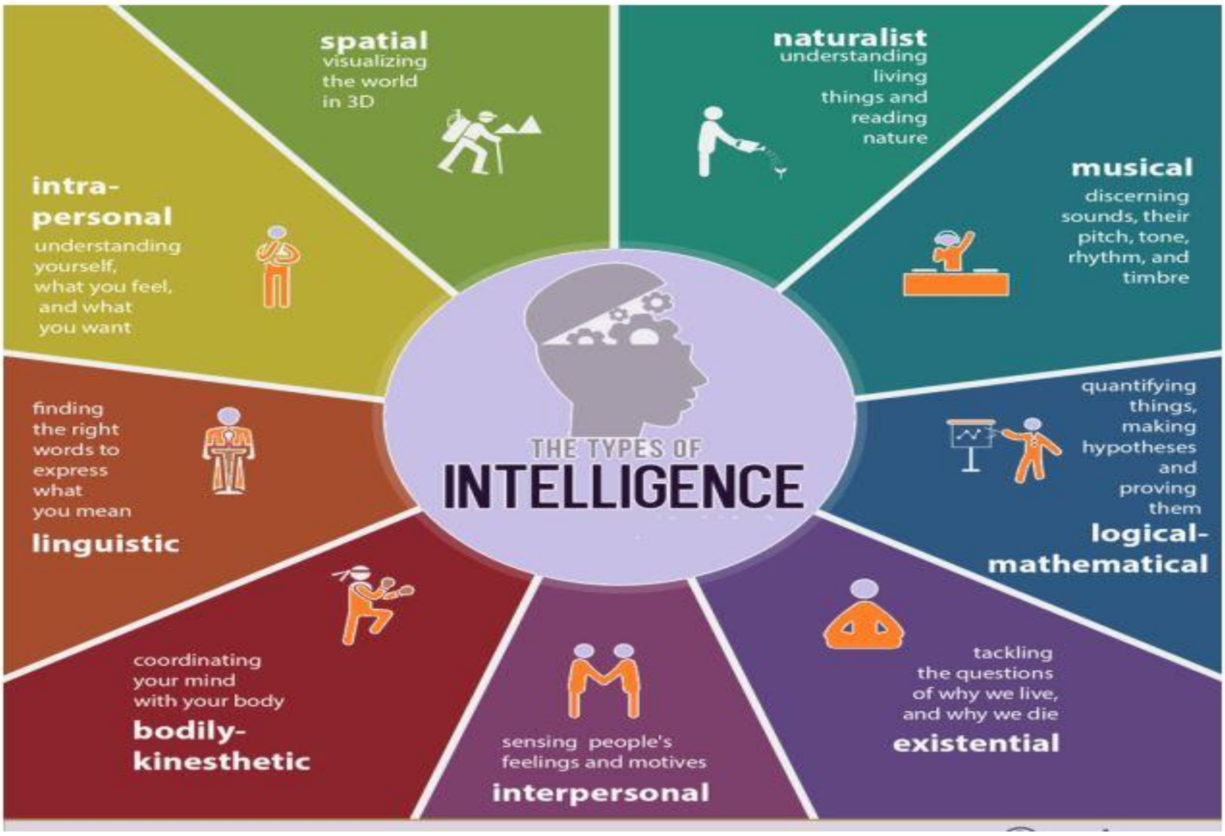

चित्र– 1.7: गार्डनर का बहुबुद्धि सिद्धांत

गार्डनर ने यह स्पष्ट किया है कि प्रत्येक सामान्य बच्चे में उपर्युक्त नौ तरह की बुद्धि होती है कुछ विशेष कारणों जैसे आनुवंशिकता या प्रशिक्षण के कारण किसी बच्चे में कोई विकसित हो जाती है और कोई कम या सामान्य। ये सभी नौ तरह की बुद्धि एक दूसरे

के साथ अंत: क्रिया करते है फिर भी उनका अपना स्वतन्त्र क्षेत्र है। इसके आधार पर यह समझा जा सकता है कि, क्यों किसी एक क्षेत्र में कोई बच्चा बहुत तेज हो जाता है पर किसी अन्य क्षेत्र में वह सामान्य रहता है या पिछड़ जाता है। बहु-बुद्धि से सम्बन्धित विचारों की आलोचना भी कई मनोवैज्ञानिकों द्वारा की गई है पर यह हमें बच्चे के सर्वांगीण विकास के लिए व्यापक क्षेत्र प्रस्तुत करता है तथा आज की शिक्षा पद्धति में सतत एवं व्यापक मूल्यांकन के स्वरूप को समझने में विशेष मदद करता है।

बच्चे में संप्रत्यय विकास

एक बच्चा पहली बार कौए को देखता है। वह देखता है कि कौए का रंग काला है, उसके दो पंख हैं, दो आँखे हैं, एक चोंच है और वह उड़ सकता है। वह बच्चा अपने परिवार के लोगों को उसे कौआ कहते बार-बार सुनता है तो वह भी उस पक्षी के समान विशेषता वाले पक्षी को कौआ कहने लगता है। इस तरह, बच्चा कौआ के संप्रत्यय को सीख जाता है और उसके मस्तिष्क में कौए से सम्बन्धित एक विचार, प्रतिमा या प्रतिमान (Pattern) का निर्माण हो जाता है। इसी विचार, प्रतिमा या प्रतिमान को संप्रत्यय (Concept) कहते हैं। धीरे-धीरे बच्चा बिल्ली, मेज, कुर्सी, वृक्ष आदि सैंकड़ों संप्रत्ययों का निर्माण कर लेता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वस्तुओं के सामान्य गुणों के आधार पर बनने वाले मानसिक प्रारूप को संप्रत्यय कहते हैं।

संप्रत्यय वास्तव में एक चयनात्मक तंत्र है, जिसमें बच्चे उपस्थित उत्तेजना तथा पूर्व अनुभव के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। ऊपर के उदाहरण पर यदि ध्यान दें तो यह बात स्पष्ट हो जाएगी। बच्चे में कौआ से सम्बन्धित पूर्व अनुभव पहले से है। जब वह किसी स्थान पर दूसरा कौआ देखता है तो वह इसका सम्बन्ध अपने पूर्व अनुभव के साथ जोड़ देता है और कहता है कि यह कौआ है। यदि वह मैना को देखता है तो अपने पूर्व अनुभव के साथ इसका सम्बन्ध नहीं जोड़ पाता है अर्थात वह समझने लगता है कि यह कौआ नहीं है। इससे हम समझते हैं कि बच्चे में संप्रत्ययों के आधार पर उनके पूर्व अनुभव, पूर्व संवेदनायें और पूर्व प्रत्यक्षीकरण होते हैं।

बच्चे में संप्रत्यय विकास के संदर्भ में माना जाता है कि पहले इनमें मूर्त (Concrete) संप्रत्यय जैसे माता, पिता आदि विकसित होते हैं और बाद में अमूर्त संप्रत्यय (Abstract Concept) जैसे खुशी (Happiness), दु:ख (Grief) आदि विकसित होते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि बच्चे में संप्रत्यय विकास एवं मूर्त से अमूर्त (Concrete to Abstract) सरल से जटिल (Simple toComplex) की ओर होता है। उनमें पहले एक अस्पष्ट (Vague) संप्रत्यय विकसित होता है। बाद में जब उनके संज्ञानात्मक विकास की अवस्था बढ़ती है तो वह एक स्पष्ट एवं विशिष्ट संप्रत्यय विकसित कर लेते हैं। साथ ही, यह भी कहा जा सकता कि बच्चे में संप्रत्यय श्रेणीबद्ध होते हैं।

जैसे-जैसे बच्चे की उम्र बढ़ती है, वे बहुत सारे जटिल संप्रत्ययों को सीख लेते हैं और उन्हें आपस में भिन्न एवं स्पष्ट रखने के लिए एक श्रेणी में सुव्यस्थित कर लेते हैं। लेकिन, यह भी समझना जरूरी है कि हर बच्चे के सम्प्रत्यय विकास और उसपर आधारित चिंतन में आधारभूत समानताओं के साथ ही कई विविधताएं भी हो सकती हैं। तभी तो किसी एक चीज के बारे में ही यदि अलग-अलग बच्चे से पूछे तो हो सकता है कि वे अलग-अलग जवाब दें।

उदाहरण के तौर पर, यदि बच्चे को कुछ फलों और सब्जियों को देकर उन्हें वर्गीकृत करने को कहें तो हो सकता है कि सामान्यत: वे उन्हें फल और सब्जी की दो कोटियों में वर्गीकृत कर दें। पर, ऐसा भी हो सकता है कि वे उस कोटि से आगे बढ़ते हुए कुछ उपकोटियों में भी उन्हें दुबारा वर्गीकृत करें। यह भी हो सकता है कि बच्चे वर्गीकरण की कोई दूसरी कसौटी अपनाएं।

संप्रत्यय विकास से सम्बंधित मानसिक प्रक्रियाएँ

सम्प्रत्यय निर्माण करने में बच्चे को विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है, जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है।

निरीक्षण (Observation) :- बच्चे अवलोकन के माध्यम से विभिन्न सम्प्रत्ययों या मानसिक प्रतिमाओं का निर्माण करता है। उदाहरणार्थ, एक जन्मजात शिशु कई चेहरों को देखता है, आवाजें सुनता है, कई तरह के स्वाद से परिचित होता है। उसके आधार पर सम्प्रत्यय बनाता है। उसी तरह, विद्यालय में बच्चे को विभिन्न प्रकार के शिक्षण उपयोगी वस्तुओं या प्रयोगों को दिखाकर उनमें सम्प्रत्यय निर्माण किया जा सकता है। जैसे-कलम, पेंसिल, कापी, आदि।

तुलना (Comparison) :- अवलोकन के माध्यम से बच्चे तरह तरह की चीजों से परिचित होने के साथ-साथ उनमें तुलना करना भी सीखते हैं। जैसे- बच्चे अपने कपड़ों में तुलना करते हैं, कौन सा खिलौना लेना है या किस गिलास में पानी पीना है, इन सब के दौरान वे तुलना करते रहते हैं। तुलना करने की कई कसौटियाँ हो सकती हैं जैसे-आकार, रंग, बनावट, उपयोगिता, आदि। उसी तरह कलम, पेंसिल, चॉक में तुलना करना।

पृथक्करण (Abstraction) :- वुडवर्थ (Woodworth, 1938) के अनुसार प्रत्यय रचना का आधार पृथक्करण (Abstraction) है। उनके अनुसार भिन्न-भिन्न वस्तुओं में समान तत्वों को अलग कर लेना ही प्रत्यय रचना है। बच्चे समान तत्वों वाली वस्तुओं को अन्य वस्तुओं से अलग करना सीख लेते हैं। उनका यही सीखना प्रत्यय रचना कहलाता है। उदाहरण के तौर पर, यदि हम बच्चे को भिन्न भिन्न रंग के कलम और किताबें दे तो वे अलग-अलग रंग होने के वावजूद सभी कलमों को एक कोटि में और किताबों को

दूसरी कोटि में रखेंगे। ऐसा इसलिए क्योंकि उन्होंने उनमें से वैसे गुणों को पृथक करके उन्हें वर्गीकरण की कसौटी बना ली, जो प्रमुख हैं।

सामान्यीकरण (Generalisation) :- समान गुणों का संग्रह करने के कारण बच्चे के लिए काले, लाल, सफेद आदि रंगों की कलम में कोई अन्तर नहीं रह जाता है। उसी तरह, उन्हें किसी भी रंग, आकार, स्वरूप की कॉपी दी जाए, वे उसे कॉपी ही कहेंगे। वैसे ही, जब कोई बच्चा देखता है कि एक खास तरह के पक्षी को लोग तोता कहते हैं। तो वह इस प्रकार के पक्षी के समरूप तत्वों या समान विशेषताओं को समझ लेता है और बाद में उन विशेषताओं वाले पक्षी को तोता कहने लगता है। अतः उनका सम्प्रत्यय स्पष्ट रूप धारण कर लेता है।

सक्रिय खोज सिद्धान्त (Active – Search Theory) के अनुसार सामान्यीकरण (Generalisation) को प्रत्यय विकास का आधार माना जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार प्रत्यय के विकास में बच्चे का सक्रिय सहयोग रहता है। सक्रिय खोज सिद्धान्त के अनुसार पहले ब्च्चे `एक परिकल्पना का निर्माण करता है, फिर अपने अनुभव के आधार पर उसकी जाँच करता है और आवश्यकता अनुसार उसमें परिवर्तन लाता है, जिससे एक खास प्रत्यय का निर्माण होता है।

परिभाषा निर्माण (Definition Formation) :- बच्चे उपर्युक्त चार स्तरों के माध्यम से सम्प्रत्यय का निर्माण करते हैं। उन सब के आधार पर, उनमें विभिन्न वस्तुओं के बारे में वैसी परिभाषाएं अर्थात उनकी विशेषताओं का विवरण भी देने की क्षमता विकसित हो जाती है। उदाहरण के तौर पर, जैसे ही हम खाना कहते हैं जो वे उससे सम्बंधित बुनियादी परिभाषा को तुरन्त गढ़ लेते हैं। अब तक हमने यह जान लिया है कि संप्रत्यय निर्माण में कौन-कौन सी मानसिक प्रक्रियाएँ होती हैं। साथ ही यह समझा कि बच्चे में संप्रत्यय विकास के लिए यह आवश्यक है कि उसे अपनी पुरानी अनुभूतियों (Old Experience) एवं नई अनुभूतियों (New Experience) के बीच संबंध स्थापित करने की पर्याप्त क्षमता हो। जब बच्चे को यह पता है कि नई वस्तुओं में बहुत सारी अनुभूतियाँ वैसी हैं जो उसके विगत अनुभवों (Past Experience) के अनुरूप हैं, तो उससे संप्रत्यय का विकास उसमें तेजी से होता है। इस तरह की व्याख्या को हमने पियाजे द्वारा प्रतिपादित आत्मसातीकरण एवं समायोजन की अवधारणा में भी समझा है।

संप्रत्यय विकास से सम्बंधित सैद्धांतिक आधार : ब्रुनर का सम्प्रत्यय मॉडल

जे0 एस0 ब्रुनर (J. S. Bruner, 1964) ने संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन किया। इनका मानना है कि बच्चे में अनुभूतियों की मदद से संप्रत्ययों का विकास होता है। उन्होंने मूलतः दो प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने में रूचि दिखाई। पहला यह कि बच्चे किस ढंग से

अपनी अनुभूतियों (Experience) को मानसिक रूप से बताते हैं और दूसरा यह कि शैशवावस्था व बाल्यावस्था में बच्चे का मानसिक चिंतन कैसे होता है?

उक्त दोनों प्रश्नों का उत्तर ब्रुनर अपने सिद्धान्त में देने की कोशिश की है। ब्रुनर के अनुसार शिशु अनुभूतियों को मानसिक रूप से तीन तरीकों द्वारा बताता है

1. सक्रियता (Enactive),

2. दृश्य प्रतिमा (Iconic)

3. सांकेतिक (Symbolic)

सक्रियता विधि (Enactive Mode) :– सक्रियता एक ऐसा तरीका है जिसमें बच्चे अपनी अनुभूतियों को क्रिया द्वारा व्यक्त करते हैं। जैसे दूध की बोतल देखकर शिशु द्वारा मुँह चलाना, हाथ पैर फेंकना. एक सक्रियता विधि का उदाहरण है जिसके द्वारा वह दूध पीने की इच्छा की अभिव्यक्ति करता है।

दृश्य प्रतिमा विधि (Iconic Mode) :– इस विधि में बच्चा अपने मन में कुछ दृश्य प्रतिमायें (Visual Images) बनाकर अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करता है।

सांकेतिक विधि (Symbolic Mode) :– इस विधि में बच्चे ा संकेत के द्वारा अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करता है। ब्रुनर (1966) ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया है कि इन तीनों (सक्रियता, दृश्य प्रतिमा तथा सांकेतिक) विधियों के प्रत्यय (Concept) का विकास एक क्रम में होता है। जन्म से करीब 18 महीनों तक सक्रियता विधि की प्रधानता होती है। 1 $\frac{1}{2}$ वर्ष या 2 वर्ष की उम्र में दृश्य प्रतिमा विधि की प्रधानता होती है और करीब 7 वर्ष की आयु से सांकेतिक विधि की प्रधानता होती है। ब्रुनर के सिद्धान्त के उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि ब्रुनर भी पियाजे के समान ही संज्ञानात्मक विकास को एक क्रमिक प्रक्रिया माना है तथा बच्चे के चिंतन में संकेत तथा प्रतिमा को महत्वपूर्ण माना है। संप्रत्यय प्राप्ति एक अनुदेशात्मक रणनीति है जिसे ब्रुनर तथा उनके साथियों के द्वारा किए गए शोध पर प्रयोग करके किसी संप्रत्यय में शिक्षक बच्चे के पूर्व अनुभवों का प्रयोग करके किसी संप्रत्यय की रचना करने की कोशिश करते हैं। इसमें पहले बच्चे को कुछ चित्र दिखाए जाते हैं या शब्द दिए जाते हैं। बच्चे से उन चित्रों में समानतायें ढूंढ़कर दो श्रेणियों में बाँटने के लिए कहा जाता है। एक जिनमें संप्रत्यय की विशेषताएँ है और दूसरी जिनमें संप्रत्यय की विशेषताएँ नहीं है। फिर इस परिकल्पना का अन्य उदाहरणों द्वारा परीक्षण किया जाता है।

कार्य–कारण की समझ का विकास

सम्प्रत्यय निर्माण के साथ ही बच्चे में वैज्ञानिक चेतना को बढ़ाने में कार्य–कारण की समझ का होना जरूरी है। पियाजे के अनुसार हर बच्चा छोटा वैज्ञानिक होता है। वो वस्तुओं और घटनाओं पर क्रिया करके अपनी अवधारणाओं का निर्माण करता रहता है और इसी से अपने आस–पास की दुनिया की समझ बनाते हैं। बस फर्क इतना होता है कि छोटा बच्चे ा बड़े से अलग सोचता है, अलग तरीके से तर्क लगाता है और निष्कर्ष पर पहुँचता है। जैसा कि हम जानते हैं कि गणितीय और वैज्ञानिक दृष्टिकोण उम्र के साथ विकसित होता है। पियाजे के अवस्था सिद्धांत में हमने पढ़ा कि कैसे छोटे बच्चे (पूर्व संक्रियात्मक अवस्था) मात्रा के संरक्षण (conservation of values and quantities) को समझने में चूक करते हैं और कैसे उम्र के साथ वे इस समझ में अपने आप परिपक्व होते जाते हैं। इस संदर्भ में निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना जरूरी है :

संज्ञान और कार्य कारण की समझ : क्या दुनिया गोल है, यह समझना बहुत सारे बच्चे के लिए मुश्किल है। क्योंकि वे उसके तर्क को समझने के लिए अलग–अलग सम्प्रत्ययों का इस्तेमाल करते हैं। यदि पियाजे के सिद्धांत को ले तो बच्चे में यह समझ तभी विकसित हो सकती है जब उनमें इससे सम्बंधित स्कीमा विकसित हो जाए। उसी तरह, बारिश क्यों और कैसे होती है, यह समझना भी संज्ञान और कार्यकारण की समझ पर निर्भर करता है। शिक्षकों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे अपने शिक्षण में किसी भी अवधारणा को कार्य–कारण सम्बंधों के माध्यम से समझने–समझाने का भरसक प्रयास करें।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उम्र से संबंध

संज्ञानात्मक विकास और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में संबंध समझने के लिए आइए फिर से पियाजे के संरक्षण के प्रयोग को देखे :

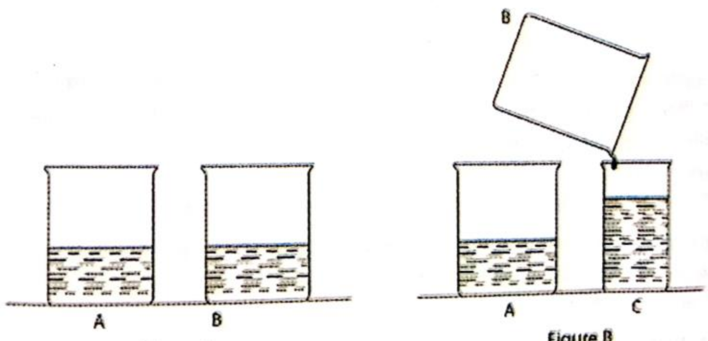

Figure A Figure B ?

प्रयोग विधि –

4–6 वर्ष के बच्चे के सामने पहले एक समान दो बर्तन रखिए। दोनों में बराबर मात्रा में (एक बराबर स्तर तक) पानी डालिए। पूछिए क्या दोनों बराबर है? फिर उनके सामने उन्हीं दोनों बर्तनों के पानी को दो अलग-अलग आकार के बर्तनों में उलट लीजिए। आकार ऐसे हो कि एक लम्बाई में ज्यादा हो, और दूसरा चपटा हो (चित्र-B देखें) जिससे उनमें डाले पानी के स्तर में अंतर नजर आए। अब फिर पूछे क्या दोनों बराबर है? इस उम्र में बच्चे समान्यतः यह नहीं मानते कि दोनों बराबर हैं। सब कुछ प्रत्यक्ष घटता देख भी वे अ-वैज्ञानिक निष्कर्ष पर पहुंचते हैं।

अब अगर आप यही प्रयोग 7 वर्ष से ऊपर के बच्चे के साथ दोहराएंगे तो आप देखेंगे कि बच्चे बता पाएंगे कि दोनों मात्राएँ बराबर हैं। वे आपको इस का कारण भी बता पाएंगे। अब उनकी तार्किक क्षमता बेहतर हो गई है। उनमें कार्य कारण की समझ का विकास हो रहा है।

इस प्रयोग के दौरान यदि आप छोटे बच्चे को यह बताएं तो भी बच्चे ा आश्वस्त नहीं होगा कि दोनों बर्तनों में पानी बराबर है। पियाजे और इनहेल्ड के अनुसार बच्चे ा संज्ञानात्मक रूप से अभी इसके लिए परिपक्व नहीं हुआ है।

समेकन :–

संज्ञानात्मक विकास से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसके फलस्वरूप बालक की सभी मानसिक तथा बौद्धिक शक्तियों, जिसके अन्तर्गत संवेदना, प्रत्यक्षीकरण , बुद्धि एवं भाषायी योग्यता , समस्या समाधान योग्यता आदि सम्मिलत है, का पर्याप्त मात्रा में विकास संपन्न होता है। बच्चे का मानसिक विकास कैसे होता है यह बताने के लिए स्वीट्जरलैण्ड निवासी जीन पियाजे ने अपना संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त सामने रखा। उन्होने बताया कि आयु में वृद्धि के साथ ही बच्चे की बौद्विक क्रियाओं एवं क्षमताओं का विकास का यह क्रम पियाजे के अनुसार जिन विशेष चरणों तथा अवस्थाओं में संपन्न होता है वे हैं; संवेदी क्रियात्मक (sensory-motor) पूर्व संक्रियात्मक (Preoperational) मूर्त संक्रीय अवस्था (concrete operational stage) | औपचारिक संक्रीय अवस्था (formal operational Stage.) पियाजे द्वारा दिये गये संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त इस लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह बच्चे , शिक्षक, अभिभावक समाज , शिक्षण सीखना, पाठ्यक्रम, कक्षा और विद्यालय को समझने में व उनके आवश्यक बदलावो के आधार को समझने में सहायक है।

बुद्धि संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के विकास का ही एक रूप है। यह सीखने , अमूर्त चिंतन करने तथा नवीन स्थितियों से समायोजन करने की योग्यता है। गार्डनर के बहुबुद्धि सिद्वान्त के आधार पर यह समझा जा सकता है कि क्यों किसी एक क्षेत्र में तो कोई व्यक्ति बहुत तेज हो जाता है और

किसी अन्य क्षेत्र में वह सामान्य रहता है या पिछड़ जाता है। यह सिद्धान्त बच्चे ो के सर्वांगीण विकास के लिए व्यापक क्षेत्र प्रस्तुत करता है तथा आज की शिक्षा पद्धति में सतत एवं व्यापक मूल्यांकन के स्परूप को समझने में विशेष मदद करता है।

जे0एस0 ब्रुनर (J.S.Bruner 1964,66) ने संज्ञानात्मक विकास का अध्ययन किया । ब्रुनर ने भी पियाजे के समान ही संज्ञानात्मक विकास को एक क्रमिक प्रक्रिया माना है तथा बच्चे के चिंतन में संकेत तथा प्रतिमा को महत्वपूर्ण माना है।

संप्रत्यय निर्माण के साथ ही बच्चे ो में वैज्ञानिक चेतना को बढाने में कार्यकारण की समझ का होना जरूरी है। पियाजे ने ही छोटे बच्चे को वैज्ञानिक माना है। वे वस्तुएॅं और घटनाओं पर क्रिया करके अपनी अवधारणाओं का निर्माण करते रहते है और इसी से अपनी आसपास की दुनिया की समझ बनाते हैं । बच्चे के संप्रत्यय विकास में उनकी बौद्धिक परिपक्वता , ज्ञानेन्द्रियों की अवस्था, अनुभव, सामाजिक आर्थिक स्तर काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं ।

बोध प्रश्न –

वस्तु निष्ठ प्रश्न

1. पियाजे के अनुसार संज्ञानात्मक विकास की द्वितीय अवस्था है ?

(क) संवेदी क्रियात्मक अवस्था (Sensory motor stage)

(ख) मूर्त संक्रियात्मक अवस्था (Concrete operational stage)

(ग) औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था (formal operational stage)

(घ) पूर्व संक्रियात्मक अवस्था (Pre operational stage)

2. पियाजे मुख्य रूप से किसके विकास के लिए जाने जाते हैं ?

(क) भाषा विकास (language development)

(ख) यौन विकास (sex development)

(ग) संज्ञानात्मक विकास (Cognitive development)

(घ) सामाजिक विकास (Social Development)

3. पियाजे के अनुसार मौजूदा योजनाओं में नई जानकारी को शामिल करने को कहा जाता है ?

(क) संक्रियात्मक चिंतन (Operational thinking)

(ख) संतुलन

(ग) समायोजन (Adjustment)

(घ) अनुकूलन (Adaptation)

4. सबसे पहले बुद्धि परीक्षण किसने किया ?

(क) पियाजे (ख) वायगोत्सकी

(ग) ब्रुनर (घ) अल्फ्रेड बिने और साईमन

5. बहुबुद्धि सिद्धान्त किसने दिया ?

(क) थर्स्टन (ख) अल्फ्रेड बिने (ग) गार्डनर (घ) पियाजे ।

6. बुद्धिलब्धि (I.Q.) ?

(क) मानसिक आयु /100 x वास्तविक आयु (Chronological age)

(ख) वास्तुविक आयु x 100 / मानसिक आयु

(ग) मानसिक आयु x 100 / वास्तुविक आयु

(घ) 100 x वास्तुविक आयु / मानसिक आयु

परीक्षोपयोगी प्रश्न :–

1. संवेदी क्रियात्मक अवस्था के दो माह के बच्चे ो तथा दो वर्ष के बच्चे में क्या विशेष अंतर पाए जाते हैं ?

2. स्कीमा की अवधारणा क्या है ?

3. पियाजे द्वारा दिये गये संज्ञानात्मक विकास के चार चरणों की प्रमुख विशेषताऍ क्या हैं?

4. बच्चे जैसे –जैसे बड़े होते है उनकी मानसिक प्रक्रियाओ में एक गुणात्मक परिवर्तन होता रहता है। इस कथन को संज्ञानात्मक विकास के संदर्भ में स्पष्ट करें ।

5. अल्फ्रेड बिने ने बुद्धि संबंधी किन –किन योग्यताओं को मापने की कोशिश की ?

6. बिने परीक्षण किसी विशेष वर्ग के बच्चे ो को बुद्धिमान और किसी अन्य वर्ग के बच्चे ो को कम बुद्धिमान बताता है– इस कथन को स्पष्ट करें ।

7. बुद्धिलब्धता से आप क्या समझते हैं ? क्या बुद्धि का मापन किया जा सकता है ?

8. गार्डनर के बहुबुद्धि सिद्धान्त की व्याख्या को आप किस प्रकार से देखते हैं ?

9 संप्रत्यय क्या है ? संप्रत्यय के विकास को प्रभावित करने वाले कारकों की चर्चा कीजिए?

10. पियाजे और ब्रुनर के सिद्वान्त में क्या समानताएँ हैं तथा यह किस प्रकार से भिन्न है?

11. कार्यकारण के समझ के विकास में सामाजिक सांस्कृतिक तत्वों की भूमिका का विश्लेषण कीजिए ।

<u>परियोजना कार्य</u>

1. आत्मसातीकरण , समायोजन व साम्यधारण की प्रक्रियाओं को नए उदाहरणों की सहायता से व्याख्या कीजिए ।

2. पियाजे की अवस्थाओं के अनुसार 6 वर्ष के बच्चे और 12 वर्ष के बच्चे के सोचने के तरीके अलग –अलग होते हैं। एक शिक्षक होने के नाते आप इन्हे पढाने के तरीको में क्या– क्या बदलाव लायेगें ।

3. विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित एक –एक सफल व्यक्तियों के विषय में सूचनाएँ एकत्रित करें जो औपचारिक शिक्षा में सफल नहीं हो पाए, लेकिन अपने रूचि के क्षेत्र में उन्होने बहुत बड़ी महारत हासिल की।

4. बच्चे ो में एक ही वस्तु के अलग – अलग संप्रत्यय के कारणों को सूचीबद्ध कीजिए ।

6 प्रारम्भिक कक्षा के विभिन्न पाठ्यपुस्तकों में से कुछ ऐसी अवधारणाओं की सूची बनाए जिनकी समझ के लिए कार्यकारण संबंधी जरूरी है।

<u>संदर्भ प्रस्तुकें –</u>

1. वुलफ्लॉक , अनीता (2009). एजुकेशनल साइकोलॉजी. दिल्लीः पियरसन प्रिन्टिंग हॉल.

2. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्(2005). राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् , दिल्ली , भारत ।

3. मंगल, एस.के. (2016). शिक्षा मनोविज्ञान. नई दिल्लीः आर्य बुक डिपो.

4. सिंह, अरूण कुमार(2012) . शिक्षा मनोविज्ञान. वाराणसीः मोतीलाल बनारसीदास.

5. लाल, रमन बिहारी (2015). शिक्षा मनोविज्ञान. मेरठः लाल बुक डिपो.

6. इग्नु विकास और सीखनाका मनोविज्ञान 322 खंड 3 नई दिल्ली इग्नु 2008 ।

8 इग्नु , प्रारम्भिक विद्यालयी बच्चे ो को समझना, बी0ई0एस0–001 ।

संज्ञान, सीखना और बाल–विकास

इकाई–2

बाल, विकास एवं सीखना

➢ **पाठ के मुख्य बिन्दु**

- बाल विकास और सीखने में अंतर्सम्बन्ध परिचयात्मक समझ, परिपक्वता और सीखना।
- सीखने की योग्यता एवं निर्योग्यता (लर्निंग डिसेबिलिटी)।
- सीखने का एवं सीखने के लिए आकलन ।
- समेकन।
- अभ्यास के प्रश्न।
- संदर्भ सूची।
- अन्य उपयोगी ई–संदर्भित अध्ययन सामग्री।

इकाई–2 बाल,विकास एवं सीखना

प्रस्तावना :–

बच्चे के व्यवहार को नियंत्रित करने में 'सीखना' एक आधरभूत प्रक्रिया है। यह अनवरत चलती रहती है एवं बच्चे के व्यवहार के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती है। चाहे वह सीखना बच्चे की आदतों, रूचियों, विश्वास या परम्पराओं जिनसे भी सम्वधित हो, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावी होते है। ये परिवर्तन कभी तीव्र या कभी धीमी गति से होते रहते है एवं बच्चे के अनुभव व ज्ञान में लगातार संवर्द्धन करते रहते है।

'सीखना' शब्द क्रिया बोधक है अतएव जानने की क्रिया ही 'सीखना' कहलाती है। एक तरह से जानना परिचय कराना भी है। जैसे – मैं अपने घर से विद्यालय का मार्ग जानता हूँ। इसमें जानना परिचय या तादम्यता का बोध कराता है। अर्थात सीखने का अर्थ–परिस्थिति, घटना, वस्तु, ब्च्चे या अन्य के विषय में परिचय प्राप्त करने से है। यह परिचय ब्च्चे स्वंय या दूसरे के सहायता से भी प्राप्त कर सकता है। ऐसी दशा में सीखना स्व–प्रयत्न से सक्रिय रूप में होता है तब यह सक्रिय सीखना (Active Learning) कहलाता है, वही अन्य के माध्यम से सीखना निष्क्रिय सीखना (Passive Learning) कहलाता है। चाहे जिस तरह से यह परिचय अर्जित किए जाए वह सीखना ही है। अतएव सीखना घर , कक्षा, समाज हर जगह होता है अन्तर केवल विषय वस्तु में सम्भव हो सकता है।

इस प्रकार से प्राप्त अनुभव व ज्ञान कार्य को कुशल व सफलतापूर्वक निष्पादित करने में सहायक होते है। सीखने की प्रक्रिया में मुख्य रूप से दो तत्व निहित होते है वे हैं– पूर्व–अनुभवों से लाभ उठाने की योग्यता व परिपक्वता। बच्चे परिपक्वता की ओर बढ़ते हुए अपने अनुभवों से लाभन्वित होकर वातावरण के प्रति उपयुक्त प्रतिक्रिया करते है।

अतः हम यह कह सकते है कि सीखने के अर्थ में अनुभव, शिक्षण,प्रशिक्षण अथवा अध्ययन आदि किसी भी विधि से क्रियाओं को कर नए–नए तथ्यों के ज्ञान प्राप्त करना, आवश्यकता पड़ने पर प्रयोग करना और अपने व्यवहार का सही दिशा देना अन्तर्निहित है।

❖ बाल–विकास की अवधारणा :

हम अपने आस–पास के वातावरण में बच्चे को छोटे स्वरूप से बड़े होते हुए देखते रहे है। विकास के इस कालक्रम में हमारे जेहन में कई सवाल उठते रहते है– जैसे :-

- जन्म से पूर्व एवं जन्म के बाद से परिपक्व होने तक बच्चे में किस–किस प्रकार के परिवर्त्तन होते रहते है?
- बच्चे में होने वाले परिवर्त्तनों का विशेष आयु के साथ क्या सम्बन्ध होता है?
- आयु के साथ घटित होने वाले परिवर्त्तनों का स्वरूप क्या है?
- बच्चे में होने वाले परिवर्त्तनों के लिए कौन–कौन से कारक जिम्मेदार होते हैं?
- क्या बच्चे में समय–समय पर होने वाले परिवर्त्तन उनके व्यवहार को प्रभावित करते हैं?
- क्या पिछले परिवर्त्तनों के आधार पर बच्चे के भविष्य में होने वाले गुणात्मक एवं परिमाणात्मक परिवर्त्तनों की भविष्यवाणी की जा सकती है?
- क्या सभी बच्चे में वृद्धि एवं विकास सम्बन्धी परिवर्त्तनों का क्रम एक जैसा है या उनमें वैयक्तिक भिन्नता पाई जाती है?
- बच्चे की रूचियों, आदतों, दृष्टिकोणों, जीवन–मूल्यों, स्वभाव तथा उच्च व्यक्तित्व, एवं व्यवहार में जन्म के समय से जो परिवर्त्तन आते रहते है उनका विभिन्न आयु–वर्ग तथा अवस्था–विशेष से कैसा सम्बन्ध है?

ऐसे अनेक प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए हमें बच्चे के विकास की अवधारणा पर स्पष्ट समझ विकसित करने की आवश्यकता होती है। जैसा कि हम सब जानते है कि विकास की प्रक्रिया अविरल चलने वाली क्रमिक तथा सतत् गतिशील रहती है। विकास की प्रक्रिया में बच्चे का शारीरिक, मानसिक, संज्ञानात्मक, भाषागत, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास होता है। बच्चे के विकास की प्रक्रिया के अंर्तगत ही उनकी रूचियाें, आदतों, दृष्टिकोणों, जीवन–मूल्यों, स्वभाव, व्यक्तित्व व्यवहार इत्यादि मे स्पष्ट एवं इच्छित परिवर्त्तन होते रहते है।

बाल–विकास का तात्पर्य होता है बच्चे के विकास की प्रक्रिया। यह बच्चे के जन्म से पूर्व गर्भ में प्रारम्भ हो जाती है। विकास की इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में बच्चे ा गर्भावस्था, शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, व प्रौढ़ावस्था जैसी अवस्थाओं से गुजरते हुए परिपक्वता की स्थिति को प्राप्त करता है। बच्चे के विकास के क्रम में यह देखा जाता है कि कुछ परिवर्तन व्यक्तिगत या सार्वभौमिक रुप से होते रहते हैं। उनके पीछे वंशानुक्रमणीय तथा पर्यावरणीय कारक या दोनों उपस्थित हो सकते हैं।

चित्र:2.1 विभिन्न अवस्थाओं में बढ़ते हुए बच्चे की छवि

बच्चे के ये विकासात्मक परिवर्त्तन प्रायः व्यवस्थित, प्रगत्यात्मक और नियमित होते है। ये परिवर्त्तन सामान्य से विशिष्ट और सरल से जटिल की ओर अग्रसर होने के दौरान एक पैटर्न का अनुसरण करते है। विकास की प्रक्रिया में कुछ परिवर्त्तन तेज एवं स्पष्ट दिखाई देने वाले होते हैं। जैसे– बच्चे के दाँत की बनावट, आकार में वृद्धि जबकि कुछ परिवर्त्तनों को दिन–प्रतिदिन की क्रियाओं मे आसानी से देख पाना सम्भव नहीं होता क्योंकि वे प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर नहीं होते। जैसे– व्याकरण को समझना, गणित के प्रश्नों को हल करना आदि।

विकास बहु–आयामी होते है अर्थात् कुछ क्षेत्रों में यह बहुत तीव्र वृद्धि दर्शाते हैं जबकि अन्य क्षेत्रों में इनमें कुछ कमियाँ देखने को मिलती है। एक अच्छा परिवेश, शारीरिक शक्ति, स्मृति, बुद्धि, व चिन्तन के स्तर आदि में अपेक्षित सुधार ला सकता है। इन विकासात्मक परिवर्त्तनों के क्रम में प्रायः परिपक्वता प्राप्ति हेतु क्रियात्मकता के स्तर पर उच्च स्तरीय वृद्धि देखने को मिलती है जैसे– बच्चे ों के द्वारा सीखे गए शब्दावली के आकार व जटिलता में वृद्धि आदि।

परन्तु इस प्रक्रिया में कभी–कभार कोई कमी अथवा क्षति भी निहित हो सकती है– जैसे– उम्र के साथ–साथ हड्डियों के घनत्व में कमी या वृद्धावस्था मे स्मृति क्षीण होना।

वृद्धि व विकास सदैव एकरूपता में होते है। विकास के पैटर्न में प्रायः एक ऐसी अवधि का भी प्रत्यक्षण होता है जिसके दौरान कोई स्पष्ट सुधार देखने को नही मिलते जो आयु बढ़ने के साथ–साथ बच्चे के आकार अथवा कद में वृद्धि,मौसम, थकान एवं अन्य आकस्मिक कारणों से होने वाले अस्थायी

परिवर्त्तनों को विकास की श्रेणी में नहीं रख सकते है जैसेः जुकाम होने पर बच्चे की आवाज में भारीपन आने का आकलन, उनकी बढ़ती हुई उम्र के साथ हुए आवाज में भारीपन से नहीं किया जा सकता है। ये परिवर्त्तन एक साथ, एक ही समय पर हो सकते है जैसेः किशोरावस्था के दौरान बच्चे के शारीरिक, संवेगात्मक, सामाजिक और संज्ञानात्मक क्रियात्मकत्ता में भी तेजी से परिवर्त्तन दिखते है। कई परिस्थितियों में बालकों में विकास प्रासंगिक हो सकते है जहाँ ये ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, परिवेश और सामाजिक–सांस्कृतिक घटकों से प्रभावित हो सकते हैं। यथा– माता–पिता का असमय देहान्त हो जाना, युद्ध, महामारी या बच्चे के लालन–पालन के तौर–तरीके इन्हें प्रभावित कर सकते हैं। कुछ बच्चे ऐसे भी हो सकते है जो आनुवांशिकीय घटकों से भी प्रभावित हो सकते है।

❖ बच्चे के विकास की अवस्थाएँ :

यद्यपि बच्चे का विकास एक सतत् प्रक्रिया है। शारीरिक विकास एक सीमा के बाद रूक जाता है किन्तु मनोशारीरिक क्रियाओं में विकास निरन्तर होते रहते है। इन्हीं मनोशारीरिक क्रियाओं के अन्तर्गत मानसिक, भाषायी, संवेगात्मक, सामाजिक एवं चारित्रीक विकास आते है। इनका विकास विभिन्न आयु स्तरों में भिन्न–भिन्न प्रकार से होता है। इन्हें विभिन्न आयु स्तर में बच्चे के विकास की अवस्थाऐं कहते है। 'विकास की अवस्था' शब्द से यह संकेत प्राप्त होता है कि एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाने पर विकास की प्रक्रिया में निश्चित परिवर्त्तन आ जाते है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने बच्चे के विकास को दृष्टिगत करते हुए सामान्य रूप से इन्हें पांच अवस्थाओं में बाँटा है।

बच्चे के विकास की अवस्थाएँ	• गर्भावस्था – गर्भाधान से जन्म तक। • शैशवावस्था – जन्म से पांच वर्ष तक। • बाल्यावस्था – 5 वर्ष से 12 वर्ष तक। • किशोरावस्था – 12 वर्ष से 18 वर्ष तक। • प्रौढ़ावस्था – 19 वर्ष से अधिक।

यहाँ यह स्पष्ट करना उचित होगा कि विकास की इन अवस्थाओं तथा अवधि के सम्बंध में मनोवैज्ञानिकों में मतान्तर पाए जाते है। वृद्धि व विकास की इन विभिन्न अवस्थाओं में व्यवहार के लगभग सभी पक्षों में विकासात्मक लक्षण परिलक्षित होते हैं। विकास के इन अवस्थाओं से गुजरते हुए बच्चे के द्वारा प्रदर्शित विभिन्न लक्षणों के आधार पर उसके व्यवहार का अध्ययन एवं पूर्वकथन किया जा सकता है। ये आयु के साथ–साथ बच्चे के सीखने व व्यवहार–परिवर्तन के कारण बन सकते हैं एवं अनुभव व प्रयास के फलस्वरुप निरंतर परिमार्जित होते रहते हैं।

शैक्षिक दृष्टि से इनमें से मध्य की तीन अवस्थाओं यथा– शैशवास्था, बाल्यावस्था तथा किशोरावस्था का अत्यधिक महत्व है। बच्चे के विकास के इन तीनों अवस्थाओं को विस्तृत तौर पर समझने हेतु हम तालिका का अवलोकन कर सकते है।

बच्चे का विकास : एक नजर में	
शैशवावस्था (जन्म से 5 वर्ष)	• सीखने का आदर्श काल। • भावी जीवन की आधार शिला। • जीवन का सबसे महत्वपूर्ण काल। • अनुकरण द्वारा सीखने की अवस्था। • तीव्रता से शारीरिक विकास की अवस्था। • क्षणिक संवेग की अवस्था। • समुचित सांवेगिक विकास की दृष्टि से स्वर्णिम काल।
बाल्यावस्था (6–12 वर्ष)	• स्थूल–संक्रियात्मक विकास की अवस्था। • बच्चे का अनोखा काल। • भावी जीवन की सफलता एवं असफलता के नींव रखने का काल अथवा निर्माण काल। • प्रारम्भिक विद्यालय की आयु। • वैचारिक क्रिया की अवस्था। • टोली, दल या समूह बनाने की आयु। • मिथ्या परिपक्वता का काल। • खेल की आयु। • प्रतिद्वन्द्वात्मक समाजीकरण का काल। • मूर्त्त चिन्तन की अवस्था। • कल्पनाशक्ति एवं अमूर्त्त चिन्तन के प्रारम्भन। • तीव्र शारीरिक क्रियाशीलता की अभिवृद्धि का काल। • सामाजिकता के विकास का काल। • नए कौशलों एवं क्षमताओं के विकास की वृद्धि में स्वर्णिम काल है।
किशोरावस्था (13–18 वर्ष)	• अमूर्त्त चिन्तन की अवस्था। • दल–भक्ति की अवस्था। • जीवन का सबसे कठिन काल। • अटपटी या उलझन की अवस्था। • समस्याओं की अवस्था। • द्रुत एवं तीव्र विकास की अवस्था। • स्वर्ण काल, वह अंतिम अवस्था जो बालक को परिपक्वता की ओर ले जाती है। • बसन्त ऋतु। • सामाजिक स्वीकृति की अवस्था। • व्यक्तिगत एवं घनिष्ठ मित्रता की अवस्था। • प्रबल दबाव व तनाव की अवस्था।

	• संवेगात्मक परिवर्त्तन की अवस्था। • आत्म–सम्मान व आत्म–स्वीकृति की अवस्था। • तार्किक चिन्तन की अवस्था। • संघर्ष व तूफान की अवस्था। • उथल–पुथल की अवस्था। • संक्रमण–काल की अवस्था। • टीन–एज की अवस्था। • सुनहरी अवस्था सभी अवस्थाओं से अधिक आनन्दमयी, उपलब्धियाँ अर्जित करने की अवस्था। • Age of Beauty (एज ऑफ व्यूटी)।

❖ बाल–विकास के विभिन्न पहलूओं का अध्ययन :

बच्चे के व्यक्तित्व के समस्त पहलूओं का विकास गर्भावस्था से बाल्यावस्था में नहीं हो पाता है। जैसे–जैसे वह परिपक्वता की ओर बढ़ता है वैसे–वैसे उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलूओं में विकास होता जाता है।

ये निम्नलिखित हैः–

- शारीरिक विकास
- मनोगत्यात्मक विकास
- मानसिक विकास
- भाषा का विकास
- नैतिक विकास
- चारित्रिक विकास
- सौंदर्यात्मक विकास
- धार्मिक विकास
- स्मृति का विकास
- प्रतिभा व कल्पना का विकास
- अवधान व रूचि का विकास
- चिंतन एवं रूचि का विकास
- खेल का विकास, व
- व्यक्तित्व का विकास

विभिन्न आयु–स्तरों पर बच्चे ों के व्यवहार में कौन–कौन से परिवर्त्तन होते है? उनका क्या कारण है? और क्या प्रभाव है? यह बाल–विकास ही बताता है।

यदि आप बच्चे का सर्वांगीण विकास उचित तरीके से करना चाहते है तो आपको सर्वप्रथम बच्चे को जानना और समझना होगा। एक सफल शिक्षक के रूप में बच्चे का सर्वांगीण विकास तभी कर सकते है जब आप बच्चे की आयु, मानसिक स्तर, अभिवृद्धि–विकास के साथ होने वाले परिवर्त्तनों, सीखने की क्षमता, आदतों, रूचियों, आवश्यकता, समस्याओं आदि के साथ–साथ सीखने–सीखाने की प्रक्रिया को रूचिपूर्ण एवं आनन्दमयी शिक्षण–विधियों से सुसज्जित करने का प्रयास करते है। बच्चे के माता–पिता, अध्यापक तथा बाल–मनोवैज्ञानिक उन्हें जीवन पथ पर आगे बढ़ाने हेतु लगातार निर्देशित करते रहते है। बाल–विकास उनकी सहायता कर यह सिखाने का प्रयत्न करता है उन्हें किस प्रकार की व्यवहारिक शिक्षा देनी चाहिए जो उन्हें आगे बढ़ने में सहायक हो।

❖ बाल विकास का उद्देश्यः

बाल विकास का उद्देश्य बदलती हुई सामाजिक व्यवस्था में कुशल आत्म–निर्देशन की योग्यता में वृद्धि, व्यक्तित्व का अभिवर्द्धन और उसका संतुलित विकास करना तथा बच्चे के स्वभाव को समझने में शिक्षक की सहायता करना है। बाल–स्वभाव के ज्ञान के द्वारा शिक्षक बच्चे को उचित निर्देश देने और उनका पथ–प्रदर्शन करने में सफल हो सकते है। उचित मार्गदर्शन मिलने पर बच्चे ा सामाजिक परिस्थितियों से समंजन स्थापित करने और सामाजिक दायित्वों का भली–भाँति निर्वाह करने में सफल होंगे। अतः बाल विकास का उद्देश्य बच्चे में सदाचार की भावना विकसित करना है। यह शिक्षको को उनके कार्य करने में सहायता प्रदान करता है जिससे वे बच्चे के संतुलित व्यक्तित्व–निर्धारण में सशक्त कड़ी की भूमिका का निर्वहन कर सकें। बच्चे के जीवन को सुखी व समृद्धशाली बनाने हेतु बाल मनोविज्ञान हमारे सम्मुख बच्चे के भविष्य की एक उचित रूपरेखा प्रस्तुत करता है। जिससे अध्यापक व अभिभावक बच्चे में सीखने की क्षमता का यथेष्ट विकास कर सकते है। किस अवस्था में बच्चे की कौन सी क्षमता का विकास सुनिश्चित होना एवं उनका उचित प्रयोग अवस्थानुसार विकास के प्रारूपों को जानने के पश्चात् आसानी से स्पष्ट होता है। उदाहरण स्वरूप– एक बच्चे को तभी चलना सिखाना चाहिए जब वह चलने की अवस्था का हो चुका हों, अन्यथा इसके परिणाम विपरीत हो सकते हैं। बाल–विकास, बच्चे को उचित निर्देषन प्रदान कर, उनकी व्यक्तिगत कठिनाईयों और दोषों को न्यून करने एवं व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास एवं उचित व्यावसायिक निर्देशन चुनने की ओर उद्धत करता है।

❖ बच्चे के विकास को प्रभावित करने वाले कारक :

बच्चे के विकास की प्रक्रिया में विभिन्न कारकों जैसे– परिवेश, परिवार, संस्कृति, पोषण इत्यादि की महत्वपूर्ण भूमिका है।

- शुद्ध हवा, पानी, सूर्य की रोशनी बच्चे के विकास के लिए अति आवश्यक है। इनके उपयोग से ये कई बीमारियों से दूर रहते है जैसे– दमा, खाँसी, हैजा, रिकेट्स आदि।

- किसी भी परिवार की सामाजिक व आर्थिक स्थिति पर ध्यानाकर्षण करने पर हम पाते हैं कि बच्चे के व्यवहार पर सर्वप्रथम इनका प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। परिवार के द्वारा तय किए गए मानक–मूल्यों को ग्रहण कर बच्चे ा अपने नव जीवन की आधारशिला रखता है और प्रगति के पथ पर चलता है।
- बच्चे के विकास के क्रम मे यह पाया जाता है कि जिन बच्चे को माता के गर्भाधान के समय से ही उचित पोषण प्रदान किया जाता है वहाँ बच्चे में होने वाली पोषण जनित बीमारियों में काफी कमी पाई जाती है। पौष्टिक भोजन के अभाव में बच्चे का शारीरिक व मानसिक विकास अवरूद्ध हो सकता है।

❖ सीखना (Learning) :

बच्चे के विकासात्मक प्रक्रिया पर ध्यानाकर्षण करने के उपरान्त मनोवैज्ञानिक इस परिणाम पर पहुंचे कि बच्चे के कुछ कार्य– जैसे– साँस लेना, पलक झपकाना, देखना, सुनना, हाथ–पैर हिलाना, उठना–बैठना, चलना–फिरना, मुँह से ध्वनि निकालना आदि स्वभाविक तरीके से करते है। वही कुछ कार्य अनुभव के आधार पर अर्जित व्यवहार परिवर्तन के माध्यम से सीखे जाते हैं। बच्चे का विकास सीखने पर आधारित है। बच्चे जीवन के शुरूआती काल से सीखना आरम्भ कर देते है तथा यह प्रक्रिया जीवन भर चलती रहती है। बच्चे अपने अनुभव व ज्ञान का प्रयोग अपने आगामी व्यवहारों को व्यवस्थित प्रयोजनपूर्ण एवं उपयोगी बनाने में करते हैं।

'सीखना' सामान्य बोल चाल की भाषा में प्रयुक्त होने वाला शब्द है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका सम्बन्ध सीखे गए ज्ञान, अनुभव व अभ्यास के माध्यम से व्यवहार में होने वाले परिवर्त्तनों से है। यह व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में सहायक की भूमिका निर्वहन करने एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक होता है। मनोविज्ञान में सीखने शब्द का प्रयोग दो रूपों में होता है– एक प्रक्रिया (Process) के रूप में और दूसरा परिणाम के रूप में। प्रक्रिया के रूप में सीखने का अर्थ उस प्रक्रिया से होता है जिसके द्वारा बच्चे ा नए–नए तथ्यों को स्वीकार कर नई क्रियाएँ करना चाहता है एवं सीखता है। परिणाम के रूप में सीखने का अर्थ मनुष्य के व्यवहार–परिवर्त्तन से होता है। मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में सीखने का तब तक कोई अर्थ नहीं होता, जब तक उससे बच्चे के व्यवहार मे कोई परिवर्त्तन न हो।

यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि सीखने के कारण व्यवहार परिवर्त्तन होते है, परन्तु सभी प्रकार के व्यवहार–परिवर्त्तन सीखने के कारण नहीं होते। आयु के साथ–साथ बच्चे में शारीरिक तथा मानसिक परिवर्त्तन होते रहते हैं, ये व्यवहार–परिवर्त्तन के कारण बन सकते है। यहाँ सीखने का अभिप्राय केवल उन्हीं परिवर्त्तनों से होता है जो अभ्यास या अनुभव पर आधारित होते है।

उदाहरण के लिए–

- एक बच्चे पटाखे जलाने हेतू माचिस का उपयोग करता है और माचिस की तीली से जलन का अनुभव होने पर भविष्य में ऐसा दुबारा नहीं करना चाहता है।
- दैनिक जीवन में ऐसे अनेकों उदाहरण बिखरे पड़े है जो हमे सीखने का अवसर प्रदान करती है। जैसे– बच्चे के द्वारा कविता का सस्वर पाठ करना, गणित के प्रश्न पत्र हल करना, स्कूटी चलाना सीखना, कम्प्यूटर सिस्टम पर कार्य करना आदि–आदि।

इस प्रकार से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष अनुभवों के माध्यम से बच्चे के सीखने के अवसर व व्यवहार में अपेक्षित परिवर्त्तन दृष्टिगोचर होते हैं, जो लगातार व दीर्ध समय तक किए गए अभ्यास व अनुभव के आधार पर निरन्तर परिवर्त्तित और परिमार्जित होते रहते है। मनोविज्ञान के अंतर्गत इस प्रकार के स्वाभाविक व्यवहार में होने वाले प्रगतिशील व परिमार्जित परिवर्त्तन 'सीखने' का बोध कराते हैं।

चित्र (2.2)
कम्प्यूटर पर कार्य करती हुई बच्चे ी

चित्र (2.3)
गणित के प्रश्न हल करता हुआ बच्चे

चित्र (2.3)
साइकिल चलाता हुआ बालक

चित्र (2.4)
पटाखे जलाता हुआ बच्चे ।

❖ सीखना एक प्रक्रिया :

कई मनोवैज्ञानिकों ने 'सीखने' के सम्बन्ध में अपने विचार दिए हैं। उनके दिए गए विचारों के आधार पर हम यह पाते हैं कि सीखने की प्रक्रिया में:–

- सीखना कोई परिणाम न होकर एक प्रक्रिया है।
- सीखना सदैव ही उद्देश्यपूर्ण होती है जो बच्चे को उसके पर्यावरण के साथ समायोजन तथा अनुकूलन के लिए तैयार करती है।
- सीखने का क्षेत्र अत्यन्त ही व्यापक है, इसमें मानव व्यवहार के सभी क्षेत्र यथा–ज्ञानात्मक, भावात्मक और मनोचालक पक्ष समाहित रहते है।
- सीखना व्यवहार में परिवर्त्तन की प्रक्रिया है, परन्तु बीमारी, थकान, संवेगात्मक स्थिति, परिपक्वता एवं मादक पदार्थों के सेवन आदि के कारण व्यवहार में होने वाले परिवर्त्तनों को सीखने में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है।

- सीखना प्रक्रिया की अभिव्यक्ति बच्चे के द्वारा सीखने के दौरान की जाने वाली विभिन्न प्रकार की क्रियाओं के द्वारा होती है।
- सीखना सदैव सकारात्मक ही नहीं होता है यह नकारात्मक भी हो सकता है।
- सीखना सदैव नवीन नही होता है यह पूर्व व्यवहार का निषेध भी हो सकता है।
- सीखना सार्वभौमिक व सतत् होती है अर्थात् सभी जीवधारी सीखते हैं तथा सीखना किसी भी आयु, लिंगभेद, जाति–प्रजाति विशेष तक सीमित नहीं होता है।
- सीखना लगभग स्थायी प्रकृति का व्यवहार–परिवर्त्तन है।
- सीखना, अभ्यास, प्रशिक्षण तथा अनुभव पर आधारित होता है।
- सीखने में कार्य करने की नई विधियाँ भी समाहित हो सकती हैं।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि व्यापक अर्थ में सीखना शब्द का प्रयोग व्यक्ति के व्यवहार में अनुभव, अभ्यास व प्रशिक्षण से आने वाले परिवर्त्तनों के लिए किया जाता है।

बच्चे स्वभाव से ही सीखने के लिए प्रेरित रहते हैं। बच्चे मानसिक रूप से तैयार हो उसमें पहले से पढ़ा–सिखा देना, बाद की अवस्थाओं में उनमें सीखने की प्रवृत्ति को प्रभावित करता हैं। उन्हें बहुत से 'तथ्य' याद तो रहते हैं पर बहुत सम्भव है कि वे न तो उन्हें समझ पाएँ, न ही उन्हें अपने आस–पास की दुनिया से जोड़ पाएँ।

- स्कूल के भीतर और बाहर दोनों जगह सीखने की प्रक्रिया चलती रहती है। इन दोनों जगहों में यदि परस्पर प्रगाढ़ सम्बन्ध स्थापित हो तो सीखने की प्रक्रिया पुष्ट हो जाती है।
- सीखना किसी की मध्यस्थता या उसके बिना भी हो सकता है। प्रत्यक्ष रूप से सीखने से सामाजिक संदर्भ व संवाद, विशेषकर विशेषज्ञों से संवाद, बच्चे को उनके स्वयं के उच्च संज्ञानात्मक स्तर पर कार्य करने का मौका देते है।

  सीखने की उचित गति भी सुनिश्चित होनी चाहिए ताकि बच्चा अवधारणाओं को समझे और परीक्षा के बाद सीखे हुए व्यवहार को भूल न जाएँ, बल्कि उसे समझ और आत्मसात कर सके। साथ ही सीखने में विविधता और चुनौतियाँ हों जो बच्चे को रोचक लगे और व्यस्त रख सके। ऊबाऊ महसूस होना इस बात का संकेत है कि उस कार्य को बच्चा अब यांत्रिक रूप से दोहरा रहा है और उसका संज्ञानात्मक मूल्य समाप्त हो रहा है।

❖ बच्चे के विकास की विभिन्न अवस्थाएँ एवं उनका सीखने से सम्बन्ध

❖ शैशवावस्था व सीखनाः–

- 0–6 वर्ष की अवस्था –शैशवाकाल
- 0–3 वर्ष तक बच्चे का शारीरिक व मानसिक विकास अधिक तेजी से होता है।

- अनुकरण व दोहराने की प्रवृत्ति।
- बच्चे का समाजीकरण प्रारम्भ।
- जिज्ञासा की तीव्र प्रवृत्ति।
- भाषा सीखने का काल।

❖ बाल्यावस्था एवं सीखनाः–

- 6–12 वर्ष अवस्था–बाल्यावस्था
- 6–9 वर्ष में लम्बाई और भार दोनों में वृद्धि।
- चिन्तन व तर्क शक्तियों का विकास।
- पढ़ने–लिखने मे रूचि।
- सीखने की गति मन्द किन्तु सीखने का क्षेत्र शैशवावस्था की तुलना में विस्तृत हो जाता है।

❖ किशोरावस्था व सीखनाः–

- 12–18 वर्ष की अवस्था –किशोरावस्था
- बाल्यावस्था से परिपक्वता की ओर उन्मुख
- प्रजनन अंग विकसित होते हैं और काम की मूल प्रवृत्ति जागृत होती है।
- इस अवस्था में बच्चे की बुद्धि का पूर्ण विकास हो जाता है, उनके ध्यान–केन्द्रीकरण एवं स्मरण शक्ति बढ़ जाती है एवं उनमें स्थायित्व आने लगता है।
- मित्र बनाने की तीव्र प्रवृत्ति होती है।
- सामाजिक सम्बन्धों में वृद्धि होती है।
- यौन समस्या, इस अवस्था की सबसे बड़ी समस्या होती है।
- इस अवस्था में नशा या अपराध की ओर उन्मुख होने की अधिक सम्भावना रहती है। इसलिए इस अवस्था को जीवन के तूफान का काल भी कहा जाता है।
- किशोरावस्था के शारीरिक बदलावों का प्रभाव किशोर जीवन के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पहलूओं पर पड़ता है। अधिकतर किशोर इन परिवर्त्तनों का सामना बिना पूर्ण ज्ञान एवं समझ के करते है जो उन्हे खतरनाक स्थितियों जैसे– यौन रोगों, यौन–दुर्व्यवहार, एच आई वी संक्रमण एवं नशीली दवाओं के सेवन का शिकार बना सकती है।

  अतः इस अवस्था में उन्हें शिक्षकों, मित्रों एवं अभिभावकों के सही मार्ग दर्शन एवं सलाह की जरूरत पड़ती है।

❖ विकास के विभिन्न आयाम एवं उनका सीखने से सम्बन्धः–

बच्चे के विकास को विभिन्न आयामों में बाँट कर अध्ययन किया जाता हैः–

- शारीरिक विकास (Physical Development)
- मानसिक विकास (Mental Development)
- सामाजिक व सांवेगिक विकास (Social & Emotional Development)
- मनोगत्यात्मक विकास (Motor Development)

❖ शारीरिक विकास व सीखनाः

- बच्चे के शरीर के बाह्य एवं आन्तरिक अवयवों का विकास।
- शारीरिक वृद्धि एवं विकास की प्रक्रिया व्यक्तित्व के उचित समायोजन और विकास के मार्ग में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- शिशु हर कार्य के लिए दूसरों पर निर्भर रहता है। शनैः शनैः विकास की प्रक्रिया के फलस्वरूप वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम होता जाता है।
- शारीरिक वृद्धि व विकास पर बच्चे के आनुवांशिक गुणों का प्रभाव।
- स्वस्थ शारीरिक विकास सभी प्रकार के विकास की पहली शर्त है।
- पौष्टिक आहार, शारीरिक व्यायाम एवं अन्य मनोवैज्ञानिक सामाजिक जरूरतों पर ध्यान देने की जरूरत है।
- बाल स्वास्थ्य एवं उनसे जुड़ी समस्याओं की जानकारी होना शिक्षक के लिए लाभप्रद है।

❖ मानसिक विकास व सीखनाः–

मानसिक विकास से तात्पर्य बच्चे के उन सभी मानसिक योग्यताओं और क्षमताओं में वृद्धि और विकास से है जिनके परिणामस्वरूप वह निरंतर बदलते हुए वातावरण में ठीक समायोजन करता है और विभिन्न प्रकार की समस्याओं को सुलझाने में अपनी मानसिक शक्तियों का पर्याप्त उपयोग कर पाता है।

कल्पना करना, स्मरण करना, विचार करना, निरिक्षण करना, समस्या समाधान करना निर्णय लेना इत्यादि की योग्यता मानसिक विकास के फलस्वरूप ही विकसित होते हैं। जन्म के समय बच्चे में इन योग्यताओं का अभाव होता है, धीरे–धीरे आयु बढ़ने के साथ–साथ उनमें मानसिक विकास की गति बढ़ती जाती है। यदि बच्चे ा मानसिक रूप से कमजोर है तो उसके कारण व उपाय की जानकारी रखना अपेक्षित है।

किस विधि से पढ़ाया जाए? सहायक सामग्री तथा शिक्षण साधन का प्रयोग किस तरह किया जाए? शैक्षणिक वातावरण किस प्रकार का है? इन सबके निर्धारण में मानसिक विकास के विभिन्न पहलूओं की जानकारी सहायक सिद्ध होती है। विभिन्न अवस्थाओं और आयु–स्तरों पर बच्चे की

मानसिक वृद्धि और विकास को ध्यान मे रखते हुए उपयुक्त पाठ्य–पुस्तक तैयार करने में भी इसमे सहायता मिलती है।

❖ सामाजिक व सांवेगिक विकास व सीखना :–

'संवेग' अर्थात् 'भाव' का अर्थ है कि ऐसी अवस्था जो व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती है। भय, क्रोध, घृणा, आश्चर्य, स्नेह, विषाद इत्यादि संवेग के उदाहरणा है। बच्चे में आयु बढ़ने के साथ ही इन संवेगों का विकास भी होता रहता है। संवेगात्मक विकास मानव वृद्धि व विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू है। व्यक्ति का संवेगात्मक व्यवहार उसकी शारीरिक वृद्धि एवं विकास को ही नहीं बल्कि बौद्धिक, सामाजिक एवं नैतिक विकास को भी प्रभावित करती है। संवेगात्मक विकास के कई कारक होते है। इन कारकों की जानकारी शिक्षक को होनी चाहिए। जैसे– बच्चे में भय का कारण क्या है, यह जाँचे बिना बच्चे के भय को दूर नहीं किया जा सकता।

बच्चे के सन्तुलित विकास में उनके संवेगात्मक विकास की अहम् भूमिका है। इस दृष्टिकोण से बच्चे के स्वास्थ्य एवं शारीरिक विकास पर पूरा–पूरा ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है। साथ ही साथ, पारिवारिक वातावरण, विद्यालयी–परिवेश और अध्यापक का भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि बच्चे के स्वाभिमान को ठेस नहीं पहुंचे।

❖ मनोगत्यात्मक विकास व सीखना :

मनोगत्यात्मक विकास का अर्थ ही है– बच्चे की क्रियात्मक शक्तियों, क्षमताओं या योग्यताओं का विकास ऐसी शारीरिक गतिविधियाँ या क्रियाएँ है जिसे सम्पन्न करने के लिए मांसपेशियों एवं तंत्रिकाओं की गतिविधियों के संयोजन की आवश्यकता होती है। जैसे– चलना, बैठना, दौड़ना, खेलना, पतंग उड़ाना आदि। एक नवजात शिशु ऐसे कार्यों में अक्षम होता है। शारीरिक वृद्धि एवं विकास के साथ ही आयु बढ़ने के साथ उसमें इन योग्याताओं का विकास होने लगता है। ये विकास बच्चे के शारीरिक विकास, स्वस्थ रहने, स्वावलम्बी होने, एवं उचित मानसिक विकास में सहायक होता है। इसके कारण बच्चे को आत्म–विश्वास अर्जित करने में सहायता मिलती है। पर्याप्त क्रियात्मक विकास के अभाव में बच्चे में विभिन्न प्रकार के कौशलों के विकास में बाधा पहुँचती है।

ज्ञान के आधार पर शिक्षक बच्चे के विभिन्न कौशकों का विकास करवाने में सहायक हो सकता है। साथ ही यह भी जान सकते है कि किस आयु–विशेष या अवस्था मे बच्चे में किस प्रकार के कौशलों को अर्जित करने की योग्यता होती है? जिन बच्चे में मनोगत्यात्मक विकास सामान्य से कम होता है उनके समायोजन एवं विकास हेतू विशेष कार्य करने की आवश्यकता होती है।

❖ बाल–विकास के विभिन्न आयामों का सीखने से संबंध :–

बाल–विकास के विभिन्न आयामों का आपस में घनिष्ट सम्बन्ध है एवं ये सभी सीखनाको प्रभावित करते है। शारीरिक विकास, विशेषकर छोटे बच्चे में मानसिक व संज्ञानात्मक विकास

में मददगार है। बच्चे की स्वतंत्र खेलों, अनौपचारिक व औपचारिक खेलों, योग और खेल की गतिविधियों मे सहभागिता, उनके शारीरिक व मनो–सामाजिक विकास के लिए आवश्यक है।

मानसिक, भाषायी एवं सामाजिक विकास सीखने को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। उदाहरण स्वरूप–

- कोई बच्चा स्वतंत्र या सहपाठियों के साथ परस्पर मिलकर कोई कार्य करना चाहता है अथवा कितनी अंतःक्रिया करता है यह उसके सोचने व तर्क करने की क्षमता, स्वयं व दुनिया को समझने तथा भाषा का प्रयोग करने की क्षमताओं पर निर्भर करता है।

विकास का सीखने से सम्बन्ध को देखते हुए पाठ्यचर्या का विकास इस तरह किया जाना चाहिए जो बच्चे के शारीरिक व मानसिक विकास के अर्न्तसम्बन्धों के अनुकूल हो। इस प्रकार की पाठ्यचर्या को बाल–केन्द्रित पाठ्यचर्या कहा जाता है। ऐसी पाठ्यचर्या का निर्माण बच्चे की विभिन्न अवस्थाओं की रूचियों, क्षमताओं तथा योग्यताओं के अनुसार किया जाता है।

बच्चे का विकास एवं सीखना एक निरन्तर अन्योन्याश्रित प्रक्रिया है जिसके साथ उन सिद्धांतों का भी विकास होता है जो बच्चे के प्राकृतिक व सामाजिक दुनिया के बारें में समझ बनाते हैं एवं दूसरे के साथ अपने रिश्ते के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करते हैं।

अर्थ निकालना, अमूर्त्त चिन्तन की क्षमता विकसित करना, विवेचना व कार्य; सीखने की प्रक्रिया के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू है। जैसे–जैसे बच्चे की आयु और अनुभव में वृद्धि होने लगती है वैसे–वैसे उनके इस प्रकार के सीखने में भी वृद्धि होती जाती है।

स्पष्ट दृष्टिकोण, भावनाएं और आदर्श, संज्ञानात्मक विकास के अभिन्न हिस्से हैं और भाषा विकास, मानसिक चित्रण, अवधारणाओं व तार्किकता से इनका गहरा सम्बन्ध है। जैसे–जैसे बच्चे की संज्ञानात्मक क्षमताएँ विकसित होती है वे अपनी आस्थाओं के प्रति अधिक जागरूक होते जाते हैं और इस तरह अपने सीखने को स्व–नियंत्रित व नियमित करने में सक्षम हो जाते हैं।

बच्चे व्यक्तिगत एवं दूसरों से विभिन्न तरीकों से सीखते हैं। अनुभव के माध्यम से, स्वयं चीजे करने व स्वयं बनाने से, प्रयोग करने से, पढ़ने, विमर्श करने, पूछने, सुनने, उस पर सोचने व मनन करने से तथा गतिविधि या लेखन के जरिए अभिव्यक्त करने से इन्हें सभी तरह के अवसर प्राप्त होने चाहिए।

❖ परिपक्वता और सीखना :

परिपक्वता एक ऐसी प्रक्रिया है जहाँ व्यक्ति परिस्थतियों पर प्रतिक्रिया करना सीखता है वहीं सीखना एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके परिणामस्वरूप बच्चे में व्यवहार परिवर्त्तन होते है। ये दोनों परस्पर सम्बद्ध तत्व हैं वे विकास में सहायता पहुँचाते हैं। परिपक्वता निर्वाध रूप से अपने–आप चलने वाली प्रक्रिया है। सभी बच्चे देर सबेर दैनिक जीवन के व्यवहार व क्रियाऐं सीखते है। इसके विपरित

सीखने में बच्चे वातावरण की उत्तेजना की प्रक्रिया के आधार पर प्राप्त ज्ञान और अभ्यास की सहायता से नवीन व्यवहार को अपनाता है और व्यवहार को परिमार्पित करता है।

परिपक्वता बच्चे की स्वभाविक अभिवृति है जो बिना किसी विशिष्ट परिरिथतियो के अनवरत चलती रहती है। जैसेः—

- एक निश्चित समयान्तराल पर पैरों पर चलना।
- बच्चे का माँ—पापा का उच्चारण करना आदि। विभिन्न बच्चे की परिस्थितियों एवं वातावरण चाहे जो भी फिर भी हो उनमें यह अभिवृति अवश्य ही होती है।
- बच्चे अपने अनुभव के आधार पर एवं अपनी परिस्थितियों के अनुसार ही सीखता है। जैसे— कम्प्यूटर चलाना सीखना, तैराकी सीखना, मोटर कार ड्राइविंग सीखना आदि।

मैकग्रो एवं स्ट्रेयर के अनुसार परिपक्वता व सीखनाः	
परिपक्वता	• एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है। • सीखने की गति को प्रभावित करती है। • इसके अभाव में सीखने की सफलता संदिग्ध होती है। • विभिन्न क्रियाओं को सीखने के लिए निश्चित परिपक्वता के स्तर की प्राप्ति आवश्यक है। • मुख्य रूप से आनुवांशिकता पर आधारित है। • स्वचालित प्रक्रिया के लिए निर्धारित आयु सीमा है। • संरचना व संभावित क्षमता से सम्बन्धित है। • व्यवहार—परिवर्त्तन के लिए अभ्यास की आवश्यकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। • नस्लीय अंतर से प्रभावित होती है। • सभी स्थितियों में प्रयुक्त की जा सकती है।
सीखना	• मुख्य रूप से पर्यावरण पर आधारित है। • व्यवहार में संशोधन के लिए सीखना एक नियोजित क्रिया है। • कोई आयु—सीमा निर्धारित नहीं। • सीखना गतिविधियों और अनुभवों से संबंधित है। • व्यवहार परिवर्त्तन के लिए अभ्यास आवश्यक है।

	• सीखने के लिए प्रेरणा आवश्यक है। • यह मनोवैज्ञानिक मतभेदों से प्रभावित होता है। • केवल अनुकूल परिस्थितियों में ही इसका प्रयोग किया जा सकता है।

❖ व्यक्तिगत विभिन्नता एवं सीखना :–

जब दो बच्चे ें विभिन्न समानताएँ रखते हुए भी अपने–आप में भिन्न व्यवहार करते हैं तो उसे वैयक्तिक विभिन्नता कहते हैं। प्रत्येक बच्चे में जैविक, मानसिक, सांस्कृतिक, संवेगात्मक अंतर के कारण एक बच्चे ा दूसरे बच्चे से भिन्न माना जाता है। अतः कोई भी दो बच्चे आपस मे समान नहीं होते हैं। यहाँ तक कि जुड़वॉ बच्चे में भी में असमानताएँ पाई जाती है। इस दृष्टि से वैयक्तिक विभिन्नता प्रकृति द्वारा प्रदत्त स्वाभाविक गुण है।

वैयक्तिक भिन्नता का प्रभाव सीखने की प्रक्रिया व इसकी उपलब्धि पर पड़ता है। बुद्धि तथा व्यक्तिव, वैयक्तिक भिन्नता के आधार माने जाते है। इसके कारण सीखने की प्रक्रिया प्रभावित होती है।

❖ वैयक्तिक विभिन्नता को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक निन्न हैंः–

- वंशानुक्रम
- वातावरण
- जाति, प्रजाति व देश
- आयु व बुद्धि
- शिक्षा
- आर्थिक दशा
- लिंग–भेद

❖ आधुनिक मनोवैज्ञानिक वैयक्तिक भिन्नता को अत्यधिक महत्व देते है। इसके ज्ञान के माध्यम से शिक्षक :–

- शिक्षक शिक्षार्थी के वास्तविक आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षा प्रदान कर सकते हैं।
- बच्चे के मानसिक योग्यताओं के वर्गीकरण में आसानी।
- मानसिक दृष्टि से जितना समजातीय होगा उतना ही शिक्षा का समान प्रभाव पड़ेगा।
- बच्चे के स्वभाव के अनुसार इच्छित कार्य उपलब्ध कराना।

- गृहकार्य देते समय बच्चे के क्षमताओं व योग्यताओं का ध्यान।
- एक ही कक्षा के बच्चे की रूचियों, अभिवृत्तियों एवं मानसिक योग्यताओं में अंतर होने के कारण पाठ्यक्रम का विभिन्नकरण आवश्यक है। बच्चे को अपनी रूचि, योग्यता और इच्छा के अनुसार विषय चयन की छूट होनी चाहिए।

❖ सीखने की योग्यता एवं निर्योग्यता (Learning Disability)

'अधिगम' अक्षमता पद दो अलग–अलग पदों अधिगम–अक्षमता (सीखने की अक्षमता) से मिलकर बना है। 'अधिगम' शब्द का आशय सीखने से है तथा अक्षमता का तात्पर्य क्षमता के अभाव या क्षमता की अनुपस्थिति से है। अर्थात सामान्य भाषा में सीखनाअक्षमता का तात्पर्य सीखने की अक्षमता अथवा योग्यता की कमी या अनुपस्थिति से है।

सीखने की अक्षमता एक न्यूरोलॉजिकल अर्थात् तंत्रिका तन्त्र से जुड़ी समस्या है जो संदेश भेजने, ग्रहण करने और प्रोसेस करने की मस्तिष्क की क्षमता को प्रभावित करते है। सीखने की अक्षमता से जुझ रहे बच्चे को पढ़ने, लिखने, बोलने, सुनने, तथा गणित के सवालों को और सूत्रों इत्यादि को समझने, और सामान्य अवधारणाओं के समझने मे कठिनाई आ सकती है।

नोटः– सीखने की अक्षमताएँ शारीरिक या मानसिक बीमारी, आर्थिक हालात या सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की वजह से होती है। ये संकेत भी नहीं करती है कि बच्चे कमजोर या आलसी है?

फेडरल महोदय ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "सीखने की निर्योग्यिता से तात्पर्य मौखिक अथवा लिखित भाषा सीखने में, मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया को समझने के क्रम में आने वाली विकृति से है जो व्यक्ति के श्रवण, सोच, वाक, पठन, लेखन एवं अंकगणित सम्बन्धी गणना को पूर्ण या आंशिक रूप से प्रभावित करता है। इसके अंतर्गत इंद्रिय परक विकलांगता, मस्तिष्क–क्षति, अल्परूप में असामान्य दिमागी प्रक्रिया (Minimal Brain Dystanction), डिस्लेक्सिया और विकासात्मक वाचाधात (Developemental Aphasia) सरीखी स्थितियाँ शामिल है। इस शब्द मे ऐसे बच्चे सम्मिलित नहीं हैं जो दृष्टि, श्रवण या गामक विकलांगता, मानसिक मंदता, संवेगात्मक विक्षोभ या वातावरण, सांस्कृतिक या आर्थिक दोष के परिणामस्वरूप होने वाली सीखनासम्बन्धी समस्या से पीड़ित है।

अमेरिका की सीखनाअक्षमता की राष्ट्रीय संयुक्त समिति (The National joint Paint Committcee for Learning Disabilities) ने वर्ष 1944 मे सीखनाअक्षमता को सामान्य तरीके से परिभाषित किया है– "यह एक ऐसा पद है जो सुनने, बोलने, पढ़ने, लिखने, तर्क करने, या गणितीय क्षमता और Acquisition में कठिनाई सरीखे विषय समूह विकृति को दिखाते है''।

पिछले कई दशकों से 'सीखने में अक्षमता' विषय पर काफी अध्ययन किया गया है लेकिन सामान्य जनों में आज भी इस विषय को लेकर जानकारी व जागरूकता की कमी है। भारत में 13–14 बच्चे किसी न किसी प्रकार की सीखने की अक्षमता से ग्रस्त होते हैं।

हम अपने आस–पास के वातावरण में अक्सर ऐसे बच्चे से सामना करते हैं जो विभिन्न प्रकार के लक्षण लिए हुए होते है।

❖ सीखने की योग्यता–निर्योग्यता वाले बच्चे की पहचान :

- बच्चा अपना काम संगठित (Organise) करने में कठिनाई महसूस करता है।
- प्रश्नों के उत्तर देने में अधिक समय लगता है।
- समय बताने, दिन, महीने व ऋतुओं के नाम का उल्लेख करने में, गणित की सारणी याद करने मे कठिनाई का अनुभव करते हैं।
- कक्षा या घर, दिए गए आदेशों के प्रति गंभीर नहीं होते हैं।
- मौखिक निर्देशों को अधिक देर तक याद नहीं रख सकते हैं।
- दाएँ व बाएँ को लेकर भ्रम की स्थिति।
- क्षणभर के लिए कक्षा में शांत होकर नहीं बैठ सकते हैं।
- पढ़ते समय पक्तियाँ छोड़कर अथवा एक ही पंक्ति को बार–बार पढ़ते हैं।
- वर्त्तनी को अलग–अलग पढ़ने के बाद भी उससे शब्द बनाकर उसका उच्चारण करने में कठिनाई महसूस करते हैं।
- शब्दों को विपरीत क्रम में पढ़ता है जैसे 'कल' को 'लक'।
- शब्दों को छोटा बनाकर या गलत क्रम मे उच्चारण करते हैं, जैसे– सडेनली को सेनली, रिमेम्बर को रेम्बर, प्लेट को ऐक्ट आदि।
- अंग्रेजी के बड़े एवं छोटे अक्षरों को गलत क्रम में उच्चारण करते हैं।
- बहुत ऊँचे या बहुत धीमे स्वर में बोलते हैं।
- बहुत तेज या बहुत धीमा पढ़ते हैं।
- अंको को गलत पढ़ते हैं जैसे– 6 को 9, 3 को 8, 36 को 63 आदि।
- बीच के अक्षर छोड़ देते हैं जैसे–शावक को शाक आदि।
- विराम चिन्ह का प्रयोग नहीं करते हैं।
- लिखने मे हाँसिया नहीं छोड़ते हैं।
- उच्चारण करने में सही अक्षर नहीं लिख पाते हैं।
- पेंसिल अथवा पेन को अव्यवस्थित तरीके से पकड़ते हैं इत्यादि।

वैसे तो इन अक्षमताओं के होने का स्पष्ट कारण अभी नहीं खोजा जा सका है, लेकिन गर्भावस्था के दौरान सही पोषण, माताओं के द्वारा ध्रुमपान या अन्य किसी प्रकार के नशा का सेवन करने के कारण शिशु में Neurological Disorder पैदा हो जाते है।

सीखने की क्षमता की पहचान होना बच्चे के जीवन के लिए अति महत्वपूर्ण है। सामान्यतः इनकी समय पहचान न होने के कारण बच्चे के भविष्य एवं रोजगार के अवसर पर प्रभाव पड़ता है। किसी भी तरह की सीखने की अक्षमता बच्चे के आत्म–सम्मान और आत्मविश्वास को कम करती है जिससे तनाव, चिन्ता, और दब्बूपन उत्पन्न होता है। अभिभावकों व अध्यापक को इस विषय में जागरूक रहने की आवश्यकता है।

अगर अभिभावक व अध्यापक जागरूक नहीं हैं तो बच्चा ज्यादा तनाव में घिर जाता है। अभिभावक समझते हैं कि पढ़ाई मुश्किल होने के कारण बच्चे ा सीख नहीं पा रहा है। बच्चे ा घंटो पढ़ता रहता है। ट्यूशन भी पढ़ता है।विद्यालय में भी पूरा प्रयास करता है फिर भी परीक्षा परिणाम अपेक्षा से कम रहता है क्योंकि बच्चे की कठिनाई कोई समझ नहीं पाता है। अभिभावको एवं अध्यापकों को "सीखने की कठिनाई" व "सीखने की अक्षमता" का अन्तर स्पष्ट न होना समस्या को बढ़ा देता है।

बच्चे को गणित, विज्ञान या जिस विषय में उसकी अक्षमता है उसकी जगह कोई दूसरा विषय जैसे– संगीत, खेलकूद, चित्रकला आदि दिया जा सकता है। लेकिन माता–पिता यह स्वीकार नहीं कर पाते तथा बच्चे पर अधिक दबाव बढाते रहते है।

❖ सीखने की निर्योग्यता का वर्गीकरण :–

सीखने की योग्यता–निर्योग्यता को कई आधारों पर विभेदीकृत किया गया है। ये सारे विभेदीकरण अपने उद्देश्यों के अनुकूल है इनका प्रमुख विभेदीकरण ब्रिटिश कोलम्बिया (2011) एवं बिट्रेन के शिक्षा मंत्रालय के द्वारा प्रकाशित पुस्तक सपोर्टिंग स्टूडेन्ट विथ लर्निंग डिशएविलिटीजः गाइड फॉर टीचर्स में दिया गया है। जो निम्नलिखित है :–

❖ विभिन्न प्रकार के सीखने की योग्यता– निर्योग्यताएँ

सीखने की योग्यता–निर्योग्यता	विकार से उत्पन्न समस्या	विकार
	• डिस्लेक्सिया	पढ़ने सम्बन्धी विकार
	• डिस्ग्राफिया	लेखन सम्बन्धी विकार
	• डिसकैलकूलिया	गणितीय कौशल सम्बन्धी विकार
	• डिस्पैक्सिया	लेखन व चित्रांकन सम्बन्धी

		विकार
	• डिसऑर्थाग्ताफिया	वर्त्तनी सम्बन्धी विकार
	• ऑडिटरी प्रोसेसिंग डिसार्डर	श्रवण सम्बन्धी विकार
	• विजुअल परसेप्शन डिसार्डर	दृश्य प्रत्यक्षण क्षमता सम्बन्धी विकार

इस तरह की समस्या वाले बच्चे मौजूद हैं लेकिन औपचारिक या स्कूली शिक्षा की शुरूआत के बाद से यह संख्या काफी बढ़ गयी है। ऐसे बच्चे का उपहास किया जाता है। शिक्षक व अन्यों के द्वारा इनपर दण्ड के उपाय लागू किए जाते हैं। इस तरह की समस्या के जाँच के लिए निम्न उपकरणों की चर्चा की जा रही है।

❖ **इस समस्या के निदान हेतु जाँच के उपकरण :**	
जाँच उपकरण	• Information Reading Inventory • Informal Graded Word • Informal Arithmeatic Test • Veshter Intelligence, School for Children • Stanfard Vinnet Intelligence, School • P-Body Picture Vocabulary Test • Vinland Social Maturity • Betroit Test of Learning Aptitude

❖ शैक्षिक कार्यक्रम :–

सीखने के अक्षमताग्रस्त बच्चे के शैक्षिक पुनर्वास के लिए शिक्षण–सीखनासम्बन्धी कई तरह के प्रावधान उपलब्ध हैं। ये प्रावधान हैः–

- दिवसीय स्कूल (Day School)
- सामान्य विद्यालय मे विशिष्ट कक्षाऐं।
- समन्वित शिक्षा – (Integrated Education)सीखनाअक्षम शिक्षार्थियों को मुख्य धारा में लाना।

- उपचारात्मक शिक्षण रणनीतियाँ – Remedlial Teaching Strategies इसके कई सोपान है।
  – प्रक्रिया प्रशिक्षण – (Process teaching)
  – बहु संवेदी आयाम – (Multi Sensory Approaches)

– संरचना व उद्दीपन घटाव – (Structure and Stimulus Reduction)

– औषधीय प्रयोग – (Medication)

– संज्ञानात्मक प्रशिक्षण – (Cognitive Training)

– व्यवहार संशोधन – (Behaviour Modification)

– प्रत्यक्ष अनुदेशन – (Direct Instruction)

– अकादमिक रणनीतियॉ – (Academic Strategies)

– हस्त लेखन – (Hand Writing)

– कम्पोजिशन – (Composition)

– पाठ की समझ – (Comprehension of Lession)

– अंकगणितीय रणनीति – (Arithemetic Strategy)

– समस्या का पाठ

– गणना करना

– गणना प्रारंभ करना

– अंतिम अंक लिखना

– रंगीन खल्ली का प्रयोग करना

❖ सीखने की अक्षमताग्रस्त बच्चे की शिक्षा में अध्यापक की भूमिका

- कक्षा प्रबन्धन करना।
- बैठने की व्यवस्था करना।
- बच्चे के कार्यकलापों का मूल्यांकन करना।
- बच्चे ों को प्रोत्साहित करने के लिए अधिक से अधिक विकल्प मुहैया कराना।
- आत्मनिर्भर बनने तथा छोटे–छोटे समूह में कार्य करने की प्रेरणा देना।
- बच्चे ोंके कर्तव्यों, नियंत्रण एवं उत्तरदायित्वों को बढ़ावा देना।
- औपचारिक तथा अनौपचारिक बैठक करना।
- बच्चे की प्रगति का मूल्यांकन।

❖ अन्य कक्षाओं में निम्नलिखित बातों को प्रयुक्त किया जाना चाहिएः–

- नियोजित कार्यक्रमों को बताया जाए।
- उदासीन बच्चे को मध्य में बैठाया जाए।

- साथियों के द्वारा पढ़ने का उपयोग करें तथा अधिगम–असमर्थ बच्चे को अध्यापन का कार्य करने को दिया जाए।
- पढ़ाए गए पाठ्यक्रम के अनुसार गृहकार्य दिया जाए।
- बच्चे का माता पिता/अभिभावको के साथ धनिष्ठ सम्बन्ध होने चाहिए।
- बच्चे की आवश्यकतानुसार कार्यक्रम बनाए जाए।
- कार्यों का विश्लेषण किया जाए तथा बच्चे के सीखने हेतु एक क्रम का अनुसरण करवाया जाए।

❖ सीखने के अक्षमता ज्ञात बच्चे के शिक्षा में संसाधन के रूप में शिक्षक

- स्कूली वातावरण को सीखना अक्षमता ग्रस्त बच्चे के अनुरूप में बनाए।
- भारी एवं खतरनाक सामानो को बच्चे ों की पहुँच से दूर रखा जाए।
- वर्ग कक्ष को ध्वनि प्रदूषण मुक्त रखना।
- अनुदेशन कार्यक्रम का निर्माण करना।
- रूटीन आधारित पाठ्यचर्या का निमीण करना।
- उपचारात्मक अकादमिक गतिविधियों का आयोजन करना।
- विशिष्ट शिक्षण तकनीकी से बच्चे को पढ़ाना।
- शैक्षिक विषय वस्तु एवं अन्य सामग्री को सामान्य एवं उत्साह वर्द्धक बनाना।
- रचनात्मक कार्य करते समय रंगों का प्रयोग करना।
- बच्चे को शैक्षिक खेल की सुविधा देना।
- बच्चे को बहुसंवेदी आयामों के जरिए शिक्षित करना।
- प्रत्यक्ष अनुदेश पद्धति से शिक्षण अधिगम।

❖ सीखने का एवं सीखने के लिए आकलन :

निर्माणात्मक आकलन को सीखने के लिए आकलन भी कहा जाता है। इस प्रकार के आकलन का मुख्य प्रयोजन शिक्षार्थियों को वह रचनात्मक प्रतिक्रिया प्राप्त करने मे सक्षम बनाना है जो उन्हें बेहतर सीखने और प्रभावी प्रगति करने में सक्षम बनाता है। ऐसी प्रतिक्रिया आम तौर पर शिक्षकों द्वारा दी जाती है।

- 'सीखने का आकलन' आकलन व मूल्यांकन के व्यवहारवादी तथा योगात्मक प्रकृति की ओर संकेत करता है। इसके अन्तर्गत बच्चों का सीखना उपलब्धि का आकलन किया जाता है बच्चे क्या सीखता है? तथा कितना सीखता है? बच्चे द्वारा पूर्व निर्धारित सीखनाउद्देश्यों तथा अपेक्षित सीखना परिणामों की पूर्ति किस सीमा तक हुई है? इसका बच्चे के सीखने के

प्रक्रिया पर कोई नियंत्रण नहीं होता। यह आकलन यह बताने में असमर्थ होता है कि बच्चे ा कैसे सीखता है? उसके सीखने की शैली क्या है? वह अपने किस विशिष्ट क्षमता का उपयोग सीखने के लिए करता है।

'सीखने का आकलन' मुख्यतः बच्चे के सीखने के संज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों का आकलन करता है। इससे सीखने के भावात्मक आयाम के आकलन की समुचित व्यवस्था नहीं होती। साथ ही साथ यह पाठ्य–सहगामी क्रियाओं के आकलन की भी उपेक्षा करता है।

'सीखने का आकलन' परम्परागत परीक्षा पद्वति को बढावा देता है जिससे बच्चे में पढ़ने समझने की प्रवृति तथा आकलन तथा मूल्यांकन की प्रक्रिया के प्रति भय का भाव बना रहता है। इसमें शैक्षणिक गतिविधियों में गुणात्मक सुधार के लिए आवश्यक प्रतिपुष्टि का समुचित अवसर उपलब्ध नहीं होता।

- वही दूसरी ओर 'सीखने के लिए आकलन' आकलन व मूल्यांकन के निर्माणवादी तथा रचनात्मक एवं निदानात्मक प्रकृति की ओर संकेत करता है। जिसके अंतर्गत बच्चे के सीखनाउपलब्धि के साथ–साथ उनके सीखने की प्रक्रिया पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यह बताता है कि बच्चा क्या सीखता है? कितना सीखता है? और कैसे सीखता है? उसके सीखने का तरीका या शैली क्या है? सीखने की प्रक्रिया मे वह किन विशिष्ट क्षमताओं तथा ज्ञान के स्रोतों को उपयोग मे लाता है? उसके विचार तथा स्पष्टीकरण में कितनी नवीनता तथा मौलिकता है? इससे यह भी पता चलता है कि बच्चे ा यदि सीख नहीं पाता तो क्यों? शिक्षण सीखनाप्रक्रिया में क्या सुधार लाए जाए? जिससे कक्षा का प्रत्येक बच्चा सीख सकें।

यह ऐसी व्यवस्था की ओर इंगित करता है जो वस्तुतः सीखने के लिए आयोजित की जाती है। यहाँ सीखने एवं आकलन की गतिविधियों के बीच सह सम्बन्ध होता है यानि आकलन सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग होता है क्योंकि आकलन द्वारा प्राप्त तथ्य बच्चे के सीखने की युक्तियों में सुधार लाते है। ताकि प्रत्येक बच्चा प्रभावशाली ढंग से सीख जाए।

'सीखने के लिए आकलन' प्रक्रिया में वैकल्पिक आकलन उपकरणों तथा युक्तियों तथा शैक्षणिक गतिविधियों में आवश्यक सुधार लाते है जिससे बच्चे के सीखने के आकलन के लिए उनके रूचि तथा अभिक्षमता के अनुरूप विकल्प चयन करने का अवसर प्राप्त होता है।

ये बच्चों के सीखने तथा विकास का सतत् आकलन करता है जिससे बच्चे के सीखने मे क्रमशः संवर्धन तथा विकास के लिए आवश्यक प्रतिपुष्टि नियमित रूप से प्राप्त होती है साथ ही साथ इसमें बच्चे के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का आकलन भी सुनिश्चित होता है।

यह आकलन (सीखने के लिए आकलन) बच्चे का परीक्षा के प्रति भय को कम करता है क्योंकि उनके लिए उनके रूचि तथा अभिक्षमता के अनुरूप वैकल्पिक आकलन की व्यवस्था होती है तथा उनके विषय–सम्बन्धी सीखने का आकलन पाठ्यक्रम के छोटे–छोटे अंशो मे किया जाता है। साथ ही साथ यह बच्चे में रटने की प्रवृति के स्थान पर विचारशील चिंतन की क्षमता का विकास करता है।

❖ समेकन : सीखना एक सतत् प्रक्रिया है।

जो जीवन पर्यंत चलती रहती है। सीखने के द्वारा ही व्यक्ति अपने जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में आने वाली समस्याओं को हल कर लेता है। बच्चे के सीखने की सुगम एवं सुग्राह्य बनाने हेतू बाल–विकास की अवधारणा एवं संप्रत्यय के अध्ययन की आवश्यकता है। परिपक्वता, सीखने की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण कड़ी है जिससे सीखना प्रभावित होकर बच्चे के ज्ञानार्जन तथा कौशलों के विकास के रूप में स्थायित्व पाता है। शिक्षक का यह दायित्व है कि वह बच्चे को इस प्रकार सीखनासंप्राप्ति में सहायता करें कि वह सीखे हुए कौशलों का उपयोग नई परिस्थिति में कर सकें।

❖ अभ्यास के प्रश्न :–

- बाल–विकास क्या है? बाल–विकास के अध्ययन के कारण शिक्षक को किस प्रकार की सहायता प्राप्त हो सकती है?
- बाल–विकास के सभी अवस्थाओं की चर्चा विस्तार पूर्वक करें।
- बच्चे के विकास को प्रभावित करने वाले कारकों का सोदाहरण चर्चा करें।
- सीखना क्या है? वर्णन करें।
- बाल–विकास की विभिन्न अवस्थाओं व सीखने में क्या अंतर्सम्बन्ध है?
- बाल–विकास के विभिन्न आयामों की चर्चा करते हुए यह सुनिश्चित करें कि ये सीखने से कैसे अंर्तसम्बन्धित है?
- परिपक्वता क्या है? सीखना परिपक्वता को किस प्रकार प्रभावित करती है?
- बच्चे के वैयक्तिक–विभिन्नता से क्या समझते है?
- सीखने की योग्यता एवं निर्योग्यता क्या है?
- सीखने के अक्षमताग्रस्त बच्चे की पहचान किस प्रकार करेंगे। विस्तार से बतावें।
- सीखने के अक्षमताग्रस्त बच्चे के लिए चलाए जा रहे विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों की चर्चा करें।

- सीखने की अक्षमताग्रस्त बच्चे की शिक्षा में शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका किस प्रकार सुनिश्चित करेंगे।
- 'सीखने का आकलन' से क्या आशय है वर्ग–कक्ष से समायोजित करते हुए कम से कम पांच उदाहरणों की चर्चा विस्तार से करें।
- 'सीखने के लिए आकलन' क्या है? यह आपके लिए वर्ग–कक्ष के संयोजन में किस प्रकार सहायक है सोदाहरण चर्चा करें।
- 'सीखने का आकलन' एवं 'सीखने के लिए आकलन' बच्चे के सीखने को किस प्रकार प्रभावित करते है?

संदर्भ–सूची

- आधुनिक सामान्य मानोविज्ञान : डॉ० अरूण कुमार सिंह, डॉ० आशीष कुमार सिंह
- शिक्षा मनो विज्ञान : प्रो रमण बिहारी लाल, डॉ० राम निवास मानव
- शिक्षण व सीखनाः डॉ० ज्योत्स्ना चौहान, डॉ० पी०डी० पाठक
- मानसिक मन्द बालक : अवधारणा पहचान एंव पुनर्वास, डॉ० मधुलिका शर्मा
- शिक्षा मनोविज्ञान : डॉ० एस० के मंगल

इकाई–03

सीखने के व्यवहारवादी एवं सूचना प्रसंस्करण सिद्धांतों की समझ

प्रस्तावना

आप बच्चों के सामान्य और एक अन्य व्यक्ति के रूप में विकास से परिचित हो सकेंगे आपको अपने विद्यार्थियों को समझने में सहायता मिलेगी इसके पूर्व हमने सीखना और सीखने के कारक, सीखने के कठिनाई शिक्षा और सीखने के बारे में चर्चा की है। सीखना एक जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है सीखने के द्वारा ही व्यक्ति अपने जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में आनेवाली समस्या को हल कर सकता है। मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान बनाने का श्रेय व्यवहारवाद को जाता है। व्यवहारवाद में चेतना केवल कल्पना मात्र है और व्यवहार पर बल दिया जाता है। व्यवहारवाद के संस्थापक वाट्सन महोदय है। इसका उद्भव संक्रियावाद और संरचनावाद के विरोध में हुआ। मनोविज्ञान पहले आत्मा का विज्ञान माना जाता था और फिर मन का विज्ञान पुनः चेतना का विज्ञान तत्पश्चात व्यवहार के विज्ञान के रूप मे परिणित हो गया।

आधुनिक मनोविज्ञान मस्तिष्क और व्यवहार का सम्बन्धित अध्ययन करता है। वाट्सन ने मनोविज्ञान को परिभाषित करते हुए कि मनोविज्ञान प्राकृतिक विज्ञान का वह क्षेत्र है, जो मानव व्यवहार (कथनी–करनी, अर्जित–अनार्जित) को अपने अध्ययन का विषय मानता है।

विशिष्ट उद्देश्य

इस ईकाई के अन्तर्गत उद्देश्य का निर्धारण निम्नलिखित है–

1. सीखने के सम्प्रत्यय को समझ पायेगें।
2. सीखने के व्यवहारवादी दृष्टिकोण को जान पायेंगे।
3. व्यवहारवाद के विषय में ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
4. अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत को समझ पायेंगे।
5. सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत को समझ पायेंगे।
6. अनुक्रिया अनुबंधन और सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत में अन्तर को जान पायेंगे।
7. व्यवहारवादी सीखना सिद्धांतों के शैक्षिक निहितार्थ जान पायेंगे।
8. व्यवहारवादी आधारभूत मान्यताओं को जान पायेंगे।

सीखने की प्रकृति

सीखने की प्रकृति के विषय में पढ़ने से पूर्व सीखने के विषय में हम जानेंगे– 'सीखना' एक सार्वभौमिक (Universal) और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। सीखने की सार्वभौमिकता और निरंतरता यह सूचित करती है कि मनुष्य जीवन पर्यन्त सीखता है। अर्थात सीखना क्रिया प्रत्येक समय प्रत्येक स्थान पर चलती रहती है। सामान्यार्थ में व्यवहार में होने वाली परिवर्तन ही सीखना है किन्तु क्या व्यवहार में होने वाली सभी प्रकार का परिवर्तन सीखना है? इस संदर्भ में अमेरिकन मनोविज्ञानिक 'अर्नेस्ट हिलगर्ड' द्वारा किये गये प्रश्न दृष्टव्य है–

1. क्या बालको में उत्पन्न अस्थायी परिवर्तन सीखना है?
2. क्या अनुभव से लाभान्वित होना सीखना है?
3. क्या सभी प्रकार के परिवर्तन सीखना कहलाते है?

इन प्रश्नों के संदर्भ में कहा जा सकता है कि अस्थायी परिवर्तन सीखना नहीं होता क्योंकि थकान, दवा, शराब एवं मादकतत्व के प्रभाव द्वारा उत्पन्न व्यवहार में परिवर्तन सीखने की श्रेणी में नहीं आता है।

इस प्रकार सभी सार्थक अनुभवों और निरर्थक अनुभवों को सीखना नहीं माना जा सकता क्योंकि आधिकांशतः सीखने का संबंध सार्थक अनुभवों से होता है। बालक के जीवन में अनेक उतार–चढ़ाव परिवर्तन आते है। परन्तु उन सभी परिवर्तनों को सीखना नहीं कहा जा सकता है।

मनोविज्ञान में सीखने से तात्पर्य उन्हीं परिवर्तनों से होता है जो अभ्यास और अनुभूति के फलस्वरूप होते है। अतः कहा जा सकता है कि सीखना व्यक्ति के बाहर प्रकट होने वाली मूर्त या स्पष्ट घटना न होकर एक आन्तरिक प्रक्रिया है। जो व्यवहार सम्बन्धी क्षमताओं में अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन के रूप में परिलक्षित होती है।

हम निम्नलिखित रेखाचित्र (Flowchart) से इसे विस्तार पूर्वक जान सकते है–

उपरोक्त रेखाचित्र द्वारा हम जान पाए कि 'सीखना' एक तरफ संज्ञानात्मक व्यवहार के अन्तर्गत, बौद्धिक स्तर, ज्ञान स्तर चिन्तन स्तर तथा तार्किक स्तर पर व्यवहार को प्रभावित करता है वही भावात्मक व्यवहार के अन्तर्गत आत्मा, रूचि अभिवत्ति स्तर पर व्यवहार को प्रभावित करता है वही मनोगत्यात्मक व्यवहार में शरीर, कौशल, दक्षता स्तर से व्यवहार को प्रभावित करता है।

❖ **संज्ञानात्मक :–**

ज्ञानइन्द्रियों के माध्यम से किसी भी विषय–वस्तु को संज्ञान में लेना होता है।

❖ **भावात्मक :–**

उत्तेजना की ऐसी अवस्था जो चेहरे या हाव भाव से परिलक्षित होता है।

➢ **मनो–गत्यात्मक**– मन–मास्तिक पर आधारित होने वाली शारीरिक गतिविधियों को मनोगत्यात्मक कहते है।

चित्र द्वारा उदाहरण प्रस्तुत है–

उदाहरण सं० – 01

संज्ञानात्मक व्यवहार

❖ यहाँ एक बच्चा गुलाब का पीला फूल देख रहा है। जिससे उसमें आकार–प्रकार, विभेदीकरण, तुलना, तर्क, चिन्तन इत्यादि मानसिक क्रिया से संज्ञानात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

चित्र सं० – 02

भावात्मक व्यवहार

❖ यहाँ एक बच्चे ाा गुलाब का पीला फूल देखर उसपर मोहित (प्रेम) होता है। जिससे उसके फूल के प्रति मोहित (प्रेम) होना उसके भावात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

चित्र सं० – 03

मनोगत्यात्मक व्यवहार

❖ यहाँ एक बच्चे द्वारा पीला गुलाब का फूल तोड़ना सूक्ष्म गत्यात्मक (Fine motor) तथा फूल तोड़कर भागना स्थूल गत्यात्मक (Gross Motor) के द्वारा मनोगत्यात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

उदाहरण सं० – 02

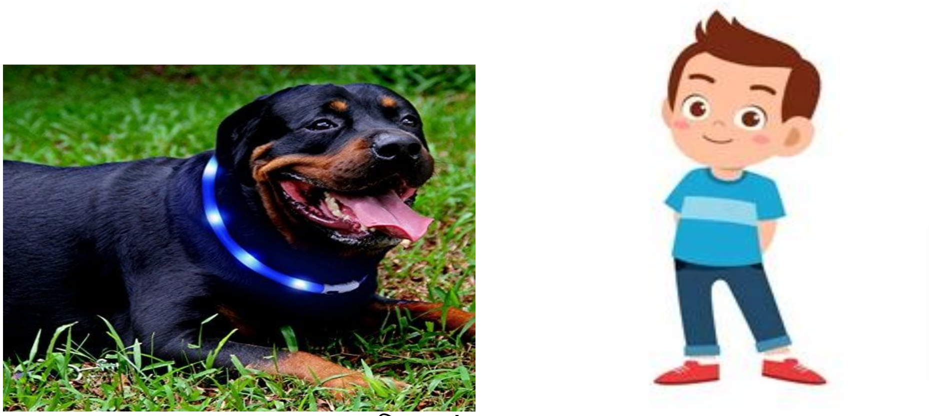

चित्र सं० – 01

संज्ञानात्मक व्यवहार

Cognitive Behaviour

❖ यहाँ एक बच्चे द्वारा कुत्ते को देखना उसमें आकार–प्रकार, विभेदीकरण, तुलना, तर्क, पहचान चिन्तन इत्यादि बौद्धिक क्रिया को दर्शाता है।

चित्र सं० – 02

कुत्ते को देखकर डरने का फोटो

भावात्मक व्यवहार

Affactive Behaviour

❖ यहाँ एक बच्चा द्वारा कुत्ते को देखकर डर जाता है यह उसके भावात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

कुत्त्ते को देखकर भागने का फोटो

मनोगत्यात्मक व्यवहार

Psychomotor Behaviour

❖ यहाँ बच्चे द्वारा कुत्ते को देखर भागना उसके मनोगत्यात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

सीखने की प्रकृति निम्न है–

- सीखना परिवर्तन है।
- सीखना सार्वभौमिक है।
- सीखना विकास है।
- सीखना अनुकूलन है।
- सीखना उद्देश्यपूर्ण है।
- सीखना अनुभव है।
- सीखना विवेकपूर्ण है।
- सीखना सक्रिय है।
- सीखना व्यक्तिगत है।
- सीखना खोज है।
- सीखना स्थानान्तरणीय है।
- सीखना वातावरण की उपज है।
- सीखना व्यवहार में अपेक्षाकृत स्थायी है।

सीखने की प्रकृति जानने के बाद क्या आप सीखने की कुछ विशेषतायें बता सकते हैं?

उन विशेषताओं को लिखिए और अपने उत्तर का मिलान नीचे दी गई विशेषताओं से कीजिए।

1. छोटे–छोटे प्रक्रिया तत्वों द्वारा व्यवहार का निर्माण होता है तथा वस्तुनिष्ठ वैज्ञानिक विधियों के माध्यम से इन तत्वों का पता लगाया जा सकता है।
2. व्यवहारवाद यह भी मानता है कि व्यवहार रचना मूलतः ग्रन्थियों के श्रवण से (Glandulal Secretion) और पेशीय ग्रथियों (Muscular Movement) द्वारा होती है।
3. व्यवहारवाद की तृतीय मान्यता है कि उद्दीपक जितना तीव्रता से प्राप्त होगा अनुक्रिया उतनी अविलम्ब होगी। अर्थात प्रत्येक अनुक्रिया के लिए पर्याप्त उद्दीपन आवश्यक है।
4. व्यवहारवाद चेतना को एक संकल्पना मानता है और यदि चेतना है भी तो इसका वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं, यह कहकर चेतना का खण्डन करता है। यह अपने व्यवहार–विज्ञान को मनोविज्ञान कहते हुए मनोवाद का विरोध करता है।

❖सीखने की विशेषतायें–

(i) सीखना एक आन्तरिक प्रक्रिया है जिसका अनुमान प्राणी में हुए व्यवहार परिवर्तन के आधार पर किया जाता है।

(ii) सीखने के लिए व्यवहार या निष्पादन क्षमता में अपेक्षाकृत स्थायी परिवर्तन का होना आवश्यक है।

(iii) सीखने में निहित व्यवहार परिवर्तन स्पष्ट या अस्पष्ट या अंशतः स्पष्ट हो सकते है।

(iv) सीखना के अन्तर्गत घटित व्यवहार में अपेक्षाकृत अधिक विचलन पाया जाता है।

(v) सीखने के अन्तर्गत व्यवहार का परिमार्जन होता है। किन्तु यह परिमाार्जन सदैव सकारात्मक हो यह आवश्यक नहीं अर्थात हम अच्छी बातें भी सीखते है और बुरी बातें भी तो परिमार्जन सकारात्मक या नकारात्मक भी हो सकता है।

❖सीखने की परिभाषा –

"नये ज्ञान और नई अनुक्रियाओं को ग्रहण करने की प्रक्रिया सीखना है– वुडवर्थ"

(The Process of Acquiring new knowledge and new response is the process of learning)

"आदतों, ज्ञान एवं अभिवृत्तियों को ग्रहण करना सीखना है– क्रो एण्ड क्रो "

(Learning is the acquisition of habits knowledge end attitude)

व्यवहार से व्यवहार में परिवर्तन सीखना है।– जे० पी० गिलफोड

(Learning is any change in behavior resulting from behaviour)

सीखना अनुभव द्वारा व्यवहार का शोध है– गेट्स (Learning is modification of behavior through experience)

❖व्यवहारवादी सीखने की परिभाषा :–

❖ व्यवहारवादी सीखने की परिभाषा :–

- सीखना व्यवहार में परिवर्तन अथवा रूपान्तरण है।
- सीखना अन्तर्मुखी अथवा बहिमुंखी अथवा दोनो प्रकार के व्यवहार, जो कि ज्ञानात्मक, क्रियात्मक, भावनात्मक क्षेत्रों में हो सकता है।
- सीखना अनुबंधित प्रतिवर्त बनाने की क्षमता है– पॉवलॉव
- सीखना प्रतिक्रिया का रूपान्तरण अथवा प्रतिक्रिया की सम्भावना में परिर्वतन है– स्कीनर

- सीखना उपयुक्त प्रतिक्रिया का चयन करना तथा उसे उद्दीपक से सम्बन्धित करना है— थार्नडॉइक

❖सीखने सम्बन्धी विभिन्न दृष्टिकोण :—

सीखने से सम्बन्धित विभिन्न दृष्टिकोण के विषय में संक्षिप्त चर्चा के बाद हम व्यवहारवादी दृष्टिकोण पर बात करेंगे।

(i) प्रयास और त्रुटि दृष्टिकोण (Trial and Error View)

इनका मानना है कि व्यक्ति कई प्रयास करता है कई त्रुटियाँ भी करता है जिनके फलस्वरूप सीखने की स्थिति उत्पन्न होती है। इसका प्रतिपादन अमेरिकी मनोवैज्ञानिक व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक थार्नडाइक ने किया।

(ii) गेस्टाल्ट दृष्टिकोण (Gestalt View)

इसके अनुसार सीखने का आधार सम्पूर्ण परिस्थिति/ढ़ाँचे का अवलोकन करके ज्ञान प्राप्त करना है अर्थात इनका मानना है कि सम्पूर्ण स्थिति के प्रति क्रिया करना ही सीखना होता है। इसका प्रतिपादन वर्दीमर, कोहलर, कोफ्का है।

(iii) होरमिक दृष्टिकोण (Hormic View)

यह लक्ष्य केन्द्रित स्वरूप पर बल देता है,अर्थात् सीखने की क्रिया लक्ष्य को सम्मुख रखकर सम्पन्न की जाती है।

❖सीखने का व्यवहारवादी दृष्टिकोण—

❖ सीखने का व्यवहारवादी दृष्टिकोण—

व्यवहारवाद में सीखने की महत्वपूर्ण भूमिका मानी गयी है। जहां 'मैक्डूगल' ने मानव और पशुओं के सभी व्यवहारों को सहजवृति की उपज माना है। वही 'वाट्सन' ने सहजवृत्ति को एक संकल्पना मानते हुए इसके अस्तित्व को अस्वीकार किया है।

सहजवृत्तियों (Instinct) से इनकार करने का आशय यह है कि वाट्सन ने व्यवहारों के प्रकट और विकसित होने का स्त्रोत सीखने को माना है।

किन्तु 'वाट्सन' के सीखने सम्बन्धी विचार कुछ अव्यास्थित रह गये क्योंकि उन्होंने किसी सुसंगठित सीखने के सिद्धांत को प्रस्तुत नहीं किया है। उन्होंने

बारम्बारता, अभिनवता और समीपता पर बल दिया और पॉवलॉव के अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत को पूर्णमान्यता दी है। किन्तु यदि हम नवव्यवहारवाद की ओर बढ़ते है तो देखते है कि सीखने सम्बन्धित कई सिद्धांतों का व्यवस्थित प्रतिपादन हुआ जिनमें— स्किनर का सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत, 'हल' का आवश्यकता पूर्ति सिद्धांत, एडविन गुथरी का समीपता सिद्धांत, एडवर्ड टोलमैन का चिह्न सिद्धांत' अल्बर्ट बंडुरा का सामाजिक सीखनासिद्धांत आदि।

❖सीखने के व्यवहारवादी सिद्धांत :—

व्यवहारवाद के अन्तर्गत कुल सम्प्रत्ययों पर ही बल दिया गया परन्तु नव व्यवहारवाद में उनके सिद्धांतो का प्रतिपादन हुआ जिनके माध्यम से सीखने को स्पष्ट किया गया पॉवलॉव और स्किनर के सिद्धांतो को हम विस्तार से आगे समझगें यहाँ कुछ अन्य सिद्धांतो के विषय में संक्षिप्त चर्चा करते है।

व्यवहारवादी सीखने के सिद्धांत

क्र. स.	सिद्धांत	प्रवर्तक	प्रयोग	विशेष बातें
1	प्रयत्न एवं भूल का सिद्धांत / उद्दीपन अनुक्रिया सिद्धांत / सीखनाबंधसिद्धांत S-R Theory	एडवर्डली थॉर्नडाइक	बिल्ली	यह सिद्धांत अभ्यास द्वारा सीखने पर बल देता है। यह गणित और विज्ञान के लिए उपयोगी सिद्धांत है। इसमें त्रुटियों का निराकरण पर बल दिया जाता है। यह सिद्धांत समस्या का हल स्वयं को ही खोजने के लिए करता है।
2	अंतदृष्टि या सूझ का सिद्धांत / गेस्टाल्ट सिद्धांत	वर्दीमर कोफ्का कोहलर	वनमानुष सुल्तान चिपांजी	यह सिद्धांत समस्या का हल स्वयं को ही खोजने के लिए करता है।
3	प्रबलन का सिद्धांत / न्यूनतम् आवश्यकता का सिद्धांत / विक्षिक सिद्धांत	सी.एल.हल	चूहा	इस सिद्धांत के व्यक्तिगत शिक्षा पर बल

4	अनुकरण द्वारा अधिगम	हेगटटी		यह सिद्धांत है कि सीखनाकी प्रक्रिया अनुकरण द्वारा भी पूर्ण की जा सकती है बच्चे I जैसे देखता है वैसा ही करने का प्रयास करता है।
5	सीखनाका प्राकृतिक दशा सिद्धांत/क्षेत्र सिद्धांत	कर्टलेविन		यह सिद्धांत कहता है कि शिक्षको द्वारा बच्चे`को उनकी योग्यता और शक्ति के अनुसार उपयुक्त मनो वैज्ञानिक वातावरण उपलब्ध कराना चाहिए। साथ ही प्राप्त उद्देश्यों को प्रभावी तरीके से निर्देशित किया जाना चाहिए। इस सिद्धांत के तहत व्यवहार पर जोर देते हुए अभिप्रेरणा पर जोर दिया जाता है।
6	स्थानापन्न/प्रतिस्थापन या समीपता का सिद्धांत	एडविन गुथरी		यह सिद्धांत कहता है कि शिक्षक को उत्तेजना और अनुक्रिया के बीच अधिकतम साहचर्य स्थापित करना चाहिए ताकि सीखनाकी प्रक्रिया को और अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके।
7	समाजिक सीखनासिद्धांत/ प्रेक्षणात्मक अधिगम	अल्बर्ट बंडुरा		यह सिद्धांत कहता है कि सामाजिक व्यवहारों का प्रेक्षण करता है और फिर वैसा ही व्यवहार करता है। जैसे हम टीवी पर फैशन शो य विज्ञापन देखकर यथावत व्यवहार का प्रयास करते है।

पॉवलॉव का अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत

अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत का प्रतिपादन सन् 1904 ई. में रूसी शरीर क्रिया वैज्ञानिक आई.पी. पॉवलॉव ने किया जिनका जन्म 1849 ई. में रूस में हुआ। पाचन क्रिया के ग्रंथीय स्नायविक कारको पर शोध के लिए उन्हें नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। पॉवलॉव 'अनुबंधन' का यह सिद्धांत व्यवहारवाद की ही देन है यह सिद्धांत शरीर विज्ञान से जुड़ा हुआ है।

प्रमुख शब्दावली :—

इस सिद्धांत के अन्तर्गत प्रयुक्त शब्दो को सर्वप्रथम जान लेना आवश्यक है— अनुबंधन, साहचर्य, उद्दीपक, प्राकृतिक उद्दीपक, कृत्रिम उद्दीपक अनुक्रिया, प्राकृतिक अनुक्रिया, कृत्रिम अनुक्रिया

❖ अनुबंधन (Conditioning)

सामान्य रूप से यदि कहें तो व्यवहार को सीख लेना ही अनुबंधन है। अनुबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा उद्दीपक और अनुक्रिया के बीच एक साहचर्य स्थापित हो जाता है।

❖ साहचर्य

साहचर्य का सामान्यार्थ है 'साथ—साथ' आर्थात एक के होने पर दूसरे की निश्चितता का पता चले जैसे— जहां धुआँ होगा वहा आग होगी, इस उदाहरण में धुआँ और आग का साहचर्य दिख रहा है।

मनोविज्ञान की भाषा में यदि उद्दीपक और अनुक्रिया का साहचर्य स्थापित है तो उद्दीपक के समक्ष होने पर प्राणी अनुक्रिया अवश्य करेगा। अर्थात ऐसा नहीं होगा कि उद्दीपक है और अनुक्रिया न हो। या उद्दीपक न हो और अनुक्रिया हो जाय।

❖ उद्दीपक (Stimulus) :-

एक वस्तु, परिस्थिति, उतेजना जो कि प्राणी की अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी है उद्दीपक कहलाती है। यह दो प्रकार का हो सकता है।

➢ प्राकृतिक उद्दीपक (Natural Stimulus) :-

वह उद्दीपक जो बिना किसी पूर्व (परीक्षण) के प्राणी मे अनुक्रिया उत्पन्न करता है, प्राकृतिक उद्दीपक कहलाता है।

➢ कृत्रिम उद्दीपक (Artificial Stimulus):-

वह उद्दीपक जो यदि कुछ समय तक प्राकृतिक उद्दीपक से पूर्व बाद में दिया जाता है तो उसमें भी प्राकृतिक उद्दीपक के गुण आ जाते है और प्राणी में अनुक्रिया उत्पन्न करने में सक्षम होता है, कृत्रिम उद्दीपक कहलाता है।

- **अनुक्रिया (Response) :-**

उद्दीपक को देखकर प्राणी में उत्पन्न व्यवहार को अनुक्रिया (Response) कहा जा सकता है।

- **प्राकृतिक अनुक्रिया (Natural Response):-**

बिना प्रशिक्षण के प्राकृतिक उद्दीपक को देखकर जो अनुक्रिया होती है प्राकृतिक अनुक्रिया कहलाती है। जैसे भोजन को देखकर लार बहना।

- **अनुबंधित अनुक्रिया :-**

यह सीखी गयी एक सहज क्रिया है। जो कृत्रिम उद्दीपक और स्वाभाविक उद्दीपक के साहचर्य स्थापित होने के बाद व्यक्त होती है इसे अनुबंधित सहज क्रिया इसलिए कहा जाता है कि इसका घटित होना अनुबंधित उद्दीपक पर निर्भर करता है।

पॉवलॉव का प्रयोग –

पॉवलॉव ने अपना प्रयोग एक कुत्ते पर किया। उन्होंने एक कुत्ते को ध्वनिरहित कमरे में रखा। उन्होंने कुत्ते की लार ग्रन्थि का आप्रेशन किया ताकि उसकी लार को एकत्रित किया जा सके उसकी लार को एकनली में इकट्ठा करने की व्यवस्था की। प्रयोग में कुत्ते को भोजन देते समय घंटी बजाई जाती थी। खाना देखकर कुत्ते के मुंह मे लार आ जाती थी। उसका मापन उस नली द्वारा कर लिया जाता था। जिसमें वह इकट्ठा होती थी। इस प्रकार इस प्रयोग में दो उद्दीपक इकट्ठे प्रस्तुत किये जाते रहे। तदुपरान्त प्रयोग में कुछ परिवर्तन किया गया भोजन देने के साथ घंटी तो बजाई गई पर भोजन नहीं दिया गया किन्तु फिर भी कुत्ते के मुंह में लार आई और उसका भी मापन किया तो परिणाम स्वरूप लार की मात्रा उतनी ही पाई गई जितनी कि स्वाभाविक उद्दीपक (भोजन) को देखकर आई थी।

चित्रः पॉवलॉव का प्रयोग

भोजन ↓ प्राकृतिक उद्दीपन केवल घंटी अनुबंधित उद्दीपक	+ घंटी → स्वाभाविक अनुक्रिया ↓ कृत्रिम उद्दीपन → स्वाभाविक अनुक्रिया → अनुबंधित अनुक्रिया

चित्रः पॉवलॉव का सिध्दान्त

पॉवलॉव के उपरोक्त सिद्धांत के अनुसार प्राकृतिक उद्दीपन के साथ–साथ एक कृत्रिम उद्दीपन को सम्बन्ध या जोड़ देने के कुछ समय पश्चात् कृत्रिम उद्दीपक से भी वही प्रतिक्रिया प्राप्त की जा सकती है जो प्राकृतिक उद्दीपक से प्राप्त होती है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सीखने का सम्बन्ध अनुबंधन से होता है।

प्रयोग के मुख्य घटक :–

❖ स्वाभाविक उद्दीपक :-

वह उद्दीपक जिसको देखकर प्राणी स्वाभाविक प्रतिक्रिया करता है। यहाँ इस प्रयोग में स्वाभाविक उद्दीपक 'भोजन' है जिसको देखकर कुत्ते के मुंह में लार का आना स्वाभाविक अनुक्रिया हुई।

❖ स्वाभाविक अनुक्रिया :-

वह अनुक्रिया या प्रतिक्रिया जो स्वाभाविक उद्दीपन द्वारा उत्पन्न की जाती है। यहाँ कुत्ते के मुंह में लार आना स्वाभाविक अनुक्रिया है, जो भोजन को देखकर हुई।

❖ अनुबंधित उद्दीपक :-

वह उद्दीपक जो स्वाभाविक उद्दीपक के साथ कई प्रयासो तक स्वाभाविक उद्दीपको की भांति ही अनुक्रिया उत्पन्न करने लगता है। यहां इस प्रयोग में अनुबंधित उद्दीपक घंटी की आवाज है जिसके द्वारा भोजन के समान ही अनुक्रिया उत्पन्न हुई।

❖ अनुबंधित अनुक्रिया :-

अनुबंधित उद्दीपक द्वारा प्राणी में उत्पन्न की गयी प्रतिक्रिया अनुबंधित अनुक्रिया कही जाती है

घटक

UCS	(UCR)	(CS)	(CR)
↓	↓	↓	↓
Food	Saliva	घंटी की आवाज	घंटी की आवाज के बाद लार आना

अनुबंधित अनुक्रिया की प्रकृति –

- अनुबंधित अनुक्रिया अस्थायी और अस्थिर होती है। कुछ समय बाद अनुबंधित अनुक्रिया का प्रभाव घटने लगता है।
- उपयोग कम होने पर अनुबंधित अनुक्रिया समाप्त हो जाती है।
- व्यस्को की अपेक्षा बच्चे पर आसानी से स्थापित की जा सकती है।
- अनुबंधित अनुक्रिया विशिष्ट होती है। अर्थात वह केवल सम्बन्धित उद्दीपन से पैदा होती है। अन्य उद्दीपन का उस पर प्रभाव नहीं पड़ता।

उत्तेजना का नियम :–

इस अनुक्रिया अनुबंधन से यह ज्ञात होता है कि यदि तटस्थ या अनुबंधित उद्दीपक को स्वाभाविक उद्दीपक के साथ बार–बार प्रस्तुत किया जाता है तो तटस्थ उद्दीपक या अनुबंधित उद्दीपक व्यक्ति में एक सामान्य उत्तेजना उत्पन्न करना शुरू कर देता है। तटस्थ या अनुबंधित उद्दीपक भी व्यक्ति को एक सीमा तक उतेजित कर देता है।

उद्दीपक सामान्यीकरण :–

एक सफेद चूहे से डरने वाला बच्चे ा प्रत्येक सफेद चीज से डरने लगता है तो वह उद्दीपक सामान्यीकरण का ही उदाहरण है।

सीखने की प्रक्रिया के दौरान प्रारम्भिक प्रयासों में यह देखा गया है कि मूल अनुबंधित उद्दीपक के प्रति ही नहीं अपितु उससे मिलते–जुलते अन्य उद्दीपको के प्रति भी उस तरह की अनुक्रिया करता है। इसे उद्दीपक सामान्यीकरण कहा गया है।

"उद्दीपक सामान्यीकरण का अर्थ है एक उद्दीपक से जिस प्राकर अनुबंधित अनुक्रिया पैदा होती है, वैसी ही अनुक्रिया का उसी प्रकार के उद्दीपक से पैदा होना।" – हाउस्टन

विलोपन एवं स्वत पुनर्लाभ :–

इस प्रयोग में यह पता चला कि यदि अनुबंधन स्थापित होने के बाद अर्थात घंटी बजने के बाद भोजन न दिया जाय तो की जाने वाली अनुक्रिया धीरे–धीरे समाप्त होने लगती है। अतः एक ऐसी स्थिति आयेगी कि अनुबंधित उद्दीपक (घंटी की आवाज) होगी और अनुक्रिया नहीं होगी इसी के विलोपन को नाम दिया गया है।

तीव्रता :–

उद्दीपक की तीव्रता और अनुक्रिया में गहरा सम्बन्ध होता है। अर्थात उद्दीपक जितना तीव्र होगा अनुक्रिया उतनी ही अविलम्ब होगी, आसानी से होगी। उद्दीपक की तीव्रता से तात्पर्य उसकी प्रबलता से है। जैसे इस प्रयोग में भूखा कुत्ते के लिए भोजन प्रबल उद्दीपक है।

बाह्म अवरोधक का नियम :–

जब सीखने की प्रक्रिया के दौरान कोई नवीन उद्दीपक अनुबंधित उद्दीपक के साथ प्रस्तुत किया जाता है तो सीखने की प्रक्रिया धीमी हो जाती है। जैसे घंटी की आवाज के साथ चमकयुक्त प्रकाश प्रदान करना। इससे सीखने की क्रिया प्रभावित होती है। इसे ही बाह्य अवरोध नियम कहा गया है।

आन्तरिक अवरोध का नियम :–

अनुक्रिया में आन्तरिक अवरोध का उत्पन्न होना सीखनाप्रक्रिया करता है। यदि अनुबंधित उद्दीपक दिया गया है और स्वाभाविक उद्दीपक नहीं दिया गया अर्थात घंटी की आवाज हुई और भोजन नहीं दिया गया तो अनुबंधित अनुक्रिया का विलोप हो जाता है। किन्तु यह क्रिया स्वयं नहीं बाधित होती अपितु प्राणी में एक ऐसी प्रवृति बन जाती है कि वह घंटी की आवाज आने के बाद भोजन न मिलने पर जानबुझकर अनुक्रिया नहीं करता है इसे ही आन्तरिक अवरोध कहा जाता है।

विभेदीकरण :–

इस प्रक्रिया के अन्तर्गत प्राणी दो उद्दीपको में भेद करना सीख लेता है जैसे–जैसे सीखने के लिए प्रस्तुत प्रयासों की संख्या बढ़ती जाती है वैसे–वैसे व्यक्ति मूल अनुबंधित उद्दीपक तथा अन्य समान उद्दीपको में अन्तर करना सीख लेता है परिणामस्वरूप प्राणी केवल मूल अनुबंधित उद्दीपन अथवा तटस्थ उद्दीपक के प्रति ही अनुक्रिया करता है तथा अन्य समान उद्दीपको के प्रति अनुक्रिया नहीं करता है। इस प्रक्रिया को ही विभेदीकरण कहा गया है।

पुनर्बलन :–

इस प्रयोग में पुनर्बलन को बहुत महत्त्व दिया गया है। इस प्रयोग में भोजन पुनर्बलन के रूप में प्राणी को अनुक्रिया के लिए अभिप्रेरित करता है। अतः भोजन यहाँ यह मुख्य पुनर्बलन है और अनुबंधन के पश्चात जब मुख्य पुनर्बलन का गुण अनुबंधित उद्दीपक में आ जाता है। उसे गौण पुनर्बलन कहते है।

अभिप्रेरणा :–

अभिप्रेरणा भी अनुबंधन का आवश्यक अंग है। अभिप्रेरणा अनुबंधित अनुक्रिया को प्रभावित करती है क्योंकि यदि इस प्रयोग में कुत्ता घंटी की आवाज या भोजन के प्रति अभिप्रेरित न होता तो अनुबंधन असंभव हो जाता है।

पुनरावृति :–

पुनरावृति से सीखना दृढ़ हो जाता है यहाँ अनुबंधित अनुक्रिया को शुद्ध रूप से स्थापित करने के लिए बार–बार घंटी बजाई गई। यदि एक ही बार बजाई जाती तो कुत्ता भोजन और घंटी की आवाज के साथ–संबंध समक्ष पाने में सफल नहीं होता और अनुबंधन बाधित हो जाता अतः पुनरावृति भी आवश्यक है।

आभासी अनुबंधन :–

इस प्रक्रिया में अनुक्रिया हो जाती है किन्तु बिना किसी उद्दीपक प्रदान किये। इस प्रयोग में कई बार ऐसा हुआ कि प्रयोगात्मक परिस्थिति में लाते ही पूर्व अनुभवों के कारण कुत्ते में (लार बहना) अनुक्रिया शुरू हो जाती है। इस क्रिया को पॉवलॉव ने आभासी अनुबंधन कहा है।

उच्चकोटि अनुबंधन :–

अनुबंधन के बाद की प्रक्रिया मे स्वाभाविक उद्दीपक (भोजन) के रूप में अनुबंधित उद्दीपक (घंटी की आवाज) का प्रयोग किया जा सकता है। अर्थात इस प्रक्रिया में स्वाभाविक उद्दीपक के स्थान पर अनुबंधित उद्दीपक प्रदान किया जाता है। उदाहरण के लिए– रोशनी और घंटी की ध्वनि को साथ–साथ प्रस्तुत किया जाता है, तब कुछ समय पश्चात प्राप्त होता है कि जो लार बहने की अनुक्रिया घंटी की ध्वनि से हो रही थी अब रोशनी से भी वही अनुक्रिया हो रही है इसे ही पॉवलॉव ने उच्च कोटि अनुबंधन कहा है।

सामान्य अनुबंध–

भोजन + घंटी ⟶ अनुक्रिया (लार बहना)

घंटी ⟶ अनुबंधित अनुक्रिया (लार बहना)

उच्च कोटि अनुबंधन

घंटी + प्रकाश ⟶ अनुबंधित अनुक्रिया (लार बहना)

प्रकाश ⟶ अनुबंधित अनुक्रिया (लार बहना)

❖अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत की कमियां :–

(i) यह सिद्धांत पशुओं पर प्रयोग करके प्रतिपादित किया गया है और बालकों पर प्रयोग करके इसकी पुष्टि की गई है, यह परिपक्व (Matured) मनुष्यों की सीखने की प्रक्रिया पर पूर्ण रूप से लागू नहीं होता।

(ii) इस सिद्धांत में मनुष्य को एक जैविक मशीन माना है और उसके सीखने की प्रक्रिया को एक यान्त्रिक प्रक्रिया (Mechanical Process) माना गया है, यह मनुष्य के चिन्तन एवं तर्कपूर्ण सीखने की प्रक्रिया की व्याख्या नहीं करता है।

(iii) अनुबंधित अनुक्रिया द्वारा सीखना स्थायी नहीं होता है।

(iv) अनुबंधन की प्रक्रिया कुछ विशेष परिस्थितियों में ही होती है, जबकि सीखने की प्रक्रिया स्वाभाविक रूप से सदैव चलती रहती है।

(v) कुल मिलाकर यह सिद्धांत मनुष्य के सीखने की प्रक्रिया की सही व्याख्या नहीं करता है।

❖अनुक्रिया अनुबंधन की शैक्षिक निहितार्थ :–

(i) यह सिद्धांत सीखने में क्रिया (Activity), अनुबंधन (Conditioning) और पुनर्बलन (Reinforcement) पर बल देता है। शिक्षको को बच्चे को कुछ भी पढ़ाते सिखाते समय इसका प्रयोग करना चाहिए। इससे सीखने की प्रक्रिया प्रभावशाली होती है।

(ii) यह सिद्धांत विषयों के शिक्षण साधनों (Teaching Aids) के प्रयोग और अनुशासन स्थापित करने में पुरस्कार एवं दण्ड के प्रयोग पर बल देता है। शिक्षा के क्षेत्र में इनका प्रयोग लाभकर सिद्ध हुआ है।

(iii) इस विधि से ऐसे विषयों को सरलता से पढ़ाया जा सकता है जिनमें बुद्धि, चिन्तन एवं तर्क की आवश्यक्त नहीं होती जैसे शिशुओं को अक्षरों का पढ़ना, लिखना, सीखना।

(iv) अनुक्रिया अनुबंधन द्वारा बच्चे की बुरी आदतों को अच्छी आदतों से प्रतिस्थापित किया जा सकता है एवं भय आदि मानसिक रोगों को दूर किया जा सकता है।

(v) अनुक्रिया अनुबंधन द्वारा बच्चे का समाजीकरण सरलता से किया जा सकता है।

अनुक्रिया सक्रिय अनुबंध सिद्धांत (स्किनर)

सक्रिय अनुबंध सिद्धांत के प्रतिपादक अमेरिकी मनोवैज्ञानिक (वी.एफ.स्किनर) ने सीखने की प्रक्रिया के स्वरूप को समझने के लिए सर्वप्रथम पॉवलॉव के प्रत्यावर्तन (Reflex Action) और पुनर्बलन (Reinforcement) सम्प्रत्ययों को समझा। उसके बाद उन्होंने स्वतंत्र रूप से प्रयोग किया।

स्किनर का मानना है कि व्यक्ति का समग्र व्यवहार सक्रिय अनुबंधन (Operant Reinforcement) का परिणाम है। जब कोई चीज व्यवहार के किसी रूप को पुनर्बलित करती है तो उस व्यवहार के पुनरावृति की सम्भावना अधिक होता है। स्किनर के अनुसार प्रबलन जितना अधिक शक्तिशाली होगा वह व्यवहार का पुनरावृत्ति या उसके परिवर्तन में उतना ही अधिक सहायक होगा सक्रिय अनुबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति स्वतंत्र अनुक्रिया परिस्थिति में रहकर किसी व्यवहार को सीखता है।

❖ परिभाषा

सक्रिय अनुबंध व्यवहार (Operant Behaviour):-

यह व्यवहार किसी पूर्व ज्ञात उद्दीपक की अनुपस्थिति में सीखा गया व्यवहार है यहाँ किसी उद्दीपक से सम्बन्ध नहीं होता है। यहाँ प्राणी स्वतंत्र रूप से अनुक्रिया करता है और पूर्ण सक्रिय रहता है।

अनुक्रियात्मक व्यवहार (Respondant Behaviour):-

यहाँ की गयी अनुक्रिया या व्यवहार उद्दीपक से सम्बन्ध होता है। पूर्व ज्ञात उद्दीपक ही अनुक्रिया उत्पादित करती है।

साधनात्क अनुबंधन (Instrumental Conditioning):-

इस अनुबंधन में सीखने वाले प्राणी के व्यवहार को दो रूपों में सीमित किया जाता है। प्रथम सीखने वाला प्राणी ऐसी परिस्थिति में रखा जाता है। जिसमें उसके द्वारा अनुक्रिया उत्पन्न करने की स्वतंत्रता को उपकरणों या प्रदत्त विकल्पों द्वारा सीमित कर दिया जाय, द्वितीय इस प्रक्रिया में प्राणी को ऐसी परिस्थिति दी जाती है जहां प्रदत्त विकल्पों में एक चुनने का अवसर दिया जाता है। चुने हुए विकल्प के अनुसार प्रबलन प्राप्त होता है।

❖ स्किनर का प्रयोग :—

स्किनर द्वारा यह प्रयोग एक सफेद चूहे पर किया गया। इस प्रयोग के लिए उन्होंने एक बाक्स में भुखे चूहे को रखा इस बाक्स को 'स्किनर बाक्स' नाम दिया गया। वैसे स्किनर

स्वयं इस बाक्स को 'सक्रिय अनुबंधन चैम्बर' कहते थे। इस बाक्स में भूखा चूहा जिसे भोजन की आवश्यकता है रखा गया। उसी बाक्स में एक लीवर लगा था जिसका सम्बन्ध दीवार पर रखे एक बर्तन से था उस बर्तन में भोजन था। लीवर के नीचे एक प्लेट लगी थी। जैसे ही लीवर दबता भोजन चूहे को मिल जाता। इस बाक्स में चूहे को स्वतंत्र छोड़ दिया गया, ताकि वह कोई भी क्रिया कर सके प्रारम्भ में चूहे ने इधर उधर छलांग लगाई कई क्रियायें की। अचानक उसका पैर लीवर पर पड़ा और भोजन उसे प्राप्त हो गया इसी प्रकार चूहे की सारी क्रियायें लीवर के आस–पास ही सीमित हो गयी। धीरे–धीरे वह लीवर दबाना सीख गया। इससे यह स्पष्ट हुआ कि इस अनुबंधन में किसी निश्चित अनुक्रिया होने पर ही पुनर्बलन प्राप्त होता है। अर्थात प्राणी पुनर्बलन तभी प्राप्त कर सकता है जब वह प्रयोगकर्त्ता द्वारा निधारित अनुक्रिया करेगा।

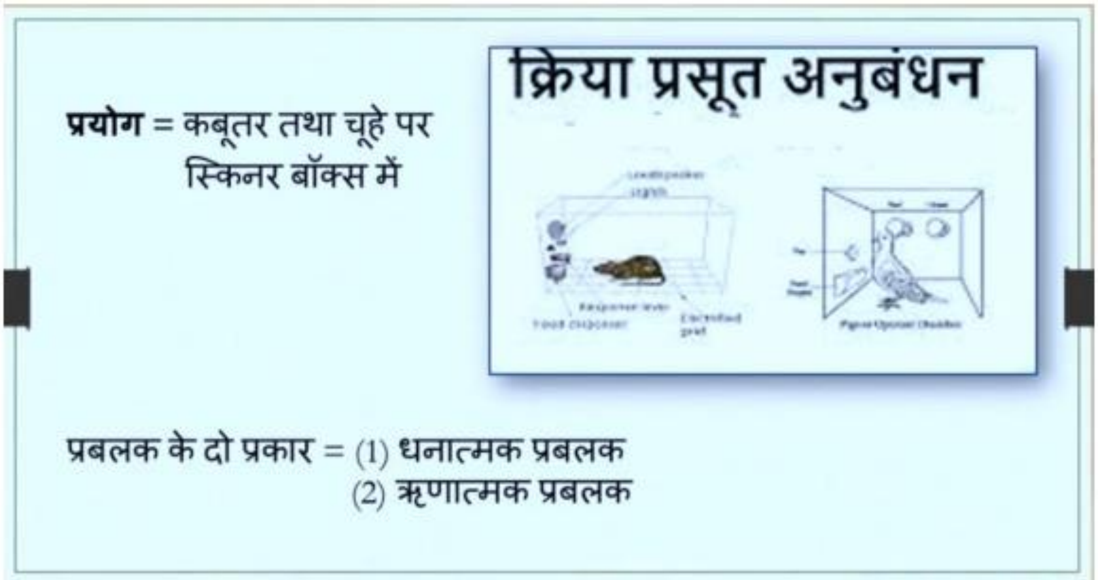

❖ सक्रिय अनुबंधन की विशेषतायें :–

1. इस अनुबंधन द्वारा व्यक्ति क्रियायें उत्सर्जित करता है।
2. यह अनुबंधन प्रयोज्य (कर्त्ता) की अनुक्रिया पर निर्भर करता है।
3. यह अनुबंधन किसी निश्चित अनुक्रिया को प्रकट करने या अवरूद्ध करने की ओर अग्रसर होता है।
4. इस अनुबंधन का प्रयोग उन प्रक्रियाओं में होता है। जिनमें पुरस्कार या सकारात्मक उद्दीपक सम्मिलित होता है।
5. इस अनुबंधन में पुरस्कार द्वारा प्रयोज्य (कर्त्ता) वांछित व्यवहार करने लगता है।

❖ सक्रिय अनुबंधन के आधार :–

सक्रिय अनुबंधन का मुख्य आधार पुनर्बलन है। इस अनुबंधन में कोई भी घटना या उद्दीपक जो निर्धारित वांछित अनुक्रिया उत्पन्न करे पुनर्बलन कहलाता है। इस प्रकार पुनः दिया गया पुनर्बलन भावी व्यवहार का निर्धारक होता है। पुनर्बलन सकारात्मक या नकारात्मक हो सकता है।

पुनर्बलन (Reinforcement) के प्रकार

सकारात्मक पुनर्बलन (S+)	नकारात्मक पुनर्बलन(S-)
इसे (S+) द्वारा व्यक्त किया जाता है। उद्दीपक की प्राप्ति अनुक्रिया पर निर्भर है। इसे प्राप्त करने के लिए प्राणी अनुक्रिया उत्पादित करता है, या अवरूद्ध करता है। प्रशंसा, प्रोत्साहन, पुरस्कार प्रमाण पत्र, वेतन, उपाधि आदि सकारात्मक पुनर्बलन के उदाहरण है।	इसे (S-) द्वारा व्यक्त किया जाता है। कष्टदायक उद्दीपक से छुटकारा अनुक्रिया पर निर्भर है। इसमें प्राणी दण्ड से निजात पाने के लिए अनुक्रिया उत्पादित या अवरूद्ध करता है। डाँट, आलोचनात्मक, टिप्पणी नकारात्मक पुनर्बलन के उदाहरण है।

व्यावहारिक प्रसंगों में नकारात्मक पुनर्बलन और दण्ड का अन्तर नजरअंदाज कर दिया जाता है, किन्तु सम्प्रत्यात्मक दृष्टि से दोनो में पर्याप्त अन्तर है।

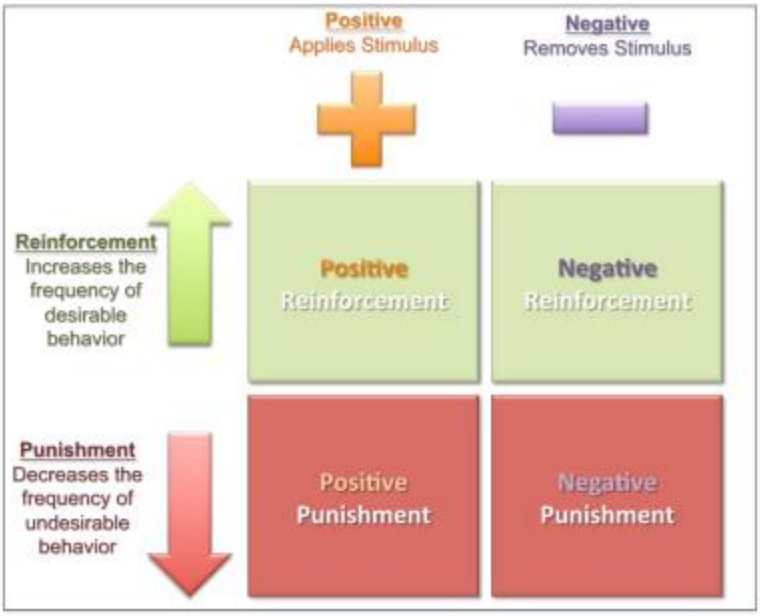

नकारात्मक पुनर्बलन में किसी कष्टदायक उद्दीपक से छुटकारा पाना प्रमुख लक्ष्य रहता है। जबकि दण्ड में ऐसा नहीं है। अवॉछनीय व्यवहार के परिमार्जन के लिए दण्ड का प्रयोग अधिकांशतः किया जाता है। पर वह व्यवहार परिमार्जन स्थायी नहीं होता है।

नकारात्मक पुनर्बलन द्वारा अनुक्रिया शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। दण्ड से उसकी अभिव्यक्ति अवरूद्ध हो जायेगी।

उदाहरणार्थ :–

एक बच्चे ने गिलास में दिया गया दूध फेंक दिया और उसके बाद माँ आकर उसको मारती है यह दण्ड की श्रेणी में आयेगा। वहीं शोर युक्त कक्षा में प्रवेश करते ही शिक्षक उच्च स्वर में बालने लगता है, सभी छात्र आकृष्ट होकर उसकी तरफ देखने लगते है और शिक्षक को तेज आवाज में बोलना बंद हो जाता है। यह नकारात्मक पुनर्बलन की श्रेणी में रखा जायेगा।?

❖सक्रिय अनुबंधन के शैक्षिक निहितार्थ :–

यह सिद्धांत सीखने के लिए उद्दीपक (Stimulus) के स्थान पर प्रेरणा (Motivation) को आवश्यक मानता है अतः सर्वप्रथम बालको को पढ़ने–लिखने के लिए अभिप्रेरित (Motivate) करना चाहिए, उनके सामने स्पष्ट उद्देश्य (Aims) रखने चाहिए।

यह सिद्धांत सीखने में पुनर्बलन (Reinforcement) को बहुत महत्त्व देता है। कक्षा शिक्षण में शिक्षक शिक्षा के सही उत्तरों को प्रेम भरी मुस्कान और शाबाश जैसे शब्दों से पुनर्बलन दे सकते है और उन्हें देना भी चाहिए पर साथ ही यह उनकी गलत अनुक्रिया पर किसी प्रकार के दण्ड देने का विरोध करता है।

इस सिद्धांत का प्रयोग करके अध्यापक बालक के व्यवहार का विकास ऐसा कर सकता है जो सामाजिक रूप से वांछित और स्वीकार्य हो।

इस सिद्धांत के माध्यम से बालक को नवीन विषय वस्तु सिखाने में सरलता होती है। सीखने के परिणामस्वरूप बालक को मिलने वाला पुरस्कार या दण्ड से बालक सीखने की सही दिशा में अग्रसर हो सकता है।

बालकों के भाषा विकास तथा शब्दार्थ विकास में इस सिद्धांत की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

मनोवैज्ञानिक समस्याओं से ग्रसित बालको को इस सिद्धांत के अनुरूप शिक्षण देना लाभकारी होता है।

पुनर्बलन इस सिद्धांत की मुख्य विशेषता है। पुनर्बलन (पुरस्कार, दण्ड या परिणाम का शीध्र पता चलना) के माध्यम से बालकों के व्यवहार को सही दिशा दी जा सकती है।

अनुक्रिया अनुबंधन और सक्रिय अनुबंधन में अन्तर

अनुक्रिया अनुबंधन (पावलव)	सक्रिय अनुबंधन (स्किनर)
1. अनुक्रिया अनुबंधन अनुक्रिया व्यवहार में सहायक सिद्ध होता है।	1. सक्रिय अनुबंधन, सक्रिय व्यवहार सम्बन्धित सीखने में सहायक होता है।
2. इस प्रकार के अनुबंधन में अनुक्रिया के लिए उद्दीपक की केन्द्रीय भूमिका होती है।	2. इसमें अनुक्रिया की केन्द्रीय भूमिका रहती है।
3. इसके अन्तर्गत अवाछनीय व्यवहार संशोधन के लिए दंड को प्रयोग में लाया जाता है।	3. इस सिद्धांत में दंड के द्वारा व्यवहार परिमार्जन का सख्ती से विरोध किया है।
4. इस सिद्धांत में अधिगमकर्त्ता स्वतंत्र नहीं होता। वह उद्दीपक के आधार पर अनुक्रिया करने को मजबुर होता है।	4. इस सिद्धांत में सीखने वाला अनुक्रिया करने के लिए स्वतंत्र होता है।
5. इस सिद्धांत में अनुक्रिया के लिए किसी ज्ञात उद्दीपक का होना आवश्यक है।	5. इस सिद्धांत में अनुक्रिया के लिए पूर्वज्ञान किसी उद्दीपक की आवश्यकता नहीं होती है।
6. इस सिद्धांत में पुनर्बलन का अनुक्रिया के पहले प्रयोग किया जाता है।	6. इसके अन्तर्गत अनुक्रिया के बाद उसको बल प्रदान करने के लिए पुनर्बल दिया जाता है।
7. इस सिद्धांत में उद्दीपक (UCS) स्पष्ट होता है।	7. इस सिद्धांत में उद्दीपक प्रस्तुत किया जाता है पर (UCS) नहीं कहा जा सकता क्योंकि अनुक्रिय के बाद प्रस्तुत किया जाता है।
8. इस सिद्धांत में अनुक्रिया पर प्रयोगकर्त्ता का पूर्ण नियंत्रण रहता है।	8. इस सिद्धांत में प्रयोग कर्त्ता का कोई नियंत्रण नहीं होता है।

सूचना प्रसंस्करण सिद्धांत की समझ :–

परिचय

प्रारंभ में यह समझा जाता था कि हम जो कुछ भी सीखते है या अनुभव करते है उन समस्त सूचनाओं को संचित करने की क्षमता स्मृति में होती है। इसे एक वृहद् भंडार की भांति समझा जाता था जिसकी आवश्यकता पड़ने पर उस सूचना को वहाँ से निकाल कर उसका उपयोग किया जा सके

किन्तु कप्यूटर के अविष्कार से मानव स्मृति को भी उसी तंत्र के रूप में देखा जाने लगा है जिसे सूचनाओं का प्रक्रमण कम्यूटर की भांति होता है। दोनों ही बड़ी मात्रा में सूचना का पंजीकरण भंडारण और उसमें फेर बदल करते है और फेर बदल के परिणाम स्वरूप कार्य करते है।

आज नए अनुभव ग्रहण करने, समस्याओं का हल ढुढ़ने और व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाने हेतु व्यक्ति विशेष प्राप्त सूचनाओं का जिस ढ़ग से प्रक्रियाकरण सिद्धांतों (Information Processing Theories) का नाम दिया गया है।

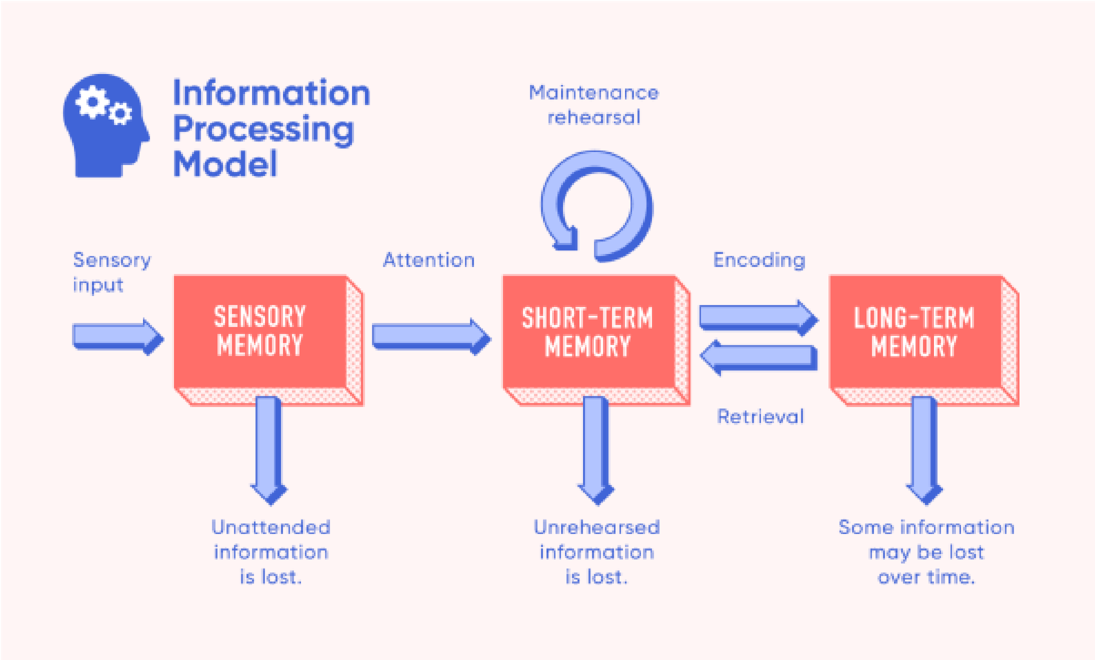

परिभाषा :–

"सूचना प्रक्रियाकरण पद व्यक्तियों द्वारा सम्पन्न ऐसी सभी गतिविधियों के लिए प्रयुक्त होता है जिनमें वे अपने वातावरण में उपस्थित उद्दीपनों से वांछित सूचनाए या आकड़े प्राप्त करते है, उनका व्यवस्थापन करते है समस्याओं से अवगत होते हैं इनके समाधान हेतु अवधारणाओं और तरीकों की तलाश करते है तथा ऐसा करने में उपयुक्त शाब्दिक और अशाब्दिक संकेतों का प्रयोग करते है।"

उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि सूचना प्रक्रियाकरण के माध्यम से व्यक्ति विशेष किसी प्राप्त सूचना, आकड़े, इन्द्रियजनित अनुभवों का भली–भांति मंथन और विश्लेषण कर उसे आगे अपने प्रयोजन हेतु काम में लाने का प्रयत्न करता है। यही कारण है कि सूचना प्रक्रियाकरण उसे अपनी विभिन्न प्रकार की समस्याओं का हल करने हेतु नवीन अनुभव एक समाधानों की उपलब्धि में तथा अपने व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाने के कार्यों मे अच्छी तरह सहायक होता है।

आइए हम देखते है बच्चे किसी कार्य को कैसे सीखते है? सीखने में मास्तिष्क की प्रक्रियाओं की क्या भूमिका रहती है, बच्चे कुछ बातों को क्यों सीख लेते है तो कुछ को क्यों नहीं सीख पाते?

मस्तिष्क में सूचना के आधार पर ज्ञान निर्माण :–

वातावरण में उपस्थित विभिन्न प्रकार के उद्दीपक (Stimulus) हमारी ज्ञानेन्द्रियों को प्रभावित करते है। उदाहरण के लिए प्रकाश तरंगे आखों को, ध्वनि तरंगे कानों को, उष्मा तरंगे त्वचा को, वायु में उपस्थित गंध नाक को प्रभावित करती है इत्यादि। सूचनाओं के आधार पर ज्ञान का निर्माण होता है। ज्ञान अर्जन की शुरूआत ज्ञानेन्द्रियों द्वारा उत्तेजना ग्रहण करने से भी होती है।

सूचना (ज्ञान) के आधार पर दीर्घकालिक स्मृति

स्मृति का वर्गीकरण

सामान्य ज्ञान (सूचना) → खाना, पीना, काम करना इत्यादि

विशिष्ट ज्ञान (सूचना) → गणित का सीखना रोटी बनाना सीखना इत्यादि

घोषणात्मक	प्रक्रियामूलक	अनुबंधात्मक
Declearative	Procedural	Conditional
(क्या)	(कैसे)	(कब)

सूचना प्रसंकरण सिद्धांत प्रयोग :–

इस सिद्धांत को प्रकाश में लाने को श्रेय प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक आटकिन्स तथा शिफरिन (Atkison & Shiffrin) – 1968, 1971 को जाता है। यह सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि हमारा सीखना उस सूचना प्रसंस्करण का प्रतिफल है जिसे हमारे मस्तिष्क मे निम्न तीन चरणों या स्तर में सम्पन्न किया जाता है।

(i) संवेदी स्मृति (Sensory Memory)

कोई भी नयी सूचना पहले स्मृति में आती है। संवेदी स्मृति की संचयी क्षमता तो बहुत होती है किन्तु इसकी अवधि बहुत कम होती है, एक सेकण्ड से भी कम।यह एक ऐसी स्मृति तंत्र है जो प्रत्येक संवेदना को परिशुद्धता से ग्रहण करता है। अक्सर इस तंत्र को संवेदी स्मृति या संवेदी पंजिका कहते है क्योंकि समस्त संवेदनाएं यहाँ उद्दीपक की प्रकृति के रूप में ही संग्रहित की जाती है। यदि अपने कभी दृश्य उत्तर–बिब (बल्ब बुझने के बाद भी जो छाया रह

जाती है) का अनुभव किया हो या आवाज के बंद हो जाने के बाद भी उसकी प्रतिध्वनि सुनी हो तो इसका तात्पर्य है कि आप चित्रात्मक एवं प्रतिध्वन्यात्मक संवेदी पंजिका से परिचित है।

(ii) अल्पकालिक स्मृति (Short term memory)

आप इस बात से सहमत होंगे कि हम उन सभी सूचनाओं पर ध्यान नहीं देते जो हमारे संवेदी ग्राहको को प्रभावित करती है। जिन सूचनाओं पर हम ध्यान देते है वे हमारी द्वितीय स्मृति भंडार मे प्रवेश करती है जिसे अल्पकालिक स्मृति कहा जाता है जो थोड़ी सूचना को थोडे समय तक (सामान्यतः 30 सेकेण्ड या उससे कम) ही रख पाती है। एटकिसन एवं शिफ्रिन के अनुसार अल्पकालिक स्मृति में सूचना कूट संकेतन मुख्य रूप से ध्वन्यात्मक होता है। यदि इसका निरंतर अभ्यास न किया जाए तो 30 सेकेण्ड से कम समय में ही अल्पकालिक स्मृति से बाहर चली जाती है ध्यान दीजिए कि अल्पकालिक स्मृति कमजोर तो होती है लेकिन संवेदी पंजिका की भांति नहीं जहाँ एक सेकेण्ड से भी कम समय में सूचना का क्षय हो जाता है।

(iii) दीर्घकालिक स्मृति (Long term memory)

ऐसी सामग्री जो अल्पकालिक स्मृति की क्षमता एवं धारणा अवधि की सीमाओं को पार कर जाती है वह दीर्घकालिक स्मृति में प्रवेश करती है जिसकी क्षमता व्यापक है। यह स्मृति का ऐसा स्थायी भंडार है जहाँ सूचनाएं चाहे वह कितनी भी नयी क्यों न हो जैसे आपने कल क्या नाश्ता किया था? से लेकर इतनी पुरानी जैसे आपने अपना छठा जन्मदिन कैसे मनाया था? सभी संचित होती है। यह प्रदर्शित किया गया है कि कोई सूचना एक बार दीर्घकालिक स्मृति के भंडार में चली जाती है तो उसे हम कभी नहीं भूलते क्योंकि वह शब्दार्थ कूट संकेतन अर्थात किसी सूचना का क्या अर्थ है? द्वारा संग्रहित की जाती है। आप जिस सूचना को भूलते है वह पुनरूद्धार की विफलता के कारण होती है। पुनरूद्धार की विफलता कई कारणों से हो सकती है।

आइए देखे सूचना प्रसंस्करण सिद्धांत में स्मृति की अवस्थाओं को समझते हैं।

स्मृति की अवस्थाएँ

❖ सीखने सूचना प्रसंस्करण सिद्धांत का शैक्षिक नितिहार्थ :–

उपरोक्त वर्णित सभी सूचना प्रसंस्करण सिद्धांत अपने ढ़ग से सीखने अर्जन हेतु निम्न प्रकार के संदेश एक सीखने वाले को प्रदान करते हुए नजर आते है।

1. सूचना सामग्री चाहे शाब्दिक रूप में उपलब्ध हो या अशाब्दिक रूप में इसका अच्छी तरह प्रक्रियाकरण और सीखना तभी संभव है जबकि इसे सार्थक खण्डो या इकाइयां में विभक्त कर लिया जाये।
2. विद्यार्थियों को सदैव ही इस बात में पर्याप्त सहायता दी जानी चाहिये कि वे उपलब्ध सूचना सामग्री में से अवश्य ही यह छांटने का प्रयत्न करे कि कौन सी ऐसी सामग्री है जो उनकी दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण है। तथा कौन सी महत्त्वहीन है यदि विश्लेषण करके उन्हें उसके प्रक्रियाकरण या सीखने हेतु आगे बढ़ना चाहिए।
3. बच्चे ोंकी सूचना के समुचित प्रक्रियाकरण हेतु इस बात में सहायता की जानी चाहिए कि वे पूर्व उपलब्ध सूचनाओं या ज्ञान के साथ वर्त्तमान में ग्रहण की जा रही है सूचनाओं या ज्ञान के साथ अच्छी तरह सम्बन्ध स्थापित कर सकें।
4. जहाँ तक सम्भव हो बच्चे ोंको वे सभी अवसर प्रदान किये जाने चाहिए जिनसे वे प्राप्त सूचनाओं की पुनरावृति या पुनरावलोकन द्वारा उन्हे अपनी स्मृति में संजो सके।
5. सीखनासामग्री तथा सीखनाअनुभवों (अनुदेशन प्रक्रिया) को सदैव ही बहुत ही व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध ढंग से संगठित एवं नियोजित करने के प्रयत्न करने चाहिए ताकि सूचना सामग्री के प्रक्रियाकरण में सरलता, स्पष्टता और प्रभावोत्पादकता बनी रहे।
6. बच्चे ोंसे सदैव ही यह आशा की जानी चाहिये कि वे सूचनाओं को बिना सोचे समझे रटकर अपनी स्मृति में धारण करने की बजाय उनका उचित बोध करने तथा उन्हें अच्छी तरह समझकर उनके प्रक्रियाकरण करने में विश्वास रखें।

❖समेकन (सारांश)

संक्रियावाद और संरचनावाद के विरोध में व्यवहारवाद का उदय हुआ है, जिसका प्रतिपादक वाट्सन को माना जाता है। व्यवाहरवाद में दो विचारधारायें निकली–प्रारम्भिक व्यवहारवाद उत्तररकालीन या नव–व्यवहारवाद। उत्तरकालीन व्यवहारवाद के समर्थकों में हल, गथरी, स्किनर, टालमैन, बन्डुरा आदि का नाम आता है। व्यवहारवाद ने चेतना को कल्पना मानते हुए व्यवहार पर अधिक बल दिया।

व्यवहार में होने वाला परिवर्तन ही सीखना है। 'सीखना' एक सार्वभौमिक और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। व्यवहार में होने वाले वे परिवर्तन जो अभ्यास और अनुभूति के फलस्वरूप होते है। सीखने की श्रेणी में आते है। मुख्यतः तीन प्रकार का व्यवहार सीखते है– संज्ञानात्मक, भावात्मक, मनोगत्यात्मक।

सीखने से सम्बंधित विभिन्न दृष्टिकोण है जैसे– गेस्टाल्ट, प्रयास और त्रुटि, क्षेत्र सिद्धांत और अन्त में व्यवहारवादी दृष्टिकोण है। सीखने के कुछ व्यवहारवादी सिद्धांत है– जैसे हल का आवश्यक्ता पूत्ति सिद्धांत, गथरी का समीपता का सिद्धांत, टालमैन का चिन्ह सिद्धांत, बन्डुरा का सामाजिक अधिगम सिद्धांत।

पॉवलॉव के अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत का प्रतिपादन 1904 ई. में हुआ जिसमें पॉवलॉव ने एक कुत्ते पर प्रयोग किया। इस प्रयोग के मुख्य घटक– स्वाभाविक उद्दीपक, स्वाभाविक अनुक्रिया, अनुबंधिक उद्दीपक अनुबंधित अनुक्रिया। इस सिद्धांत में उद्दीपक–अनुक्रिया के अनुबंधित द्वारा व्यवहार परिमार्जन और सीखने की बात की गयी। कुछ बिन्दुओं पर इस सिद्धांत की आलोचना भी हुई जैसे–इस सिद्धांत द्वारा प्रतिपादित सीखना स्थायी नहीं होता है। इसका प्रयोग पशुओं और बच्चे पर अधिक हुआ है इस सिद्धांत को 'S' सिद्धांत भी कहा जाता है। इस सिद्धांत का शिक्षा के क्षेत्र में, अभिवृत्तियों के विकास में अच्छी आदतों के निर्माण में समायोजन करने में भाषा सीखने में, अनुशासन के निर्माण में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत का प्रतिपादन स्किनर महोदय ने किया। यह प्रयोग चूहों और कबूतरों पर किया गया। इस सिद्धांत में पुनर्बलन को महत्त्व दिया गया। अतः इसे 'R' सिद्धांत भी कहा जाता है। इस सिद्धांत में प्राणी को स्वतंत्र अनुक्रिया करने के लिए छोड़ दिया जाता है। और जब वह अपेक्षित क्रिया करता है तो पुनर्बलन के द्वारा उस अनुक्रिया उत्सर्जित करता है। प्रबलन के दो प्रकार बताये गये सकरात्मक और नकारात्मक इस सिद्धांत का प्रभाव प्रशिक्षण विद्यियों पर प्रबन्ध व्यवस्था पर, सैन्य प्रशिक्षण पर अत्यधिक पड़ा है। इस सिद्धांत का प्रयोग करके प्रोत्साहन को बढ़ाया जा सकता है। व्यवहार का परिमार्जन किया जा सकता है तथा व्यक्तित्व का समुचित विकास भी किया जा सकता है।

अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत (Operant Conditioning Theory) और सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत (Operant Conditioning Theory) कुछ बिन्दुओं पर एक दूसरे से भिन्न है। एक में उद्दीपक की केन्द्रीय भूमिका होती है तो दूसरे में अनुक्रिया की केन्द्रीय भूमिका रहती है। एक में सीखने वाला निष्क्रिय तो दूसरे में सत्रिय रहता है। सीखने के सूचना प्रक्रियाकरण (प्रसंस्करण) सिद्धांतों से तात्पर्य सीखने के ऐसे सिद्धांत से है जिनमें सीखने की प्रक्रिया को स्पष्ट करने हेतु सूचना प्रक्रियाकरण का उपयोग किया जाता है। मानव मस्तिष्क वातावरण में उपलब्ध सूचनाओं को ग्रहण कर उनका प्रक्रियाकरण करते हुए उन्हें किस प्रकार उपयोग में लाता है इसी बात पर अपने अपने ढंग से इन विभिन्न सिद्धांतों द्वारा प्रकाश डाला गया है। जैसे त्रिचरणीय सूचना

प्रक्रियाकरण के नाम से प्रसिद्ध अटकिन्सन तथा शिफरिन द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत यह बताता है कि सीखना उस सूचना प्रक्रियाकरण का प्रतिफल है जिसे हमारे मस्तिष्क में क्रमशः तीन चरणों या स्तरों इन्द्रियानुभूत पंजीकरणस्तर (Sensory Registry Level) अल्पकालीन स्मृति स्तर (Short Term Memory), दीर्घकालीन स्मृति स्तर (Long Term Memory) पर सम्पन्न किया जाता है।

बोध प्रश्न

(A) वस्तुनिष्ट प्रश्न (Objective Question)

(i) सीखने में निहित व्यवहार परिवर्तन कैसा हो सकता है?

(क) स्पष्ट (ख) अस्पष्ट (ग) आंशिक स्पष्ट (घ) सभी

(ii) 'व्यवहार से व्यवहार में परिवर्तन सीखना है' किसकी परिभाषा है?

(क) गेट्स (ख) क्रो. एण्ड क्रो (ग) पॉवलॉव (घ) गिलफोर्ड़

(iii) सीखना प्रतिक्रिया की सम्भावना में परिवर्तन है किसने कहा है?

(क) स्किनर (ख) थॉर्नडाईक (ग) पॉवलॉव (घ) इनमें से कोई नहीं

(iv) स्मृति अवस्था मॉडल के प्रतिपादक है।

(क) पॉवलॉव (ख) एटकिंसन एवं शिफ्रिन (ग) स्कीनर (घ) कोई नहीं

(v) इन अवस्थाएं में कौन गलत है

(क) कूट संकेतन (Encoding) (ख) भंडारण (Storage)

(ग) प्रक्रिया (Process) (घ) पुनरूद्धार (Retrieval)

(B) लघु स्तरीय प्रश्न (Short Question)

(i) सीखना किस प्रकार की प्रक्रिया है?

(ii) व्यवहारवाद में किस वादो का विरोध हुआ?

(iii) नव व्यवहारवाद के समर्थकों के नाम लिखिए?

(iv) व्यवहारवाद में अनुक्रिया अनुबंधन क्या है?

(v) व्यवहारवाद में सक्रिय अनुबंधन क्या है?

(vi) स्मृति क्या है?

(vii) स्मृति के तीनों प्रकार को बताएं?

(C) दीर्घ स्तरीय प्रश्न (Long)

(i) अनुक्रिया अनुबंधन तथा सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत में अन्तर बताएं?

(ii) सकारात्मक पुनर्बलन तथा नकारात्मक पुनर्बलन को उदाहरण सहित बताएं।

(iii) शिक्षा के क्षेत्र में अनुक्रिया अनुबंधन तथा सक्रिय अनुबंधन सिद्धांतों की उपयोगिता का विवेचन कीजिए।

(iv) सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत की विशेषताओं का वर्णन कीजिए

(v) संवेदी स्मृति अल्पकालीन स्मृति, दीर्घकालीन स्मृति को विस्तार पूर्वक बताएं?

(vi) सूचना प्रसंस्करण सिद्धांत के शैक्षिक उपयोगिता को बताएं।

(vii) स्मृति अवस्था मॉडल का शिक्षा में महत्त्व को बताएं।

परियोजना कार्य (Project Work)

(i) व्यवहारवादी सिद्धांतों का अनुप्रयोग करके अपना अनुभव व्यक्त करें।

(ii) सक्रिय अनुबंधन सिद्धांत अनुक्रिया अनुबंधन सिद्धांत से अधिक प्रासंगिक है क्यों?

(iii) पुनर्बलन का प्रयोग करके व्यवहार परिमार्जन पर परीक्षण कीजिए।

(iv) व्यवहारवाद की आधुनिक समय में प्रासंगिकता है क्यों?

(v) उद्दीपन (Stimulus) तथा अनुक्रिया (Response) का विद्यालय में प्रायोगिक रूप को बताएं।

संदर्भ–सूची

1. मंगल. एस.के., शिक्षा मनोविज्ञान, नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो, 2016
2. सिंह, अरूण कुमार, शिक्षा मनोविज्ञान, वाराणसीः मोतीलाल बनारसीदास, 2012
3. ओबराय, डा.ए.सी. शिक्षण एवं सीखनाका मनोविज्ञानः नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो 2013
4. लाल, रमन बिहारी, शिक्षा मनोविज्ञान, मेरठः लाल बुक डिपो 2015
5. पाण्डेय, के.पी., नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकाशन 2013
6. इग्नु, विकास और सीखनाका मनोविज्ञान .332 खण्ड 3, नई दिल्ली, इग्नु 2008
7. त्रिपाठी, ला.ब., सीखनाका मनोविज्ञान, 4 एडीसन, नई दिल्ली, टाटा मेक्ग्रां–हिल पब्लिशिंग कम्पनी लिमिटेड

इकाई-4

बच्चे के विकास और सीखने में समाज की भूमिका

प्रस्तावना

किसी भी समाज की अपनी मान्यताएं, व्यवस्थाएं एवं अपेक्षाएं होती हैं जो बच्चे के सामाजिक विकास को प्रभावित करती हैं। समाज बच्चे के सीखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। समाज मे रहकर बच्चे सामाजिक जीवन की आवश्यकताओं से बहुत कुछ सीखते हैं, जैसे - हाव-भाव, रहन-सहन, कार्य करने के तरीके, भाषा, रीति-रिवाज, इत्यादि। घर परिवार के सदस्यों के साथ रहते हुए खेलते हुए, विभिन्न प्रकार की क्रियायें करते हुए वे अपने समाज और संस्कृति के मूल्य, नियम, मान्यताएं, भूमिकाएं, सोचने-विचारने तथा व्यवहार करने के तौर-तरीके भी सीखते हैं।

अतः एक शिक्षक के लिए यह समझना इसलिए जरूरी है क्योंकि बच्चे के सीखने और सिखाने के दृष्टिकोण से इस सामाजिक अंतःक्रिया का विशेष महत्व है। सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं तथा समस्याओं को कक्षायी विमर्श मे किस प्रकार स्थान दें इसके लिए एक शिक्षक को तैयार रहना चाहिए।

उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत शिक्षार्थीः-

- सीखनाऔर समाज के अंतर्सबंध की व्याख्या कर सकेंगे।
- बंडुरा के सामाजिक सीखनासिद्धांत की व्याख्या उदाहरण सहित कर सकेंगे।
- सामाजिक सीखनामें अवलोकन की भूमिका की व्याख्या उदाहरण सहित कर सकेंगे।
- सामाजिक सीखनाके सिद्धांत के शैक्षिक निहितार्थो की विवेचना कर सकेंगे।
- वायगोतस्की के सामाजिक-सांस्कृतिक सिद्धांत की प्रमुख मान्यताओं की उदाहरण सहित व्याख्या कर सकेंगे।
- वायगोतस्की के सिद्धांत के शैक्षिक निहितार्थो की व्याख्या कर सकेंगे।
- वायगोतस्की के सिद्धांत की समालोचना कर सकेंगे।

परिचय

सीखनाके व्यवहारवादी सिद्धांतों ने सीखनाको वातावरणीय उद्दीपकों के प्रति अधिगमकर्ता की प्रतिक्रिया के रूप में व्याख्या की, वहीं सीखनाके संज्ञानात्मक सिद्धांतों ने बताया कि अधिगमकर्ता अपनी मौजूदा संज्ञानात्मक संरचनाओं के आधार पर अपने नई संज्ञानात्मक संरचनाओं का निर्माण स्वत: करता है। इस प्रकार वह अपने ज्ञान के निर्माण मे स्वतंत्र होता है। इस प्रकार सीखनाके उपरोक्त दोनों वर्गो के सिद्धांतों ने सीखने के संदर्भ मे समाज और संस्कृति की पूरी तरीके से अवहेलना कर दी। क्या ऐसा संभव है कि मनुष्य, जो एक सामाजिक प्राणी है उसके सीखने पर वह जिस समाज में रहता है, जिन लोगों को देखता है सुनता है, जिन लोगों से अंत:क्रिया करता है उनका कोई असर न पड़े? इस संदर्भ में सबसे पहले बात की अल्बर्ट बंडुरा ने, जिनके सिद्धांत को सामाजिक सीखनाका सिद्धांत कहा जाता है।

अल्बर्ट बंडुरा का जन्म 4 दिसंबर, 1925 को उत्तरी अल्बर्टा, कनाडा के छोटे से शहर मुंदारे में हुआ था। वह कम संसाधनों वाले एक छोटे से प्राथमिक विद्यालय और उच्च विद्यालय में शिक्षित थे।
उन्होंने 1949 ईस्वी में ब्रिटिश कोलंबिया विश्वविद्यालय से मनोविज्ञान में अपनी स्नातक की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने आयोवा विश्वविद्यालय में दाखिला लिया, जहाँ उन्होंने वर्ष 1952 में अपनी पीएच.डी. की उपाधि अर्जित की वहीं वह व्यवहारवादी परंपरा और सीखने के सिद्धांत के प्रभाव में आए।
वर्ष 1953 में उन्होंने स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी में पढ़ाना शुरू किया। वहाँ रहते हुए, वर्ष 1959 में अपने पहले स्नातक छात्र, रिचर्ड वाल्टर्स के साथ मिलकर उन्होंने अपनी पहली पुस्तक, एडोल्सेंट अग्रेशन लिखा।

'बच्चे का वातावरण उसके व्यवहार का निर्धारण करता है' व्यवहारवाद की इस अवधारणा को बंडुरा ने अति सरलीकृत कहते हुए खारिज कर दिया और कहा कि न केवल बच्चे का वातावरण बच्चे के व्यवहार का निर्धारण करता है अपितु ब्च्चे का व्यवहार भी वातावरण का निर्धारण या निर्माण करता है। इस संप्रत्यय को बंडुरा ने 'पारस्परिक नियतिवाद' (Reciprocal Determinism) कहा (बॉयरी, 2018)। उन्होंने अपने अध्ययन - किशोरों में आक्रामकता से इसके उदाहरण दिए कि किस प्रकार वातावरण और बच्चे का व्यवहार एक-दूसरे का कारण बनता है।

एक कदम आगे बढ़ते हुए वह बच्चे के व्यवहार को पर्यावरण, व्यवहार और ब्च्चे की मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के बीच अंत:क्रिया के परिणाम के रूप मे देखते हैं। वह मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में विभिन्न छवियों को मन में धारण करने की क्षमता और भाषा को भी रखते हैं और

इसी बिन्दु पर वह व्यवहरवादियों से अलग हो जाते हैं और संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों के समीप पहुँच जाते हैं। इसीलिए उन्हें अक्सर संज्ञानात्मक आंदोलन के पिता के रूप मे भी माना जाता है।

पारस्परिक नियतिवाद का संप्रत्यय क्या है?
बंडुरा बच्चे के व्यवहार को किन तीन बातों की अन्त:क्रिया का परिणाम मानते हैं?

अवलोकन सीखनाया मॉडलिंग (Observation Learning)

बंडुरा के अनुसार दूसरों के व्यवहारों के अवलोकन और उनके अनुकरण का हमारे सीखने मे महत्वपूर्ण स्थान है (बंडुरा, 1977)। हम बचपन से ही अपने आसपास के लोगों को देखकर, सुनकर व्यवहार करना सीखते हैं। हम जिनके व्यवहार को देखते हैं, उन्हें मॉडल कहते हैं। बंडुरा और उनके सहयोगियों ने अपने अध्ययन को प्रमाणित करने के लिए अनेक प्रयोग किए। बंडुरा के सैकड़ों अध्ययनों में से एक था बोबो डॉल अध्ययन, जिसमें उन्होंने अपनी एक युवा छात्रा की एक फिल्म बनाई जिसमें वह बोबो डॉल की पिटाई कर रही थी। बोबो डॉल एक तरह का हवा भरने वाला गुब्बारेनुमा खिलौना होता है जिसके निचले हिस्से मे वजन होता है और जिसे मारने पर वह वापस अपनी स्थिति में आकार खड़ी हो जाती है।

बोबो डॉल

उस युवती ने बोबो डॉल को मुक्का मारा, उसने उसे लात मारी, उस पर बैठी, थोड़ा हथौड़ा मारी, और आक्रामक तरीके से 'शोकेरो' चिल्लाती रही। बंडुरा ने किंडेरगार्टनर्स के समूह को अपनी यह फिल्म दिखाई, जो बच्चे ने बहुत पसंद की। फिर उन्हें खेलने के लिए एक प्ले रूम में भेज दिया गया। प्ले रूम में हाथ में पेन और क्लिपबोर्ड के साथ कई पर्यवेक्षक मौजूद थे और एक बिल्कुल नया बोबो डॉल, और कुछ छोटे हथौड़े भी।

पर्यवेक्षकों ने रिकॉर्ड किया कि बहुत से छोटे बच्चे ने बोबो डॉल की पिटाई की। उन्होंने इसे मुक्का मारा और चिल्लाया 'शोकेरो'। उन्होंने उसे लात मारी, उस पर बैठ गए और उसे छोटे हथौड़ों से मारा ठीक उसी तरह जिस तरीके से उन्होंने वीडियो में महिला को करते हुए देखा था।

प्रथम दृष्ट्या यह प्रयोग कुछ विशिष्ट नहीं लगता है लेकिन अगर विचार करें तो अवलोकन एवं सामाजिक सीखनाकी कितनी महत्वपूर्ण भूमिका बच्चे के सीखने में स्पष्ट होती है। बच्चे ने जो व्यवहार सीखा उसके लिए उन्हे किसी भी प्रकार का पुनर्बलन नहीं दिया गया था। इसके बावजूद बच्चे ने देखे हुए व्यवहार की नकल की और उसे सीख लिया। इसे ही अवलोकन का सिद्धांत या सामाजिक सीखनाका सिद्धांत कहा जाता है।

बंडुरा के इस प्रयोग की आलोचना मे यह कहा गया कि क्योंकि बोबो डॉल को पीटने के लिए ही बनाया जाता है। अतः हो सकता है कि बच्चे ने स्वतः ही उसे पीटना शुरू कर दिया हो। उनके सीखने में विडियो में दिखाई गई मॉडेल के अवलोकन की कोई भूमिका न रही हो। अतः इस आलोचना के जवाब में बंडुरा ने अपने अध्ययन मे कई परिवर्तन किए। उन्होंने मॉडल को विभिन्न तरीकों से पुरस्कृत या दंडित किया, बच्चे को उनकी नकल के लिए पुरस्कृत किया गया, मॉडल को कम आकर्षक या कम प्रतिष्ठित बनाया गया और इसी तरह बहुत कुछ। उन्होंने एक और फिल्म बनाई जिसमें अब बोबो डॉल की जगह एक जोकर के वेश में एक जीवित इंसान को रखा जिसकी पिटाई उस युवती द्वारा की गई। इस बार भी बच्चे को जब प्ले रूम में जीवित जोकर के साथ छोड़ा गया तो उन्होंने ठीक उसी तरीके का व्यवहार किया जैसा की उन्होंने बोबो डॉल के साथ किया था। इन सभी विविधताओं ने बंडुरा को यह स्थापित करने की अनुमति दी कि सीखने में अवलोकन की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। बच्चे कम उम्र में भी अपने आसपास मौजूद मॉडल जो उनके माता-पिता, भाई-बहन, नाते-रिश्तेदार, शिक्षक, टीवी के कार्टून कैरेक्टर, फिल्मी हस्तियाँ, इत्यादि को अवलोकन व अनुकरण करके स्वतः ही बहुत सी बातें सीख जाते हैं। मॉडल के व्यवहारों का अवलोकन और उनका अनुकरण करके सीखने की इस संप्रत्यय को अवलोकन सीखनाया मॉडलिंग (modelling) भी कहते हैं।

- Bandura के बोबो डॉल प्रयोग ने सीखने से सबंधित किन बातों पर प्रकाश डाला?
- मॉडलिंग सीखनाक्या है?
- सीखने मे पुनर्बलन की क्या भूमिका है?

अवलोकन से सीखने के कुछ प्रमुख कारक

बहुत से कारक और परिस्थितियाँ इस बात को निर्धारित करती हैं कि हम किन व्यवहारों, सूचनाओं और संप्रत्ययों को कितने लोगों से सीखेंगे। इनमें से ये चार कारक सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं (बंडुरा, 1986):-

1. **अवधान (Attention)** – अवलोकन से सीखने की जो सबसे पहली जरूरत है वो है अवधान की। अतः अवलोकन से सीखने के लिए सबसे पहली आवश्यकता है कि मॉडल

पर अवधान केंद्रित करें। अवधान की कमी या अनुपस्थिति की स्थिति मे कुछ भी सीखना संभव नहीं है। अतः अवधान को भंग करने वाली चीजों को दूर करने की जरूरत है जैसे – नींद, शोर-शराबा, नशा, बीमारी, घबराहट, अतिसक्रियता की अवस्था में सीखना संभव नहीं है।

इसके साथ-ही मॉडल की कुछ विशेषताएं अवधान को प्रभावित करती हैं, जैसे – यदि मॉडल रंगीन और नाटकीय है, तब हम उसपर ज्यादा ध्यान ठहरता हैं। यदि मॉडल आकर्षक, या प्रतिष्ठित है, या विशेष रूप से सक्षम प्रतीत होता है, तो हम उसपर अधिक ध्यान देते हैं। इसके उदाहरण हम बच्चे की कार्टून फिल्में, उनके हीरो और उनका बच्चे पर प्रभाव को देखकर समझ सकते हैं। इसलिए मॉडल को अधिक-से-अधिक आकर्षक बनाए जाने की जरूरत होती है।

2. **प्रतिधारण (Retention)** – सीखने वाले को यह याद करने में सक्षम होना चाहिए कि मॉडल ने क्या किया और क्या कहा। मॉडल के जिस व्यवहार को ध्यानपूर्वक देखा गया है उसका मानसिक छवियों एवं शाब्दिक विवरणों के रूप मे मस्तिष्क में संग्रहित होना जरूरी है जिससे आवश्यकता पड़ने पर उन छवियों को व्यवहार रूप मे परिणत किया जा सके।
3. **पुनः प्रस्तुतीकरण (Reproduction)** – इसका तात्पर्य है कि जिन व्यवहारों की मानसिक छवियाँ संग्रहित की गई हैं उनको वास्तविक व्यवहार में परिवर्तित करना अर्थात, स्मृतियों को व्यवहार में बदलने की क्षमता का होना। इसके लिए जरूरी है कि अधिगमकर्ता के पास व्यवहार को देखने, संग्रहित करने एवं उसे पुनः प्रस्तुत करने की क्षमता होनी चाहिए, जैसे – कोई दिन भर माइकल फ्लेप की तैराकी के विविध तरीके देख सकता है लेकिन अगर उसे तैरना ही नहीं आता होगा तो वह तैराकी के विविध तरीकों को अपने व्यवहार में प्रस्तुत नहीं कर पाएगा। हाँ, अगर उसे तैराकी आती है तो निश्चित ही माइकल फ्लेप को देखकर उसके प्रदर्शन मे सुधार होगा।

   पुनः प्रस्तुतीकरण के बारे में एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि इसमें शामिल व्यवहारों का जितना अभ्यास किया जाएगा उसके अनुकरण की हमारी क्षमता में भी सुधार होगा। हमारी क्षमताओं में सुधार तब भी होता है जब हम सिर्फ अपने आप को प्रदर्शन करने की कल्पना करते हैं, जैसे – कई एथलीट या डान्सर वास्तव में प्रदर्शन करने से पहले उसके प्रदर्शन की कल्पना करते हैं।

4. **प्रेरणा (Motivation)** – इस सब के साथ, हम अवलोकन से तब तक कुछ नहीं सीख सकते की जब तक उसका अनुकरण करने के लिए प्रेरित न हों, या जब तक हमारे पास उसके अनुकरण का कोई कारण न हो।

बंडुरा ने इस तरह के अनुकरण के पीछे कुछ सकारात्मक और कुछ नकारात्मक प्रेरणाओं को रेखांकित किया है, जो इस प्रकार हैं:-

- **अतीत में मिले पुनर्बलन** (**Past Reinforcement**) – रूढ़िवादी व्यवहारवाद के समान, अतीत में मिले पुरस्कार को याद करना अधिगमकर्ता के लिए प्रेरणा का काम करता है।
- **पुनर्बलन जिसका वादा किया गया हो** (**Promised/Imagined Reinforcement**) – पुरस्कार मिलने की कल्पना भी अधिगमकर्ता के लिए प्रेरणा का काम करती है।
- **प्रतिनिधिक पुनर्बलन** (**Vicarious Reinforcement**) – मॉडल को मिलने वाले पुरस्कार को देखकर या याद करके भी अधिगमकर्ता व्यवहार करने को प्रेरित होता है, जैसे – अपनी बहन या भाई के किसी काम करने पर उनको मिलने वाले पुरस्कार से प्रेरित होकर उस कार्य का अनुकरण करना।

बंडुरा इनको पुनर्बलक न मानकर केवल प्रेरणा (motivation) ही मानते हैं जिनकी भूमिका व्यवहार के सीखने में नहीं अपितु सीखे गए व्यवहार के प्रस्तुतीकरण में महत्वपूर्ण हैं (बॉयरी, 2018)।

नि:संदेह, कुछ नकारात्मक प्रेरणाएं भी हैं, जो अधिगमकर्ता को किसी के व्यवहार के अनुकरण से रोकती हैं।

- **अतीत की सजा** (**Past Punishment**) – अतीत में मिली कोई सजा अधिगमकर्ता को सीखे गए व्यवहार के प्रदर्शन न करने की प्रेरणा बनती है।
- **वादा की गई सजा (धमकियां)** (**Promised Punishment**) – भविष्य के लिए मिली हुई धमकियाँ या सजा की कल्पना जो सीखे गए व्यवहार के प्रदर्शित न करने की प्रेरणा बनती है।
- **प्रतिनिधिक सजा** (**Vicarious Punishment**) – मॉडल को मिलने वाली सजा को देखकर या याद करके सीखे गए व्यवहार को प्रदर्शित न करने की प्रेरणा।

प्रश्न

1. अवलोकन से सीखने के लिए किन बातों की आवश्यकता है?
2. अधिगमकर्ता की जैविक या शारीरिक स्थिति किस प्रकार से उसके अवधान को प्रभावित करती है?
3. मॉडल या आदर्श के कौन से गुण अधिगमकर्ता के अवधान को प्रभावित करते हैं?
4. सीखने में प्रतिधारण की क्या भूमिका है?
5. मानसिक छवियों के व्यवहार के रूप में पुन: प्रस्तुतीकरण के लिए अधिगमकर्ता में किन क्षमताओं का होना आवश्यक है?
6. सीखने में प्रेरणा की क्या भूमिका है?

अवलोकन और आक्रामकता

शोध यह बताते हैं कि आक्रामकता भी अवलोकन द्वारा सीखी जाती है (बैरन एवं रिचर्डसन, 1994, सेंटरवाल, 1989 एवं स्नीडर, 1991)। मीडिया और मनोरंजन के साधनों का हिंसा से भरा होना भी बच्चे को आक्रामक बनाता है (एरॉन, 1987)। हालांकि, कुछ शोध इस बात को खारिज भी करते हैं (फ्रीडमैन, 1986, विडम, 1989)। फिर भी, क्योंकि आजकल बच्चे अपना अधिकांश समय, टेलिविजन, सोशल मीडिया, कंप्युटर गेम्स, और इंटरनेट पर बिताते हैं इसलिए बच्चे के व्यवहार पर इसके पड़ने वाले नकारात्मक संभावित प्रभाव को दृष्टिगत रखते हुए सचेत रहने की जरूरत है।

स्व-नियमन (Self Regulation) - बंडुरा (1963) का विचार था कि अवलोकन द्वारा हम दूसरे से व्यवहार सीखने के साथ-ही आत्मावलोकन द्वारा अपने व्यवहारों का भी नियमन कर सकते हैं। इसके तीन चरण हैं:-

1. **आत्म अवलोकन** - हम अपने आप को, अपने व्यवहार को देखते हैं, और उस पर नजर रखते हैं।
2. **निर्णय** - हम मानक के साथ अपने व्यवहार की तुलना करते हैं। उदाहरण के लिए, एक सप्ताह में एक आर्टिकल लिख लेने के मानक व्यवहार से अपने व्यवहार की तुलना करना और उस मानक तक पहुँच पाने के लिए दूसरों के साथ या खुद के साथ प्रतिस्पर्धा करना।
3. **स्व-प्रतिक्रिया** - अपने मानक की तुलना में अच्छा प्रदर्शन करने पर अपने आप को पुरस्कार देना और खराब प्रदर्शन करने पर सजा देना।

लेकिन यह ध्यान रखने वाली बात है कि यदि, हम अपने आप को अपने मानकों पर खरा पाते हुए पुरस्कार देते हैं तो हमारे भीतर एक धनात्मक आत्म-अवधारण का विकास होता है और यदि हम हमेशा अपने मानकों को पूरा करने में विफल होते हैं और खुद को दंडित करते हैं, तो हमारी आत्म अवधारणा कमजोर होती है। इसलिए व्यवहारवादियों की ही तरह ही बंडुरा भी स्वयं को अत्यधिक दंड देने को घातक बताते हैं जिसके दुष्परिणाम नशा, आत्ममुग्धता, श्रेष्ठता ग्रन्थि, उदासीनता, ऊब, अवसाद एवं आत्महत्या तक हो सकते हैं।

1. **आत्म निरीक्षण के बारे में** - अपने आप को जानें! सुनिश्चित करें कि आपके पास अपने व्यवहार की एक सटीक तस्वीर है।
2. **मानकों के बारे में** - सुनिश्चित करें कि आपके मानक बहुत कठोर, बहुत सरल या अव्यावहारिक न हों।
3. **स्व-प्रतिक्रिया के बारे में** - स्व-पुरस्कार का उपयोग करें, न कि आत्म-दंड। अपनी जीत का जश्न मनाएं, अपनी विफलताओं पर ध्यान न दें।

प्रश्न

- स्व-नियमन द्वारा किस प्रकार से अपने व्यवहार में सुधार किया जा सकता है?
- स्व -नियमन करते समय किन बातों का ध्यान रखने की आवश्यकता है?
- स्वयं को अवांछित व्यवहार के लिए लगातार दंडित करने के क्या परिणाम हो सकते हैं?

स्व-नियंत्रण थेरपी (Self-Control Therapy) – बंडुरा के अवलोकन सीखनाका सिद्धांत एक तरफ तो जहाँ समाज के विभिन्न लोगों के संपर्क से सामाजिक व्यवहार सीखने की व्याख्या करता है वहीं दूसरी तरफ स्व-नियंत्रण से अपने अनुचित व्यवहार के सुधार की थेरेपी भी प्रदान करता है। जिसे स्व-नियंत्रण चिकित्सा भी कहा जाता है। यह आदत की अपेक्षाकृत सरल समस्याओं, जैसे - धूम्रपान, अधिक भोजन और अध्ययन की आदतों के नियमीकरण में काफी कारगर रहा है। इसके अंतर्गत निम्नलिखित चरण आते हैं जिसमें ब्च्चे अपने व्यवहार का अवलोकन करके उसके नियमीकरण और सुधार का कार्य करता है (बंडुरा,1963):-

1. **व्यवहार चार्ट**- आत्म-अवलोकन के लिए आवश्यक है कि अपने व्यवहार पर कड़ी नजर रखी जाए, जैसे - किसी ब्च्चे `को सिगरेट पीने की बुरी लत से छुटकारा पाने के लिए सबसे पहले इस बात का अवलोकन करना होगा कि वह दिन में कितनी बार सिगरेट पीता है और कब? क्या वह भोजन के बाद, कॉफी की साथ, कुछ दोस्तों के साथ, कुछ निश्चित स्थानों पर धूम्रपान करता है? इन विवरणों को चार्ट के रूप में डायरी में लिखा जा सकता है।
2. **पर्यावरण नियोजन** - अपने व्यवहार चार्ट और डायरियों से मदद लेते हुए अपने पर्यावरण को बदलना शुरू कर किया जा सकता है. उदाहरण के लिए, उन कुछ संकेतों को हटा सकते हैं या उनसे बच सकते हैं जो हमारे बुरे व्यवहार को जन्म देते हैं, जैसे - ऐशट्रे (सिगरेट के राख का पात्र)को दूर रखना, कॉफी के बजाय चाय पीना, धूम्रपान के साथियों से दूर रहना व उस स्थान और समय को किसी बेहतर काम के लिए चुनना जहां धूम्रपान करने की आदत हो।
3. **स्व-अनुबंध** - अंत में, अपनी योजना का पालन करने पर खुद को पुरस्कृत करने की व्यवस्था करना, और पालन करने से असफल होने पर दंडित करने की व्यवस्था करना। उदाहरण के तौर पर, यह अनुबंध खुद से किया जा सकता है, ''अगर मै पिछले सप्ताह की तुलना में इस सप्ताह कम सिगरेट पीता हूं तो मैं शनिवार की रात को बाहर खाना खाने जाऊँगा और अगर मैं सिगरेट कम नहीं कर पाता हूँ तो मैं ऑफिस का काम करूंगा''

यदि आप अपने साथ पर्याप्त रूप से सख्त नहीं हैं, तो आप अपने अन्य दोस्तों को भी इस पुरस्कार या दंड विधान मे शामिल कर सकते हैं।

प्रश्न

- स्व-नियंत्रण चिकित्सा क्या है?
- अपने व्यवहार से संबंधित विवरण हम किस प्रकार रख सकते हैं?
- बुरी आदतों से बचाव के लिए किस प्रकार से पर्यावरण नियोजन किया जा सकता है? स्व-अनुबंध के कुछ उदाहरण दीजिए।

मॉडलिंग थेरेपी

बंडुरा के अवलोकन सीखनापर आधारित सबसे प्रसिद्ध थेरेपी है, मॉडलिंग थेरेपी। इसके माध्यम से लोगों के विभिन्न प्रकार के डरों या फोबिया को दूर किया जाता है। बंडुरा का मूल शोध हर्पोफोबिया पर था, जिसमें साँप से डरने वाले ब्च्चे को एक प्रयोगशाला के कमरे की खिड़की की ओर ले जाया गया। उस कमरे में एक कुर्सी, एक मेज, और मेज पर एक पिंजरे में बंद कुंडी के साथ एक साँप दिख रहा था। फोबिक व्यक्ति एक दूसरे ब्च्चे (मॉडल) को देखता है साँप की तरफ डरते हुए धीरे-धीरे बढ़ते हुए जिसके चेहरे पर भय के चिन्ह हैं। मॉडल पहली बार में घबरा जाता है, वह खुद को रोक कर अपनी साँस सामान्य करता है फिर छोटे कदमों से साँप की तरफ धीरे-धीरे बढ़ता है। वह बीच में रुक जाता है, घबराहट में पीछे हट जाता है और फिर शुरू करता है। अंत में, वह उस बिंदु पर पहुँच जाता है जहाँ वह पिंजरे को खोलता है, साँप को हटाता है, कुर्सी पर बैठता है, और उसे अपनी गर्दन पर लपेटता है।

फोबिक बच्चे (क्लाइंट) को यह सब देखता है। देखता है कि मॉडल भी कोई असाधारण बच्चे नहीं है। इस एपिसोड के बाद उसका भय काफी हद तक कम हो जाता है। इस प्रकार यह भय दूर करने की एक शक्तिशाली चिकित्सा है।

कई बार ऐसी वास्तविक परिस्थितियाँ तैयार करना आसान नहीं होता। ऐसे में रिकॉर्ड किया हुआ वीडियो का भी इस्तेमाल किया जाता है(बॉयरी, 2018)।

मॉडलिंग थेरेपी क्या है?

मॉडलिंग थेरेपी का इस्तेमाल बच्चे में डर या फोबिया दूर करने के लिए किस प्रकार किया जा सकता है?

शैक्षिक निहितार्थ

- निश्चित रूप से, इस सिद्धांत का उपयोग बच्चे ंको सकारात्मक व्यवहार सिखाने के लिए किया जा सकता है। शिक्षक वांछित व्यवहार को बढ़ाने के लिए सकारात्मक रोल मॉडल का उपयोग कर सकते हैं क्योंकि बच्चे अपने आसपास के मॉडल को देखकर सीखते हैं।

अतः माता–पिता एवं शिक्षकों को बच्चे के सामने व्यवहार के उच्च आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए।

- सामाजिक मॉडलिंग शिक्षा का एक बहुत शक्तिशाली तरीका है। यदि बच्चे किसी विशेष प्रकार के व्यवहार से सकारात्मक परिणाम देखते हैं, तो वे स्वयं उस व्यवहार को दोहराने की अधिक संभावना रखते हैं। इसके विपरीत, यदि नकारात्मक परिणाम हैं, तो वे उस व्यवहार को करने की संभावना कम हैं। अतः इस प्रकार का वातावरण निर्मित हो कि बच्चे को अधिक-से-अधिक व विविध रोल मॉडल को देखने का अवसर प्राप्त होता रहे।
- क्योंकि यह सिद्धांत सकारात्मक वातावरण निर्माण पर जोर देता है, अतः बच्चे ोंमें वांछित व्यवहार के निर्माण के लिए घर, स्कूल एवं आस–पास के वातावरण एवं संस्कृति को अधिक–से–अधिक सकारात्मक एवं समावेशी होना चाहिए।
- सकारात्मक आत्म अवधारणा (Self-Concept) के विकास के लिए भी इस सिद्धांत से मदद ली जा सकती है। यदि कोई शिक्षक अपने बच्चे ोंमें यकीन रखता है, उनके साथ सकारात्मक है, वह उन्हें प्रोत्साहित करता है, तो यह सकारात्मक ऊर्जा और मौखिक प्रोत्साहन, बच्चे में सकारात्मक आत्म प्रत्यय का निर्माण करने में मदद करेगा।
- इसके अलावा, बंडुरा कहते है कि व्यक्तिगत अनुभव से हर एक चीज सीखना कठिन है और संभावित रूप से खतरनाक हो सकता है। उनका दावा है कि किसी बच्चे ेका जीवन सामाजिक अनुभवों में निहित होता है, इस प्रकार दूसरों का अवलोकन करना स्वाभाविक रूप से ज्ञान और कौशल प्राप्त करने के लिए फायदेमंद है।
- नए और अद्वितीय संदर्भ अक्सर बच्चे ोंका ध्यान आकर्षित करते हैं और स्मृति में अंकित हो सकते हैं। बच्चे ेध्यान देने के लिए अधिक प्रेरित होते हैं, यदि वे अपने आसपास दूसरों को भी ध्यान देते हुए देखते हैं। इसलिए यदि हम चाहते हैं कि बच्चे कुछ मॉडलों का अवलोकन और अनुसरण करें तो हमें उन मॉडलों को अधिक रंग–बिरंगा, अधिक आकर्षक और बच्चे के लिए अधिक नजदीकी लगने वाला बनाना चाहिए।
- अवलोकन और अनुकरण द्वारा सीखना बिना किसी भी प्रकार के पुरस्कार के भी जारी रहता है। सीखे गए व्यवहार के प्रदर्शन के लिए प्रेरणा की आवश्यकता होती है। अतः शिक्षकों को चाहिए कि बच्चे ोंके लिए अनुकूल उपर्युक्त प्रेरणा का चयन और प्रस्तुतीकरण करें।
- क्योंकि सीखनामें अवधान का विशेष महत्व है, अतः जब बच्चे थके हों या बीमार हों उस वक्त उन्हें नहीं सीखना चाहिए और ऐसी घटनाएं, परिस्थितियाँ या वस्तुएं जो अवधान को भंग करती हैं कक्षा से उन्हें दूर रखना चाहिए। विद्यालय शोर–शराबे वाली जगहों से दूर होना चाहिए।
- टेलिविजन, कार्टून और मीडिया के अन्य साधन बच्चे के सीखने में बहुत प्रभावी भूमिका निभाते हैं। बच्चे उनका अवलोकन और अनुकरण करते हैं। बच्चे के कार्टून भी कभी–कभी हिंसा, अपराध और यौन संकेतों से भरे होते हैं। अतः बच्चे की उम्र

के मुताबिक उनको यथा संभव हिंसा, अपराध, अनुपयुक्त भाषा एवं यौन व्यवहार वाले कार्यक्रमों से दूर रखना चाहिए। शिक्षक एवं घर परिवार के सदस्यों को ध्यान देना चाहिए कि बच्चे इस प्रकार के कार्यक्रम न देखें।

- इसके साथ-ही यह सिद्धांत आत्म नियमन और मॉडलिंग द्वारा अच्छी आदतों के विकास, बुरी आदतों एवं डरों को दूर करने की प्रविधियाँ देने के लिए भी महत्वपूर्ण है।

सामाजिक सीखनाके सिद्धांत को दृष्टिगत रखते हुए एक शिक्षक को अपने विद्यालय की विभिन्न शैक्षिक एवं संगठनात्मक प्रक्रियाओं में किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

सारांश

इस प्रकार से सामाजिक सीखनाका सिद्धांत सीखने में सामाजिक वातावरण के प्रभावों पर जोर देता है। यह कहता है कि बच्चे अपने समाज के विभिन्न व्यक्तियों के अवलोकन और अनुकरण द्वारा सामाजिक व्यवहार सीखते हैं। सामाजिक सीखनाका सिद्धांत सीखने में पुनर्बलन पर अत्यधिक जोर दिए जाने के व्यवहारवादी दृष्टिकोण को खारिज करते हुए कहता है कि सीखने के लिए पुनर्बलन की आवश्यकता नहीं है बल्कि सीखे गए व्यवहार के प्रदर्शन के लिए आवश्यक है। सामाजिक सीखनाका सिद्धांत पुनर्बलन के स्थान पर प्रेरणा पर बल देता है। सामाजिक सीखनासामाजिक वातावरण के सकारात्मक और समावेशी निर्माण पर जोर देता है।

सामाजिक-सांस्कृतिक सिद्धांत (वायगोतस्की)

परिचय

लेव वायगोत्स्की (1934) ने भी सीखनाऔर विकास में समाज और संस्कृति की भूमिका को महत्त्वपूर्ण माना। वायगोत्स्की ने कहा की व्यक्तिगत विकास को उस सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ के बिना नहीं समझ सकते जिसमें की बच्चा रहता है। बच्चे के सीखना और उसकी उच्च मानसिक प्रक्रियाओं का मूल उसकी सामाजिक अन्त:क्रियाओं में हैं। इनका सिद्धांत सीखनाऔर विकास के सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है जिसके अनुसार बच्चे समाज के अधिक जानकार सदस्यों के साथ सहयोगात्मक संवादों के माध्यम से अपने सांस्कृतिक मूल्यों, विश्वासों और समस्या को सुलझाने की रणनीतियों का अधिग्रहण करते हैं। वयगोसत्की के अनुसार समुदाय बच्चे को उनके आसपास के वातावरण के अर्थ बनाने (Meaning making) की प्रक्रिया में एक केंद्रीय भूमिका निभाता है। जिन प्याजे के विपरीत उन्होंने अधिगमकर्ता के सीखने मे उसकी अपनी स्वायत्त के साथ-ही समाज और समुदाय की भूमिका पर जोर दिया। हालाँकि कम उम्र में तपेदिक की बीमारी से उनकी मृत्यु की वजह से उनका कार्य अधूरा रह गया।

प्राथमिक मानसिक प्रक्रियाएं

वायगोत्स्की ने दावा किया कि शिशुओं में जन्म से ही चार प्रकार की बुनियादी क्षमताएं मौजूद होती हैं। वो इन्हें प्राथमिक मानसिक प्रक्रियाएं कहते हैं, ये हैं:-

1. अवधान (Attention)
2. संवेदना (Sensation)
3. अवधारणा (Perception)
4. स्मृति (Memory)

शुरू के दो वर्षो में ये वातावरण के सीधे संपर्क से विकसित होती हैं। बाद में भाषा की तेजी से विकसित होने से बच्चे के सोचने पर प्रभाव पड़ता है और फिर बच्चे सामाजिक संवादों में अपनी भागीदारी करने लगते हैं और इस तरीके से मानसिक प्रक्रियाएं समाज के साथ अन्त:क्रिया करके अधिक परिष्कृत होती जाती हैं और उच्च मानसिक क्षमताओं का विकास होता है।

वायगोसत्की ने मानसिक क्षमताओं मे विकास और सीखनाके लिए सामाजिक अन्त:क्रिया की कुछ खास विशेषताएं बताईं।

वायगोतस्की के अनुसार बच्चे में जन्म से ही कौन-कौन सी प्राथमिक मानसिक प्रक्रियाएं उपस्थित होती हैं?

अन्तरवैयक्तिकता (Inter-subjectivity) - वह प्रक्रिया है जिसमें दो बच्चे जो अलग-अलग समझ के साथ किसी एक कार्य को शुरू करते हैं, अंतत: एक साझी समझ पर पहुँच जाते हैं (न्यूसन-न्यूसन, 1975)। अन्तरवैयक्तिकता संचार के लिए एक साझा आधार प्रदान करता है जिसमें सभी साथी एक-दूसरे की समझ और दृष्टिकोण के साथ समायोजन करते हैं। वयस्क अपनी सूझ को बच्चे के समझ आ सकने लायक भाषा में सरलीकृत करके प्रस्तुत करते हैं और बच्चे वयस्कों की समझ तक अपनी समझ बढ़ाने का प्रयास करते हैं और अधिक परिपक्व समझ की ओर बढ़ते हैं। अन्तरवैयक्तिकता की क्षमता बच्चे में काफी पहले से ही आने लगती है। जब बच्चे और अभिभावक एक-दूसरे की तरफ देखते हैं, एक-दूसरे के शाब्दिक और भावनात्मक संकेतों को समझते हैं, किसी एक खिलौने के साथ मिलकर खेलते हैं, और सामने वाला क्या चाहता है यह समझना शुरू कर देते हैं (सीब्रा, 2010 एवं फेल्डमान, 2007)। भाषा का विकास होने के साथ साथ यह अन्तरवैयक्तिकता और परिष्कृत होती है। जैसे-जैसे बच्चे की बातचीत की कुशलता बढ़ती जाती है वह लोगों की सहायता मांगते हैं। तीन साल से पाँच साल की उम्र के बीच बच्चे आपसी संवादों मे अन्तरवैयक्तिकता खोजने लगते हैं। वह अपने खेल के साथियों से उनके विचार पूछते हैं, जैसे - "मैं गुड़िया के घर के बारे मे ये सोचता हूँ, तुम्हारा इस बारे में क्या विचार है?" बच्चे अपने साथियों के विचार को स्वीकार करते हैं, अपने विचार साझा करते हैं और इस प्रकार बच्चे एक-दूसरे अधिक जानकार अन्य के लिए (More Knowledgeable other) अंदर का

काम करते हैं और एक समीपस्थ विकास के क्षेत्र ZPD (Zone of Proximad Development)का निर्माण करते हैं।

सामाजिक अन्त:क्रिया में अंतरवैयक्तिकता क्या होती है? उदाहरण दीजिए।

अधिक जानकार अन्य (More Knowledgeable Others) – कुछ हद तक आत्म-व्याख्यात्मक है। यह किसी विशेष कार्य, प्रक्रिया, या अवधारणा के संबंध में सीखने वाले की तुलना में बेहतर समझ या उच्च क्षमता स्तर वाले ब्च्चे `को संदर्भित करता है। यद्यपि निहितार्थ यह है कि MKO एक शिक्षक या अधिक उम्र का वयस्क होता है, लेकिन यह जरूरी नहीं है। कई बार, एक बच्चे के हम उम्र साथी भी उससे अधिक जानते हैं, और कभी-कभी एक कम उम्र वाला बच्चे I भी किसी वयस्क के लिए MKO हो सकता है। उदाहरण के लिए आजकल के बच्चे कोडिंग करने, प्ले स्टेशन पर खेलने, अद्यतन तकनीकी का इस्तेमाल करने में कई वयस्कों से अधिक माहिर हैं। ऐसे में इस क्षेत्र की समझ बढ़ाने के लिए वो अपने वयस्कों के लिए अधिक जानकार अन्य (More Knowledgeable Others) हो सकते हैं। वास्तव में, अधिक जानकार अन्य (More Knowledgeable Others) को एक ब्च्चे `होने की आवश्यकता भी नहीं है। कई बार इलेक्ट्रॉनिक परफॉरमेंस सपोर्ट सिस्टम या इलेक्ट्रॉनिक टूटर भी एम के ओ का काम करता है।

अधिक जानकार अन्य (More Knowledgeable Others) की अवधारणा अभिन्न रूप से वायगोत्स्की के कार्य के दूसरे महत्वपूर्ण सिद्धांत, समीपस्थ विकास के क्षेत्र (Zone of Proximal Development) से संबंधित है।

समीपस्थ विकास का क्षेत्र (Zone of Proximal Development)

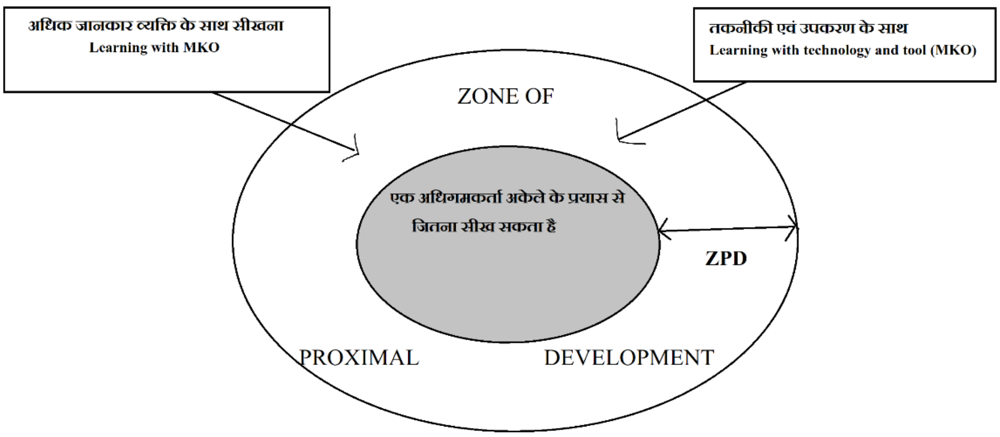

यह एक महत्वपूर्ण अवधारणा है जो इस बात से संबंधित है कि एक बच्चा स्वतंत्र रूप से कितना सीख सकता है? और एक कुशल साथी के मार्गदर्शन और प्रोत्साहन में कितना सीख सकता है। उदाहरण के लिए, जब एक बच्चा अपने आप से पहेली को हल नहीं कर सकता था और ऐसा करने में उसे लंबा समय लग रहा था और एक बिन्दु से वो आगे नहीं बढ़ पा रहा था। तभी उसके पिता उसके साथ आकर बैठे, और पिता के साथ बातचीत और उनके निर्देशन में वह उस पहेली को हल करने में सक्षम हुआ। अकेले सीखने गए की मात्रा और MKO के साथ सीखे गए की मात्रा में जो अंतर है उसे ही जोन ऑफ प्रॉक्सीमल डेवलपमेंट कहते हैं। वायगोत्स्की (1978) प्रोक्सिमल डेवलपमेंट के क्षेत्र को उस क्षेत्र के रूप में देखता है जहाँ सबसे संवेदनशील निर्देश या मार्गदर्शन दिया जाना चाहिए।

वायगोत्स्की (1978) के अनुसार, बच्चे की बहुत महत्त्वपूर्ण शिक्षा एक कुशल ट्यूटर जो बच्चे के माता–पिता, भाई–बहन, शिक्षक, मित्र कोई भी हो सकते हैं, के साथ सामाजिक संपर्क के माध्यम से होती है। ट्यूटर व्यवहार को मॉडल कर सकता है और/या बच्चे के लिए मौखिक निर्देश प्रदान कर सकता है। वायगोत्स्की ने इसे सहकारी या सहयोगी संवाद के रूप में संदर्भित किया है। बच्चा ट्यूटर (अक्सर माता–पिता, शिक्षक या बड़े भाई–बहन) द्वारा प्रदान किए गए कार्यो या निर्देशों को समझना चाहता है, फिर उस जानकारी को समझकर, उसका उपयोग अपने स्वयं के प्रदर्शन को निर्देशित और नियमित करने में करता है।

शफर (1996) एक युवा लड़की का उदाहरण देते हैं, जिसे उसकी पहली जिग्स, पहेली दी जाती है। अकेले, वह पहेली को सुलझाने की कोशिश करती है लेकिन खराब प्रदर्शन करती है। फिर उसके साथ उसके पिता बैठते हैं और उसे पहेली सुलझाने के लिए कुछ बुनियादी रणनीतियों का वर्णन करते हैं। उसे बताते हैं कि पहेली को बनाने के लिए किन–किन कोनों को देखना चाहिए। वह उसे कुछ टुकड़े जोड़कर भी दिखाते हैं और जरूरत पड़ने पर प्रोत्साहन भी देते हैं। जैसे–जैसे बच्चे ी अधिक सक्षम होती जाती है, पिता बच्चे को अधिक स्वतंत्र रूप से काम करने की अनुमति देता है। इसमें पिता ने बच्चे ी के लिए एम के ओ की भूमिका का निर्वाहन किया और बच्चे ी के व्यक्तिगत रूप से पहेली सुलझाने की क्षमता और MKO के मार्गदर्शन मे पहेली सुलझा सकने की क्षमता का अंतर की जोन ZPD ऑफ प्रॉक्सीमल डेवलपमेंट कहा जाता है।

फ्रायड (1990) ने एक अध्ययन किया, जिसमें बच्चे को यह तय करना था कि एक गुड़िया घर के विशेष क्षेत्रों में फर्नीचर के कौन से आइटम रखे जाएं। कुछ बच्चे को अपनी माँ के साथ एक समान स्थिति में खेलने की अनुमति दी गई थी जबकि अन्य को इस पर अकेले काम करने की अनुमति दी गई थी। फ्रायड ने पाया कि जो लोग पहले अपनी मां (एम के ओ) के साथ काम करते थे, उन्होंने कार्य में अपने पहले प्रयास की तुलना में बहुत बड़ा सुधार दिखाया। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अकेले सीखने की तुलना में ZPD के भीतर एम के ओ के निर्देशन में सीखने से सीखना अधिक एवं प्रभावपूर्ण होता है।

वायगोत्स्की के अनुसार, इस प्रकार की सामाजिक सहभागिता जिसमें सहकारी या सहयोगी संवाद शामिल है, संज्ञानात्मक विकास को बढ़ावा देती है। वायगोतस्की के अनुसार बच्चे के सांस्कृतिक विकास में प्रत्येक क्रिया दो बार होती है, पहले सामाजिक स्तर पर दूसरी बार बच्चे के भीतर (वायगोसत्की, 1978)। उच्चस्तरीय मानसिक प्रक्रियाएं पहले सामाजिक अंत:क्रिया द्वारा उत्पन्न होती हैं उसके बाद बच्चे द्वारा उसका आत्मसातिकरण किया जाता है। (वुलफोक, 2009)।

प्रश्न

- अधिक अनुभवी अन्य कौन-कौन हो सकते हैं?
- अधिक अनुभवी अन्य की सीखनामें क्या भूमिका है?
- समीपस्थ विकास का क्षेत्र क्या है? उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए?

स्केफोलडिंग (Scaffolding) – इस प्रकार की सामाजिक अन्त:क्रिया की एक और विशेषता है स्केफोलडिंग (Scaffolding) जिसका अर्थ है बच्चे की वर्तमान योग्यता को दृष्टिगत रखते हुए एम के ओ के द्वारा दिए जा रहे सपोर्ट को समायोजित करना। जब बच्चे को किसी कार्य मे कैसे आगे बढ़ना है की बिल्कुल जानकारी न हो या कम जानकारी हो तब उसे सीधे निर्देशन दिया जाता है, कार्य को छोटे-छोटे हिस्सों मे तोड़कर बच्चे के सामने प्रस्तुत किया जाता है, बच्चे को विभिन्न रणनीतियाँ सुझाया जाता है और उन रणनीतियों को क्यों इस्तेमाल किया जाए इसके बारे में बताया जाता है। जैसे-जैसे बच्चे की क्षमता बढ़ती जाती है और वह कार्य मे आगे बढ़त जाता है, धीरे-धीरे, संवेदनशील तरीके से दिए जा रहे सपोर्ट को कम किया जाता है और उसे स्वतंत्र रूप से कार्य करने को प्रेरित किया जाता है। इस प्रकार सपोर्ट कम कर दिए जाने पर भी बच्चा शिक्षक के साथ हुई बातचीत का आत्मसाती करण करता हुआ आगे बढ़ता है और प्राइवेट स्पीच का इस्तेमाल करते हुए अपने कार्यो को स्वयं ही रेग्यूलैट करना शुरू कर देता है।

स्केफोलडिंग विद्यालय या विद्यालय जैसी क्रियाओं, जैसे - पहेली सुलझाना, मॉडल बनाना, चित्र मिलान करना या कोई अन्य अकादमिक कार्य पूरा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दूसरों के साथ मिलकर सीखने के इस विविध अवसर को बारबरा रोगऑफ (1998-2003) गाइडेड पार्टसिपशर्न्ट (Guided Participation) कहती हैं जो स्केफोलडिंग से भी विस्तृत है और जिसका अर्थ है अधिक अनुभवी और कम अनुभवी सहभागियों के बीच के साझे प्रयास जो की परिस्थितियों और संस्कृति के साथ बदलते रहते हैं।

प्रश्न

- शैक्षिक परिस्थितियों में स्केफोलडिंग कैसे काम करती है?

- एक शिक्षक किस प्रकार से अपने बच्चे ोंको स्केफोलडिंग प्रदान कर सकता है?

मेक बिलीव प्ले (Make Believe Play)

बच्चे के सीखनाऔर विकास में मेक बिलीव प्ले की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वयगोत्स्की (1978) इसे एक अद्वितीय और बहुत ज्यादा प्रभावी जोन ऑफ प्रॉक्सीमल डेवेलपमेन्ट स्वीकार करते हैं, जिसमें बच्चे अपने आपको विभिन्न परिस्थितियों में रखने की कल्पना करके खेलते हैं और उनका संज्ञानात्मक विकास परिष्कृत होता जाता है। बच्चे मे पूर्व विद्यालयी वर्षो मे यह उनके विकास और सीखनामें केन्द्रीय भूमिका निभाता है। इसके द्वारा बच्चे एक कल्पनात्मक परिस्थिति का निर्माण करते हैं जैसे - डॉक्टर की भूमिका निभाना, माँ की भूमिका निभाना, कुत्ते को टहलाने ले जाना इत्यादि और अपनी आंतरिक कल्पनाओं के अनुरूप कार्य करना सीखते हैं न कि बाहरी उद्दीपकों के अनुसार कार्य करना। इन खेलों मे वह चीजों के असल अर्थ बदल देते हैं जैसे छड़ी को घोडा कहना, तकिये को बच्चे ा कहना, अखबार को कपड़ा कहना, कंकड़ के टुकड़ों को दवाई कहना, झाड़ू की सींक को इन्जेक्शन कहना इत्यादि। इसके साथ ही यह खेल क्योंकि नियम आधारित होते हैं तो कार्य करने से पहले बच्चे सोचना शुरू करते हैं और उनकी ये क्षमता परिष्कृत होती जाती है। खेल के नियमों के पालन मे बच्चे लगातार अपने संवेगों के विपरीत काम करते हुए सामाजिक नियमों का पालन करना सीखते हैं, जैसे - सोने की ऐक्टिंग करते समय बच्चे को नींद न आने पर भी बेड टाइम के नियमों का पालन करना होता है। एक बच्चे ा जो कि पिता बना हुआ है और एक गुड़िया उसकी बेटी तो उस वक्ता उसे पिता के व्यवहार के नियम का पालन करना होता है (बॉडरोवा और लेओंग, 2007)। ऐसे करके बच्चे सामाजिक नियमों और अपेक्षाओं के अनुरूप व्यवहार करना सीखते हैं। अनेक शोध इस बात की तरफ इशारा करते हैं कि जो बच्चे ये सामाजिक नाटक वाले खेल ज्यादा खेलते हैं वह कक्षा के नियमों के पालन में, अपनी भावनाओं और व्यवहार के नियमन में दूसरे बच्चे से बेहतर होते हैं (बर्क,मन और ऑगन, 2006, लेमचे और अन्य, 2003)।

प्रश्न

- मेक बिलीव प्ले क्या होता है?
- बच्चे के सीखने में मेक बिलीव प्ले की क्या भूमिका है?
- एक शिक्षक पूर्व बाल्यावस्था के बच्चे के लिए मेक बिलीव प्ले का उपयोग कैसे कर सकता है?

भाषा और उसका प्रभाव

वायगोत्स्की का मानना था कि सामाजिक संपर्क से भाषा तेजी से विकसित होती है। वायगोत्स्की (1962) के अनुसार भाषा संज्ञानात्मक विकास में दो महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाती है:-

- यह मुख्य साधन है जिसके द्वारा वयस्क बच्चे को जानकारी प्रेषित करते हैं।
- भाषा बौद्धिक अनुकूलन के लिए शक्तिशाली साधन बन जाती है।

वायगोत्स्की (1987) नें भाषा के तीन रूप बताए:-

सामाजिक भाषण (Social Speech) - यह लोगों तक अपनी बात पहुँचने के लिए की जाती है। जिसका इस्तेमाल बच्चे दो साल की उम्र से करना शुरू कर देते हैं।

निजी भाषण (Private Speech) - निजी भाषण स्वयं को संबोधित भाषण है (दूसरों को नहीं)। 'निजी भाषण को आमतौर पर परिभाषित किया जाता है, सामाजिक भाषण के विपरीत, स्व-विनियमन (संचार के बजाय) के उद्देश्य से' (डियाज, 1992 पी। 62)

प्राइवेट स्पीच - इसका इस्तेमाल बच्चे अपने कार्यो का व्यवस्थापन और नियमन करने के लिए करते हैं। इसका इस्तेमाल बच्चे ज्यादातर तीन साल से छः साल के बच्चे मे देखा जाता है। हम अक्सर ही जब उस उम्र के बच्चे को खेलते हुए देखते हैं तो देखेंगे कि वे अक्सर खुद से जोर से बात करते हैं। उदाहरण के लिए अगर कोई 4-वर्षीय बच्चे ा किसी पज़ल को बनाने में लगा हुआ है तो वह अक्सर ही इस प्रकार की बातें कहते हुए सुना जा सकता है 'लाल टुकड़ा कहाँ है? मुझे लाल की जरूरत है और अब एक नीला। नहीं, यह ठीक नहीं है। इसे यहाँ लगाया जाए'।

वायगोत्स्की ने निजी भाषण को सामाजिक और आंतरिक भाषण के बीच संक्रमण बिंदु के रूप में माना, विकास का वह क्षण जहां भाषा और विचार मौखिक विचार के रूप में संगठित हो जाती है। इसे इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'विकास में एक क्रांति जो तब शुरू होती है जब पूर्ववर्ती विचार और पूर्व-बौद्धिक भाषा एक साथ मिलकर मानसिक रूप से नए रूप में कार्य करती है।' (फर्नीफ और फ्रैडले, 2005: पी। 1)।

वायगोत्स्की (1987) ने कहा कि निजी भाषण केवल एक बच्चे की गतिविधि के रूस में नहीं होता है, बल्कि विकासशील बच्चे द्वारा संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को सुविधाजनक बनाने के लिए उपयोग किए जाने वाले उपकरण के रूप में कार्य करता है, जैसे कि कार्य में आने वाली बाधाओं पर काबू पाने, कल्पनाशीलता, सोच और जागरूकता को बढ़ाने के लिए।

वायगोत्स्की (1987) का मानना है कि निजी भाषण का अधिक इस्तेमाल करने वाले बच्चे में सामाजिक क्षमता औरों से बेहतर होती है। बर्क (1986) ने भी निजी भाषण की इस धारणा को

अनुभवजन्य समर्थन प्रदान किया। उन्होंने पाया कि बच्चे द्वारा प्रदर्शित अधिकांश निजी भाषण बच्चे के कार्यो का वर्णन या मार्गदर्शन करने का कार्य करता है।

शोध से पता चला है कि बच्चे का निजी भाषण आमतौर पर 3-4 साल की उम्र में होता है, जो 6-7 साल की उम्र में कम हो जाता है, और धीरे-धीरे ज्यादातर 10 साल की उम्र तक समाप्त हो जाता है (डियाज, 1992)। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं निजी भाषण का उपयोग कम हो जाता है। और आत्म-विनिमयन के लिए आंतरिक भाषण का इस्तेमाल करने लगते हैं।

आंतरिक भाषण (Inner Speech) - प्राइवेट स्पीच सात साल और उसके आसपास इनर स्पीच मे बदल जाती है, जिसमें अब बच्चे अपने कार्यो और उनके नियमन के संबंध में मन में विचार करने लगते हैं।

प्याजे के विपरीत वयगोतस्की मानते हैं कि पहले भाषा का विकास होता है, भाषा के माध्यम से बच्चे ा अपने आस पास के समाज से अन्त:क्रिया करता है, और समाज के लॉगिन के साथ इस अन्त:क्रिया का उसके संज्ञानात्मक विकास में योगदान होता है। वायगोत्स्की के अनुसार संज्ञानातामक विकास भाषा के माध्यम से समाज के सदस्यों के साथ हुई अन्त:क्रिया का परिणाम है।

संज्ञानात्मक और भाषाई रूप से उत्तेजक वातावरण (उच्च सामाजिक आर्थिक स्थिति वाले परिवारों में अधिक बार देखी जाने वाली स्थितियों) में पले-बढ़े बच्चे े, कम विशेषाधिकार प्राप्त पृष्ठभूमि वाले बच्चे की तुलना में निजी भाषण का उपयोग और तेज करना शुरू कर देते हैं। दरअसल, कम मौखिक और सामाजिक आदान-प्रदान की विशेषता वाले वातावरण में उठाए गए बच्चे निजी भाषण विकास में देरी का प्रदर्शन करते हैं।

प्रश्न

- भाषा का विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है?
- वयगोसत्की के अनुसार भाषण कितने प्रकार के होते हैं?
- निजी भाषण की बच्चे के सीखने और विकास में क्या भूमिका है?

सीखनाऔर विकास में सांस्कृतिक भिन्नता

वायगोसत्की प्याजे के उलट यह बात कहते हैं कि संज्ञानात्मक विकास संस्कृति मुक्त नहीं है। यह विभिन्न संस्कृतियों में विकास के सार्वभौमिक चरणों मे नहीं होता है, अपितु विभिन्न संस्कृतियों में बच्चे का संज्ञानात्मक विकास अलग-अलग ढंग से होता है।

वायगोत्स्की के अनुसार बच्चे जिस वातावरण मे रहते हैं वह प्रभावित करेगा कि वे कैसे सोचते हैं और वे क्या सोचते हैं। प्रत्येक संस्कृति अपने बच्चे को बौद्धिक अनुकूलन के उपकरण प्रदान

करती है जो उन्हें बुनियादी मानसिक कार्यो को अधिक प्रभावी ढंग से, अनुकूल तरीके से उपयोग करने की अनुमति देते हैं।

उदाहरण के लिए, छोटे बच्चे में स्मृति जैविक कारकों द्वारा निर्धारित होती है। फिर भी हमारी, संस्कृति निर्धारित करती है कि हम किस प्रकार की स्मृति युक्तियों का विकास करते हैं। अलग-अलग संस्कृतियों मे याद रखने के लिए अलग-अलग युक्तियों का प्रयोग किया जाता है, जैसे - पश्चिमी संस्कृति में, बच्चे याद रखने के लिए नोट लेना सीखते हैं। असाक्षर समाजों में दीवार पर रेखाएं खीचना, रस्सी में गांठ लगाना, दुपट्टे के कोर में गांठ बांधना, या पत्थर के छोटे टुकड़ों को इकट्ठा करना इत्यादि याद करने की युक्तियाँ इस्तेमाल की जाती हैं। इस प्रकार विभिन्न सस्कृतियों के बौद्धिक अनुकूलन के उपकरण, विश्वास, मूल्य अलग-अलग होते हैं जिससे बच्चे के विकास पर प्रभाव पड़ता है।

बच्चे के सीखना और मानसिक विकास पर पड़ने वाले सांस्कृतिक प्रभावों को हम उस संस्कृति में MKO की उपलब्धता के संदर्भ से भी समझ सकते हैं।

मेक बिलीव प्ले की शुरुआत माताएँ अपने छोटे बच्चे के साथ करती हैं। वह उन्हें देखती हैं, मुस्कुराती हैं, संकेत देती हैं, छुपने की भूमिका निभाती हैं फिर धीरे-धीरे बच्चे भी इसमें सहभाग करने लगते हैं, जो उनकी उम्र के दूसरे और तीसरे साल तक काफी बढ़ जाता है।

जैसे कुछ एकल परिवार संस्कृतियाँ जिसमें बच्चे के माता-पिता दोनों काम करते होंगें वहाँ बच्चे के लिए MKO के अवसरों की उपलब्धता सीमित होगी और साथ-ही मेक बिलीव प्ले के अवसर कम होंगे। ऐसे संयुक्त परिवार जहाँ पिता बाहर काम करते हैं और माता काम की अधिकता की वजह से अपने बच्चे को समय नहीं दे पाती वहाँ भी बच्चे के लिए इस तरीके के सामाजिक अन्त:क्रिया के अवसर कम होंगे। संयुक्त परिवारों में जहां कामों मे साझेदारी होती है और बच्चे के पालन-पोषण की जिम्मेदारी साझी होती हैं वहाँ छोटे बच्चे के किए MKO की उपलब्धता होगी और मेक बिलीव प्ले के प्रचूर अवसर मिलेंगे। जिन परिवारों में एकल बच्चे की परंपरा नहीं है ऐसे परिवारों में बड़ा बच्चा अपने छोटे भाई-बहन के लिए MKO की जिम्मेदारी पूर्ण भूमिका निभाता/निभाती है। मेक बिलीव प्ले की अधिकता के कारण छोटे बच्चे के सीखने और संज्ञानात्मक विकास को गति मिलती है।

एक अध्ययन (मोरेली, रोगोफ, एवं एंजेलिलो, 2003) में चार विभिन्न संस्कृतियों के दो वर्ष से तीन वर्ष की उम्र के बच्चे के दैनिक जीवन को देखा गया। इसमें दो अमेरिकन मध्यवर्गीय संस्कृतियाँ थीं, एक कांगो रिपब्लिक के एफे शिकारी और संग्रहकर्ता और एक ग्वाटेमाल के माया कृषि संस्कृति के बच्चा अध्ययन में पाया गया कि पश्चिमी संस्कृतियों में जहाँ बच्चे को वयस्कों के कामों से अलग रखा जाता है वहाँ कार्यकुशलता सिखाने की जिम्मेदारी विद्यालयों की होती है, वहीं बच्चे को विभिन्न काम करने को दिए जाते हैं। पूर्व बाल्यावस्था में ही बच्चे को

बालकेंद्रित बातचीत और खेलों के माध्यम से विद्यालय के लिए तैयार किया जाता है। लेकिन आदिवासी एवं ग्रामीण संस्कृतियों में बच्चे बड़े के कामों में शुरू से ही सलंगन रहते हैं और बहुत कम उम्र से ही परिपक्व जिम्मेदारियों की तैयारी शुरू हो जाती है (रोगोफ एवं अन्य, 2003)। ऐसी संस्कृतियों में बच्चे को सिखाने के लिए बालकेंद्रित खेलों और बात चीत की जरूरत नहीं होती है। ऐसी संस्कृतियों में बच्चे बहुत कम उम्र से ही अपने कामों के लिए स्वावलंबी हो जाते हैं। वह छोटे-छोटे निर्णय स्वयं लेने लगते हैं कि कितना सोना है, कब जागना है, उठकर बिस्तर ठीक करना है, कितना खाना है, कब नहाना है, क्या पहनना है इत्यादि। इन संस्कृतियों मे बच्चे अपनी देखभाल के लिए कम उम्र में ही निपुण हो जाते हैं। पश्चिमी संस्कृतियों के समान उम्र के बच्चे जिन कामों से बचते हैं ये बच्चे उन्हें उत्सुकतापूर्वक करते हैं और पाँच वर्ष की उम्र तक पहुंचते पहुंचते दिए गए कामों के अलावा भी अपनी मर्जी से विभिन्न कामों मे सहयोग करने लगते हैं।

ये अध्ययन वायगोत्स्की की इस अवधारणा की पुष्टि करते हैं कि विभिन्न संस्कृतियों में सामाजिक अन्त:क्रिया के स्तरों और ढंग में काफी अंतर होता है। और विभिन्न संस्कृतियाँ अपने विशिष्ट बौद्धिक उपकरण अपनी संस्कृति के बच्चे को प्रदान करती हैं अत: बच्चे का सीखना और संज्ञानात्मक विकास मे अंतर होता है।

प्रश्न

- संस्कृति सीखनाऔर विकास पर क्या प्रभाव डालती है?
- विभिन्न संस्कृतियों में सीखनाऔर विकास भिन्न क्यों होता है?

शैक्षिक निहितार्थ

जैसा की वायगोसत्की कहते हैं कि बच्चे के सीखने और संज्ञानात्मक विकास में सामाजिक अन्त:क्रिया की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। अत: एक अभिभावक या शिक्षक को बच्चे को इस प्रकार का अवसर देना चाहिए कि घर व विद्यालय में अपने सहपाठियों, शिक्षकों एवं समुदाय के सदस्यों के साथ ज्यादा-से-ज्यादा अन्त:क्रिया कर सकें। इसके लिए शिक्षक साथी शिक्षण (Peer Tutoring), सहयोगी सीखना(Co-operative Learning) एवं व्युत्क्रम शिक्षण (Reciprocal Teaching) विधियों का इस्तेमाल कर सकता है।

अभिभावक एवं शिक्षक को चाहिए कि जब बच्चे किसी जटिल कार्य में लगे हों तो उनकी समझ के स्तर के अनुरूप उन्हें उस कार्य को करने के लिए सहायता प्रदान करें। शिक्षक उन्हें उस कार्य को करने के विभिन्न तरीके बात सकता है, कार्य को छोटे-छोटे आसान चरणों में बाँटकर प्रस्तुत कर सकता है, उस कार्य को करके दिखा सकता है, बच्चों को अभिप्रेरणा दे सकता है, उन्हें माइन्ड मैप, कान्सेप्ट मैप प्रदान करके सहायता दे सकता है। लेकिन साथ-ही शिक्षक यह भी ध्यान रखें कि जैसे-जैसे कार्य आगे बढ़े और बच्चे की क्षमता का विकास हो शिक्षक को अपनी

सहायता धीरे-धीरे कम करते जानी चाहिए जिससे की बच्चे स्वायत्त एवं स्वतंत्र रूप से कार्य करना सीखें।

क्योंकि भाषा और भाषा के माध्यम से हुई सामाजिक अन्त:क्रिया का बच्चे के सीखनाऔर संज्ञानात्मक विकास में बहुत बड़ा योगदान है। अत: अभिभावक एवं शिक्षक को घर और विद्यालय में बच्चे को उर्वर भाषाई माहौल प्रदान करना चाहिए और घर और विद्यालय में बच्चे से हर विषय पर बातचीत का उत्तम माहौल बनाना चाहिए।

जैसा कि अध्ययनों से स्पष्ट किया है कि निजी भाषण के बच्चे सामाजिक रूप से दक्ष होते हैं, उनमें कल्पनाशीलता और जागरूकता बढ़ती है। अत: अभिभावक और शिक्षकों को चाहिए कि निजी भाषण के समय वह बच्चे को टोकें नहीं वरन उनको इस तरह के काम दें जिससे कि बच्चे को निजी भाषण का पर्याप्त अवसर मिले। जैसा की अध्ययन यह भी संकेत देते हैं कि यदि कार्य अत्यधिक सरल या अत्यधिक कठिन होगा तो बच्चे का उनके साथ संलग्न होने और निजी भाषण द्वारा उनका नियमन करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। अत: बच्चे को कार्य देते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कार्य अत्यधिक सरल या अत्यधिक कठिन न हो।

जैसा कि स्पष्ट है, हमारी संस्कृति हमें समस्या समाधान जे लिए अनेक बौद्धिक उपकरण देती है। अत: पढ़ते-पढ़ाते समय शिक्षक को बच्चे के सांस्कृतिक संदर्भ और पृष्ठभूमि का ध्यान रखना चाहिए और ज्ञान को उससे जोड़ने का प्रयास करना चाहिए।

क्योंकि मेक बिलीव प्ले के माध्यम से बच्चे दूसरों के दृष्टिकोण समझना सीखते हैं। वह सामाजिक मानकों को पालन करना और सामाजिक व्यवहार करना सीखते हैं। अत: अभिभावकों और शिक्षकों को चाहिए कि छोटे बच्चे को इसका पर्याप्त अवसर प्रदान करें और साथ-ही उनके साथ इस तरह के खेलों मे संलग्न हों।

प्रश्न

- वायगोत्स्की का सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धांत के शैक्षिक निहितार्थ क्या हैं?
- एक शिक्षक के रूप में वायगोत्स्की के सिद्धनत से अंतर्दृष्टि लेते हुए आप किस प्रकार से अपनी शिक्षण सीखनाप्रक्रिया को डिजाइन करेंगे?

आलोचना

वायगोत्स्की ने सीखने और विकास में समाज और संस्कृति की महत्त्वपूर्ण भूमिका को उद्‌घाटित किया और बताया कि सीखना और विकास सभी समाजों और संस्कृतियों में एक तरह से नहीं होता है। इसके साथ ही यह भी उद्‌घाटित किया कि किस प्रकार अधिक अनुभवी ब्च्चे `की संगत में सीखना संज्ञानात्मक विकास को गति देता है। यह उनके सिद्धांत की देन थी मगर यह सिद्धांत भी आलोचनाओं से नहीं बच सका। वायगोत्स्की का काम समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में ज्यां

प्याजे के समान कई विशिष्ट परिकल्पनाएं नहीं दे सका जिनकी जाँच संभव हो। वायगोत्स्की के काम की मुख्य आलोचना उनकी इस धारणा में निहित है कि उनका सिद्धांत सार्वभौमिक रूप से सभी संस्कृतियों के लिए प्रासंगिक है। रोगॉफ (1990) ने इस विचार को खारिज कर दिया कि वायगोत्स्की के विचार सांस्कृतिक रूप से सार्वभौमिक हैं। उन्होंने यह भी कहा कि स्केफोलडिंग का संप्रत्यय जो कि मौखिक निर्देशन पर निर्भर है वह भी सभी संस्कृतियों में समान नहीं होता। यह पश्चिमी मध्यवर्गीय संस्कृतियों के संदर्भ में तो ठीक हो सकता है लेकिन आदिवासी और ग्रामीण समाजों में बच्चे को मौखिक निर्देश कम दिए जाते हैं। उनसे उम्मीद होती है कि वह कुछ कार्यो का अवलोकन करके और उसमें भागीदारी करके सीखें और वास्तव में, कुछ कौशलों को सीखने में अवलोकन और अभ्यास सीखने के अधिक प्रभावी तरीके हो सकते हैं (पैरडाइस एवं रोगोफ, 2009यरोगोफ, 2003)।

- वायगोतस्की के सिद्धांत की प्रमुख आलोचनाएं क्या हैं?

सारांश

इनका सिद्धांत सीखनाऔर विकास के सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता है जिसके अनुसार बच्चे समाज के अधिक जानकार सदस्यों के साथ सहयोगात्मक संवादों के माध्यम से अपने सांस्कृतिक मूल्यों, विश्वासों और समस्या को सुलझाने की रणनीतियों का अधिग्रहण करते हैं। बच्चे अपनी प्राथमिक मानसिक क्रियाओं अवधान, संवेदना, अवधारण और स्मृति के आधार पर सामाजिक अन्त:क्रिया करते हुए इन मानसिक क्रियाओं को परिष्कृत करते जाते हैं। अन्त:क्रिया की एक विशेषता है अन्तरवैयक्तिकता (Inter-subjectivity)। यह वह प्रक्रिया है जिसमें दो बच्चे जो अलग-अलग समझ के साथ किसी एक कार्य को शुरू करते हैं, अंततः एक साझी समझ पर पहुँच जाते हैं। सामाजिक अंत:क्रिया से सीखने के लिए आवश्यक है कि सीखने वाला बच्चे अपने से अधिक जानने वाले के साथ अन्त:क्रिया करे। किसी विशेष कार्य, प्रक्रिया, या अवधारणा के संबंध में सीखने वाले की तुलना में बेहतर समझ या उच्च क्षमता स्तर वाले ब्च्चे को ही MKO अदर के नाम से जानते हैं। यह सहपाठी, शिक्षक, माता–पिता, भाई-बहन या इलेक्ट्रॉनिक ट्यूटर भी हो सकते हैं। अधिगमकर्ता द्वारा व्यक्तिगत प्रयासों से सीखे गए की मात्रा और मोर नॉलेजिबले अदर के साथ अन्त:क्रिया करके सीखने की मात्रा में जो अंतर होता है उसे जोन ऑफ प्रॉक्सीमल डेवलपमेंट कहते हैं। मोर नॉलेजिबले अदर अधिगमकर्ता को कोई कार्य सिखाने के लिए मौखिक निर्देश देता है, अभिप्रेरित करता है, कार्य को छोटे-छोटे टुकड़ों में बाटकर प्रस्तुत करता है और कार्य से संबंधित विभिन्न सुझाव और रणनीतियाँ सुझाता है। जैसे-जैसे अधिगमकर्ता की समझ बढ़ती जाती है वैसे-वैसे सहायता कम करता जाता है। सीखनामें सहायता करने की इस प्रविधि को स्केफोलिडिंग कहते हैं। इसके साथ-ही वायगोत्स्की (1978) मेक बीलीव प्ले को भी एक अद्वितीय और बहुत ज्यादा प्रभावी जोन ऑफ प्रॉक्सीमल डेवेलप्मेन्ट स्वीकार करते हैं, जिसमें बच्चे एक कल्पनात्मक परिस्थिति का निर्माण करते हैं, जैसे - डॉक्टर की भूमिका निभाना, माँ की

भूमिका निभाना, कुत्ते को टहलाने ले जाना इत्यादि और अपनी आंतरिक कल्पनाओं के अनुरूप कार्य करना सीखते हैं न कि बाहरी उद्दीपकों के अनुसार कार्य करना। इस तरह के खेल के नियमों के पालन में बच्चे लगातार अपने संवेगों के विपरीत काम करते हुए सामाजिक नियमों का पालन व सामाजिक व्यवहार करना सीखते हैं।

भाषा के सदर्भ में वायगोतस्की का विचार है कि सामाजिक संपर्क से भाषा तेजी से विकसित होती है और भाषा के माध्यम से सामाजिक अन्त:क्रिया करके संज्ञानात्मक विकास तेजी से होता है। भाषा के अंतर्गत ही वयगोतस्की तीन तरीके के भाषण की बात करते हैं – सामाजिक भाषण, निजी भाषण, आंतरिक भाषण, जिसमें निजी भाषण का बहुत महत्वपूर्ण बौद्धिक प्रक्रिया की तरह काम करती है। बच्चे इसका इस्तेमाल अपने कार्यो के मार्गदर्शन और नियमन के लिए करते हैं।

सीखनाएवं विकास पर संस्कृति के प्रभाव के बारे में वायगोसत्की का विचार है कि अलग–अलग संस्कृतियाँ अपने बच्चे को अलग तरीके के बौद्धिक उपकरण प्रदान करती हैं, जिसके कारण अलग–अलग संस्कृतियों में सीखनाऔर संज्ञानात्मक विकास अलग ढंग से होता है।

यह सिद्धांत बच्चे के सीखनाऔर संज्ञानात्मक विकास के लिए साथी शिक्षण (Peer Tutoring), सहयोगी सीखना(Co-operative Learning) एवं व्युत्क्रम शिक्षण (Reciprocal Teaching) जैसी विधियों के इस्तेमाल पर जोर देता है। यद्यपि यह सिद्धांत महत्वपूर्ण है और शोधों द्वारा इसकी कुछ मान्यताएं स्थापित हैं तथापि कुछ अध्ययन इसकी आलोचना करते हुए कहते हैं कि वायगोत्स्की के विचार सांस्कृतिक रूप से सार्वभौमिक नहीं हैं। आलोचनकर्ताओं ने यह भी कहा कि स्केफोलडिंग का संप्रत्यय जो कि मौखिक निर्देशन पर निर्भर है वह भी सभी संस्कृतियों में समान नहीं होता। सीखने के लिए हमेशा ही मौखिक निर्देश की जरूरत नहीं होती है। हम बहुत सी बातें बस अवलोकन और उसका अनुकरण करके सीख जाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Bandura, A. (1995). Adolescent Aggression. N.Y.: Ronald Press.
2. Bandura, A. (1974). Aggression: A Social Learning Analysis. Prentice Hall.
3. Bandura, A. (1986). Social Foundations of Thought and Action. Upper Saddle River, NJ: Prentice-Hall, Inc.
4. Bandura, A. (1963). Social Learning and Personality Development. NY: Holt Rinehart and Winston.
5. Bandura, A. (1977). Social Learning Theory. Prentice-Hall.
6. Baron, R.A. and Richardson, D. (1994). Human Aggression (2nd ed.). NY: Plenum.
7. Baron,R.A. & Kalsher, M.J. (2001).Psychology(5th ed.). India. Pearson.
8. Berk, L. E. (1986). Relationship of elementary school children's private speech to behavioral accompaniment to task, attention, and task performance. *Developmental Psychology, 22(5)*, 671.
9. Berk, L. E., Mann, T., & Ogan, A. (2006). Make-believe play: Wellspring for development of self-regulation. In D. Singer, K. Hirsh-Pasek, & R. Golinkoff (Eds.), Play = learning (pp. 74–100). New York: Oxford University Press.
10. Berk, L.E. (2017). Child Development (9th ed.) India. Pearson.
11. Bodrova, E., & Leong, D. J. (2007). Tools of the mind: The Vygotskian approach to early childhood education (2nd ed.). Upper Saddle River, NJ: Merrill/Prentice Hall.
12. Boeree, C.G. (2018). Personality Theories: From Freud to Frankl. Open Knowledge Books.
13. Centerwall, B.S. (1986) Exposure to television as a cause of violence. In G. Comstock (ed.), Public Communication and Behaviour (Vol.2). San Diego: Academic Press.
14. Csibra, G. (2010). Recognizing communicative intentions in infancy. Mind and Language, 25, 141–168
15. Eron, L.D. (1987). The development of aggressive behaviour from the perspective of a developing behaviourist. American Psychologist.,42,435-442.
16. Feldman, R. (2007). Maternal–infant contact and child development: Insights from the kangaroo intervention. In L. L'Abate (Ed.), Low-cost approaches to promote physical and mental health: Theory, research, and practice (pp. 323–351). New York: Springer

17. Fernyhough, C., & Fradley, E. (2005). Private speech on an executive task: Relations with task difficulty and task performance. *Cognitive Development*, *20*, 103–120.

18. Freedman, J.L. (1986). Television violence and aggression: a rejoinder. Psychological Bulletin,100, 372-378.

19. Freund, L. S. (1990). Maternal regulation of children's problem-solving behavior and its impact on children's performance. *Child Development*, *61*, 113-126.

20. Lemche, E., Lennertz, I., Orthmann, C., Ari, A., Grote, K., Hafker, J., & Klann-Delius, G. (2003). Emotion-regulatory process in evoked play narratives: Their relation with mental representations and family interactions. Praxis der Kinder psychologie und Kinder psychiatrie, 52, 156–171.

21. McLeod, S. A. (2018, August 05). *Lev Vygotsky*. Simply Psychology. https://www.simplypsychology.org/vygotsky.html

22. Morelli, G. A., Rogoff, B., Oppenheim, D., & Goldsmith, D. (1992). Cultural variation in infants' sleeping arrangements: Questions of independence. Developmental Psychology, 28, 604–613

23. Newson, J., & Newson, E. (1975). Intersubjectivity and the transmission of culture: On the social origins of symbolic functioning. Bulletin of the British Psychological Society, 28, 437–446.

24. Paradise, R., & Rogoff, B. (2009). Side by side: Learning by observing and pitching in. Ethos, 27, 102–138.

25. Piaget, J. (1959). *The language and thought of the child (Vol. 5)*. Psychology Press.

26. Rogoff, B. (1990). *Apprenticeships in thinking*. New York: Oxford University Press.

27. Schaffer, R. (1996). *Social development*. Oxford: Blackwell.

28. Snyder, S. (1991).Movies and Juvenile Delinquency: An Overview. Adolescence,26,121-132.

29. Vygotsky, L. S. (1962). *Thought and language*. Cambridge MA: MIT Press

30. Vygotsky, L. S. (1978). *Mind in society: The development of higher psychological processes*. Cambridge, MA: Harvard University Press.

31. Vygotsky, L. S. (1987). Thinking and speech. In R.W. Rieber & A.S. Carton (Eds.), *The collected works of L.S. Vygotsky, Volume 1: Problems*

of general psychology (pp. 39–285). New York: Plenum Press. (Original work published 1934.)

32. Widom, C.S.(1989).Does violence beget violence? A critical examination of literature. Psychological Bulletin,106,3-28.
33. Woolfolk, A. (2009). Educational Psychology. Delhi. Pearson Prentice Hall.

इकाई 5

सीखने को प्रभावित करने वाले कारक

प्रस्तावना

पूर्व की इकाईयों के अध्ययन पश्चात आप बता सकते हैं कि संज्ञानात्मक विकास क्या होता है? सीखनाक्या होता है? व्यवहारवाद एवं अन्य दृष्टिकोण से सीखने की प्रक्रिया कैसी हो? साथ-ही आपने यह भी जाना कि सीखना और सामाजिक-सांस्कृतिक अवधारणा का क्या अंत:सबंध है? सीखना को प्रभावित करने वाले कारकों का भी अध्ययन आप कर चुके हैं जो इसकी प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, मानव मस्तिष्क अर्थात मनोदैहिक कारक किस प्रकार से बच्चे के सीखनाको प्रभावित करते हैं। साथ-ही अभिप्रेरणा, स्मृति एवं अवधान भी ऐसे कारक हैं जो सीखनाकी प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। अत: बच्चे के सीखना को सुगम बनाने के लिए शिक्षक/शिक्षिकाओं को इन संप्रत्ययों का अध्ययन करना आवश्यक है।

विशिष्ट उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:-

- शैक्षिक सबंध में मस्तिष्क की सरंचना की व्याख्या कर सकेंगे।
- सीखना में मस्तिष्क की भूमिका के बता सकेंगे।
- अभिप्रेरणा की के अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे।
- अभिप्रेरणा का सीखना के प्रभाव को स्पष्ट कर सकेंगे।
- अवधान की सीखना में भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे।
- सीखना में स्मृति के महत्त्व को रेखांकित कर सकेंगे।

मस्तिष्क की संरचना (Structure of Brain)

यद्यपि मन और मस्तिष्क के बीच संबंध अभी भी पूरी तरह से समझा नहीं गया है, वर्तमान शोध यह बताते हैं कि मन के कार्य मस्तिष्क की संरचना से जुड़े हैं (मीसा Meece, 2002)। मस्तिष्क के सन्दर्भ में एक भ्रान्ति वैज्ञानिक एवं सामान्य वर्ग में थी कि इसकी संरचना बच्चे के जीन के द्वारा निर्धारित होती है। वर्तमान में हुए शोध ये दिखाते हैं कि मानव मस्तिष्क बच्चे के वृद्धि के साथ विकसित होते रहता हैं अर्थात, मस्तिष्क की संरचना समय के साथ बदलती रहती है जो यह बच्चे के विकास एवं अनुभव पर निर्भर करती हैं (Nelson, 2011, Toga & Mazziotta, 2011 नेल्सन, 2011, तोगा और मजजीओटा, 2011)। दूसरे शब्दों में कहें तो बच्चे का मस्तिष्क आनुवांशिकता पर निर्भर नही करती है अपितु बच्चे ा उसका विकास स्वयं कर सकता है। नई तकनीकों जैसे कार्यात्मक चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग (फंक्शनल मैग्नेटिक रेजोनेंस इमेजिन-FMRI) और

एकल फोटॉन उत्सर्जन की गणना टोमोग्राफी (SPECT), के माध्यम से न्यूरोसाइकोलजिस्टों ने यह पहचानना शुरू कर दिया है कि कैसे मस्तिष्क की संरचना कुछ संज्ञानात्मक दोषों से संबंधित है, और यह सुझाव देती है कि मस्तिष्क के कई क्षेत्र विशेष के महत्वपूर्ण कार्यो में शामिल होते हैं।

मस्तिष्क के कई अलग-अलग क्षेत्र हैं।यह निश्चित है कि प्रत्येक क्षेत्र विशेष कार्यो में शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए, पंख सा दिखने वाले सेरिबैलम (cerebellum) निर्देशांक अर्थात, स्थिति का पता लगाने हेतु और ऑर्केस्टेटस् (orchestrates) संतुलित, आरामदायक एवं कुशल गतियों जैसे नर्तक के शरीर का संतुलन, खाना खाने में चम्मच का प्रयोग करना, लिखना, सुई से कपड़े सिलना इत्यादि रोजमर्रा के कार्य हेतु सेरिबैलम सीखने जैसे उच्च संज्ञानात्मक कार्यो में भी भूमिका निभा सकते हैं। हिप्पोकैम्पस (hippocampus) मानव मस्तिष्क का महत्वपूर्ण है क्षेत्र है जिसमें नई जानकारी और हाल के अनुभवों को याद किया जाता है, जबकि एमिग्डाला (amygdala) भावनाओं को निर्देशित करता है। थैलेमस (thalamus) नई जानकारी सीखने की हमारी क्षमता के लिए आवश्यक भाग है, विशेषकर मौखिक जानकारियों को सीखने में महत्वपूर्ण निर्वहन करती हैं। (Meece, 2002, Wood & Wood, 1999 मीस, 2002, वुड - वुड, 1999)। चित्र संख्याः 5.1 में मस्तिष्क के विभिन्न क्षेत्रों को दर्शाया गया है:-

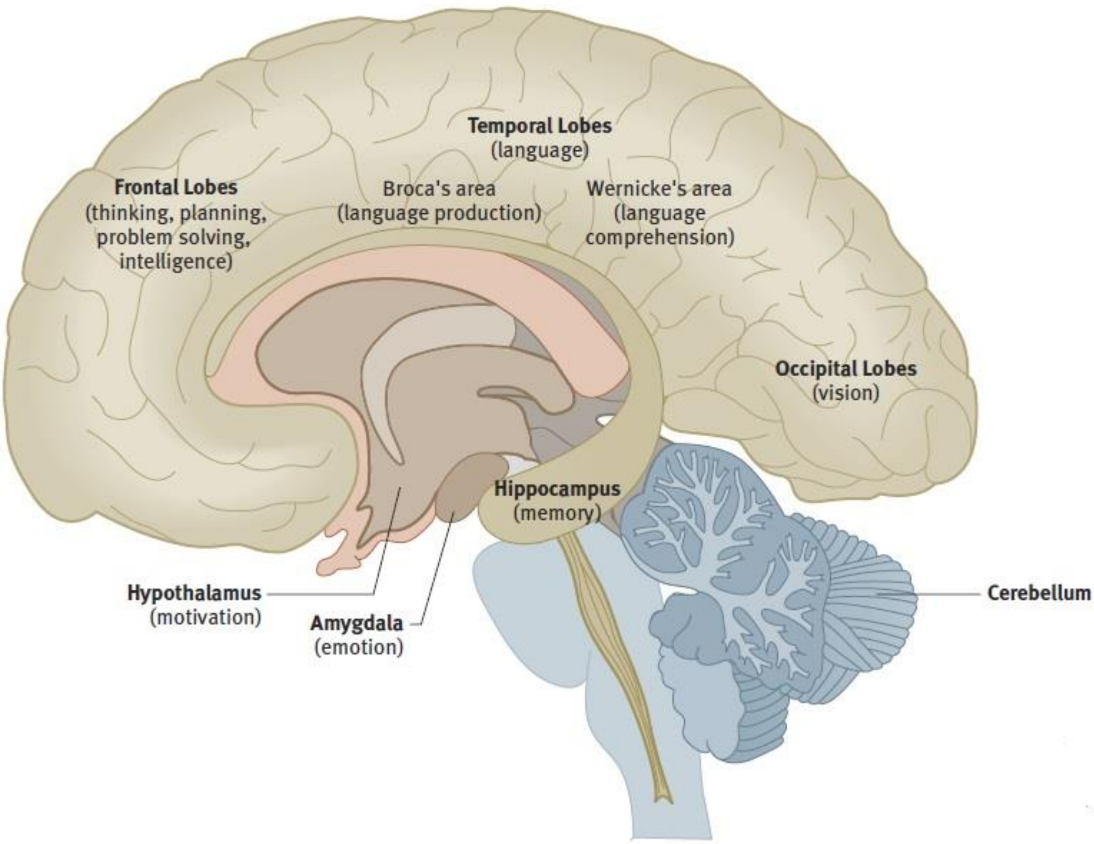

चित्र संख्याः 5.1 मस्तिष्क की संरचना (स्त्रोतः मोरेनो Moreno, 2010, p. 73)

चित्र 5.2 सबसे बड़े मानव मस्तिष्क घटक, प्रांतस्था (कोर्टेक्स – cortex) के विभिन्न क्षेत्रों को दर्शाया गया है। कोर्टेक्स एक 1/8-इंच मोटी झुर्रीदार दिखने वाला क्षेत्र है जो वयस्क के मस्तिष्क का वजन का 85 प्रतिशत हिस्सा होता है और इसमें सबसे अधिक संख्या में न्यूरॉन होते हैं अर्थात वे कोशिकाएं जो भंडारण और सूचना प्रसारित करने का कार्य करती हैं। मस्तिष्क के अन्य हिस्सों की तुलना में कोर्टेक्स धीरे-धीरे विकसित होता है। कोर्टेक्स के भीतर, शारीरिक गति को नियंत्रित करने वाला क्षेत्र सबसे पहले परिपक्व होता है, उसके बाद के क्षेत्र जो इंद्रियों को नियंत्रित करते हैं (जैसे, दृष्टि, श्रवण आदि) और अंत में वो क्षेत्र जो जटिल संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को नियंत्रित करते हैं (जैसे, भाषा, सोच आदि)।

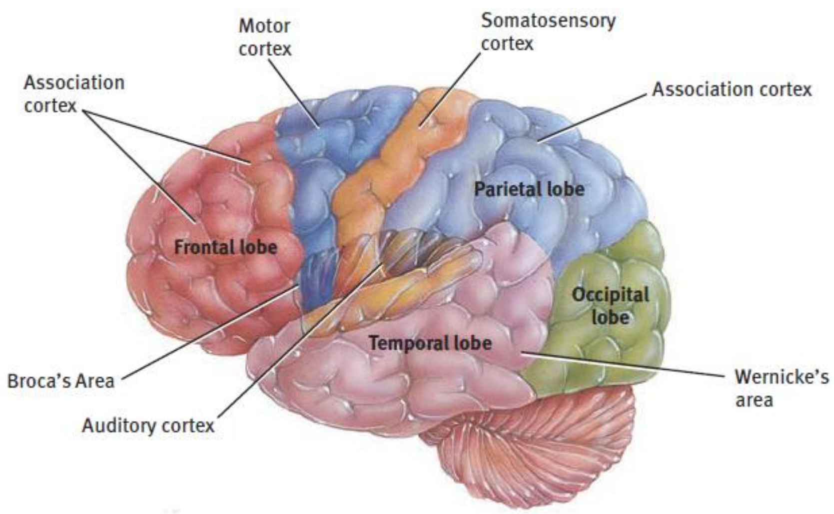

चित्र संख्या: 5.2 मस्तिष्क प्रांतस्था (कोर्टेक्स) एवं इसके विभिन्न क्षेत्र (स्त्रोत: मोरेनो Moreno, 2010, p. 74)

उदाहरण के लिए, शोध इंगित करते हैं कि प्रीफ्रॉटल कॉर्टेक्स, जो बच्चे के तर्क, योजना, या संतुष्टि की देरी के माध्यम से उत्पन्न आवेगों का नियंत्रण करता है उसे पूरी तरह से विकसित होने में 20 वर्ष तक का समय लग सकता है (वेनबर्गर, 2001 Weinberger, 2001)। इस प्रकार, माता-पिता और शिक्षकों के लिए यह आवश्यक है कि वे बच्चे की संज्ञानात्मक और भावनात्मक विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करें तथा उनके व्यवहार को विनियमित और योजनाबद्ध करें (मिसे, 2002 Meece, 2002)। मस्तिष्क के प्रत्येक क्षेत्र की विशेषज्ञता के बावजूद, जब कोई जटिल कार्य होते हैं, तो कॉर्टेक्स के क्षेत्र एक एकीकृत परिणाम उत्पन्न करने के लिए एक साथ काम करते हैं (ब्यर्नेस-फॉक्स Byrnes & Fox) 1998)। उदाहरण के लिए, बच्चे की बोलने की क्षमता को लेंते हैं। किसी प्रश्न के उत्तर देने में भाषा के प्रयोग के लिए बच्चे को प्राथमिक रूप से श्रवण प्रांतस्था (auditory cortex) को संसाधित करने की आवश्यकता होगी और इसके साथ ही होंठ, जबड़े और जीभ की गतियों को नियंत्रित करने वाले एक दुसरे कॉर्टेक्स क्षेत्र का उपयोग करना पड़ेगा जिसे ब्रोका क्षेत्र (Broca's area) के रूप में जाना जाता है। इसके अलावा, अर्थ

को विशेष शब्दों से जोड़ने की प्रक्रिया में वर्निक क्षेत्र (Wernicke's area) की आवश्यकता होती है। इस प्रकार ध्वनि को निकलने के लिए बच्चे के मस्तिष्क के विभिन्न क्षेत्र एक साथ सामंजस्य पूर्ण ढंग से कार्य करते हैं। शोध बतलाते हैं कि यदि ब्रोका क्षेत्र (Broca's area) के क्षतिग्रस्त होने पर भलीभांति बोलने में समस्या होती है बच्चे ा व्याकरणीय दृष्टिकोण से गलत उत्तर देता है अर्थात उसकी शब्द संरचना सही नहीं होती है (एंडरसन, 1995 Anderson, 1995)। इसके विपरीत वर्निक क्षेत्र (Wernicke's area) के क्षतिग्रस्त होने पर, बच्चे ा व्याकरणीय दृष्टिकोण से सही परन्तु अर्थहीन भाषा बोलता है।

मस्तिष्क का विकास (Development of Brain)

एक नवजात शिशु के मस्तिष्क का वजन लगभग 1 पाउंड होता है, जो वयस्क मस्तिष्क के वजन का लगभग एक तिहाई होता है। लेकिन इस शिशु मस्तिष्क में अरबों न्यूरॉन्स होते हैं जो सूचनाओं के आदान-प्रदान एवं भंडारण का कार्य करता है। न्यूरॉन्स भूरे रंग का होता है, इसलिए उन्हें कभी-कभी मस्तिष्क का ग्रे पदार्थ भी कहा जाता है। एक न्यूरॉन में एक छोटे कंप्यूटर की सूचना प्रसंस्करण के बराबर क्षमता होती है, अर्थात 3-पाउंड के मानव मस्तिष्क की प्रसंस्करण शक्ति दुनिया के सभी कंप्यूटरों से अधिक होती है (एंडरसन, 2010)। इन न्यूरॉन्स का उत्पादन हिप्पोकैम्पस क्षेत्र (hippocampus region) में व्ययस्कता तक जारी रहता है (Koehl & Abrous, 2011 कोहल एवं एब्रोस, 2011)।

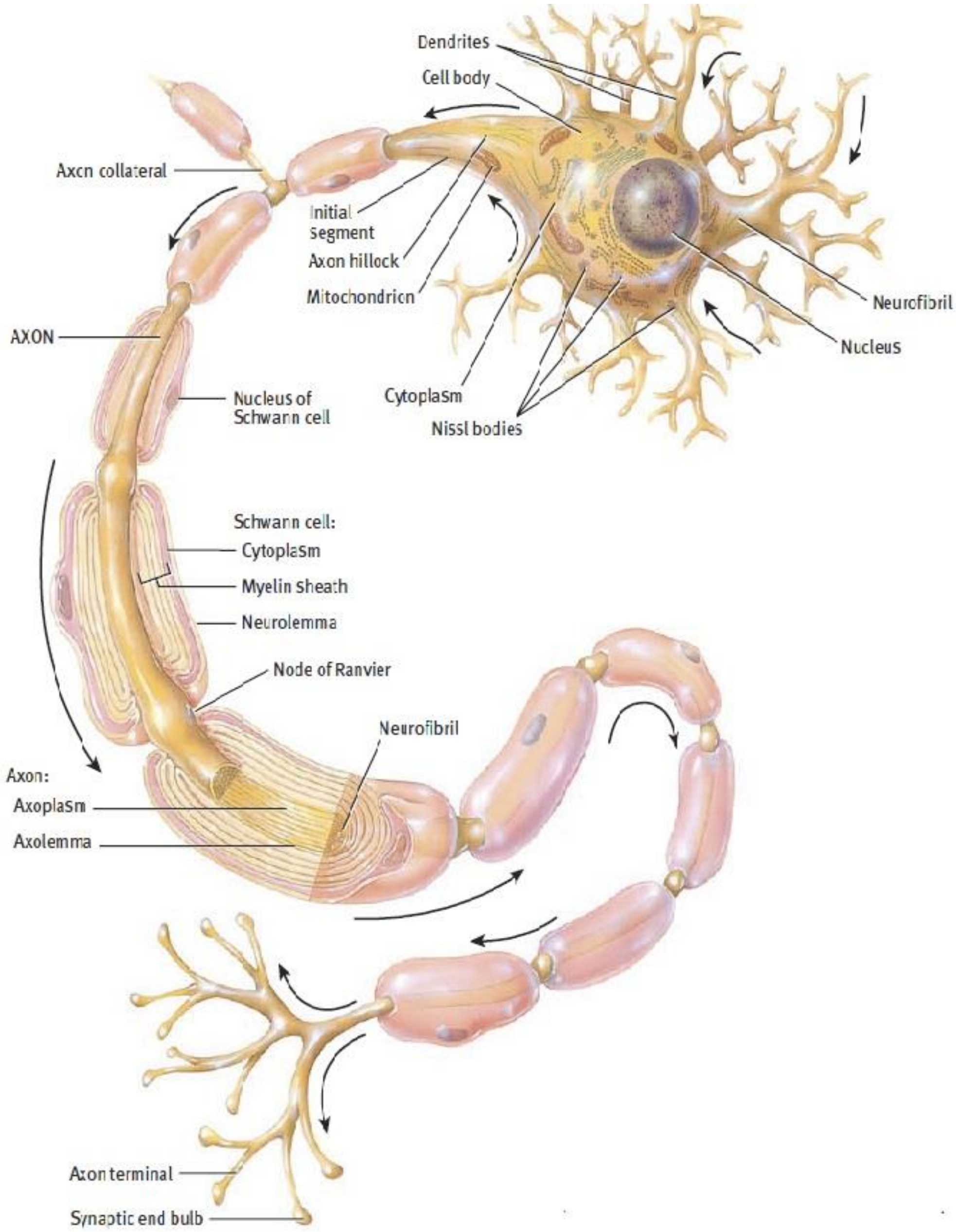

चित्र संख्या 5.3: न्यूरॉन एवं उसके भाग (स्रोत: मोरेनो Moreno, 2010, p. 76)

न्यूरॉन कोशिकाएं अन्य न्यूरॉन कोशिकाओं के साथ संबंध बनाने के लिए लंबे हाथ और शाखा जैसी तंतुओं को बाहर भेजती हैं जिन्हें अक्षतंतु (axons) और डेंड्राइट (dendrites) कहते हैं। न्यूरॉन्स, सिनेप्सिस (synapses) को पार करके विद्युत संकेतों के द्वारा और रसायनों का स्राव जारी करके अपनी जानकारी साझा करता है। उदाहरण के लिए, जीवन के पहले महीनों के दौरान, मस्तिष्क दृश्य और श्रवण उत्तेजना की अपेक्षा करता है। यदि देखने और सुनने में बच्चा सामान्य होता है, तब मस्तिष्क के दृश्य और श्रवण क्षेत्र विकसित होते हैं। लेकिन जो बच्चे जन्म

से बधिर होते हैं उनमें श्रवण उत्तेजना नहीं मिलती है और परिणामस्वरूप, उनके दिमाग का श्रवण प्रसंस्करण क्षेत्र दृश्य जानकारियों को संसाधित करने के लिए प्रयुक्त होने लगता है। इसी तरह, मस्तिष्क का दृश्य प्रसंस्करण क्षेत्र जन्म से अंधे बच्चे के लिए श्रवण प्रसंस्करण के लिए प्रयुक्त होने लगता है (नेल्सन, 2001, नेविल, - ब्रवेलिएर 2001 Nelson, 2001, Neville & Bavelier, 2001)।

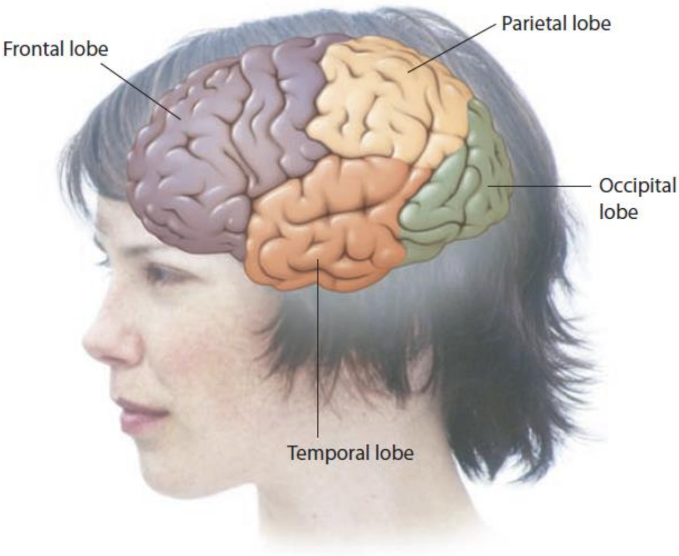

चित्र संख्या 5.4: मस्तिष्क की चार पलियां (स्रोत: Moreno, 2010, p.)

चित्र 5.4 मस्तिष्क के चार पालियों के स्थान को दर्शाता है। मानव मस्तिष्क के प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स अर्थात, ललाट पालि (frontal lobes) में वृद्धि किशोरावस्था तक जारी रहती है। प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स वयस्क वर्ष, लगभग 18 से 25 वर्ष की आयु या बाद में तक परिपक्व नहीं होता है, लेकिन एमिग्डाला (amygdala) में क्रोध जैसी भावनायें प्रीफ्रंटल कॉर्टेक्स से पहले परिपक्व हो जाती हैं। जबकि 6 वर्ष की आयु से यौवन के दौरान लौकिक पाली (temporal lobes) (भाषा प्रसंस्करण) और पार्श्विका पाली (parietal lobes) (स्थानिक) का विकास होता रहता है।

सेरिब्रल कोर्टेक्स (cerebral cortex) को दो हिस्सों या गोलार्ध (hemispheres) में विभाजित किया जाता है। मस्तिष्क के प्रत्येक गोलार्ध की अपनी विशिष्टता है (वान एटिंगर-वेनेस्ट्रा एवं अन्य, 2010 van Ettinger & Veenstra & others, 2010)। बाँया गोलार्ध (Left hemisphere) का मोटर कोर्टेक्स शरीर के दायें अंगों की गति को नियंत्रित करता है और दाहिना गोलार्ध (Right hemisphere) का शरीर के बाँए अंगों को पार्श्वकरण (Lateralization) का मतलब है कि कुछ कार्य करने में मस्तिष्क का एक पक्ष दूसरे की तुलना में अधिक कुशल है। अधिकांश दाएं हाथ से काम करने वाले लोगों के मस्तिष्क का बाएं गोलार्ध मौखिक प्रसंस्करण ज्यादा कुशल होते हैं और इनकी मस्तिष्क का दाएं गोलार्ध में अशाब्दिक प्रसंस्करण में कुशल होते हैं। उदाहरण के लिए, अधिकांश दायें हाथ के लोगों के लिए, मस्तिष्क का बायाँ गोलार्ध (Left hemisphere)

चित्रों की अपेक्षा शब्दों के प्रसंस्करण (processing) पर अधिक कुशल होगा वहीं मस्तिष्क का दाहिना गोलार्ध चित्रों, चेहरों और अन्य भावनाओं को पहचानने में अधिक कुशल होगा (हेलर और अन्य, 2009 Heller et al, 2009)। मस्तिष्क के दोनों गोलार्धो के कामकाज में अंतर के कारण लोग आमतौर पर कहने के लिए 'बाएँ दिमाग' और 'दाएँ-दिमाग' वाले वाक्यांशों का उपयोग करते हैं। उदाहरण के लिए, आमतौर पर गोलार्ध विशेषज्ञता को बढ़ाते हैं। यह दावा करते हैं कि बाएं मस्तिष्क तार्किक है और दायाँ मस्तिष्क रचनात्मक होता है। हालांकि, अधिकांश जटिल कामकाज जैसे तार्किक और रचनात्मक सोच सामान्य लोगों में मस्तिष्क के दोनों किनारों के बीच संचारित होता है (Baars & Gage बैस - गज, 2010)

मानव मस्तिष्क एवं बच्चे की शिक्षा (Human Brain and Education of Children)

शिक्षण मस्तिष्क के संगठन और संरचना को बदल सकता है। उदाहरण के लिए, जो लोग बधिर हैं और सांकेतिक भाषा (साइन लैंग्वेज) का उपयोग करना जानते हैं, उनका मस्तिष्क, जो बहरे हैं परन्तु सांकेतिक भाषा (साइन लैंग्वेज) का उपयोग नहीं जानते हैं, की अपेक्षा अधिक गतिशील एवं प्रभावी होता है। (वर्मा, मैककैंडलिस, और श्वार्ट्ज, 2008 Varma, McCandliss, & Schwartz, 2008)। मार्ग्रेट डेलाजर और उनके सहयोगियों (2005) ने बच्चे ोंकी नए अंकगणितीय संक्रिया को हल करने की दो तरह की प्रक्रियायों, एक उत्तर याद करके एवं दूसरा एल्गोरिथ्म प्रविधि (algorithm strategy), का प्रभाव मस्तिष्क की गतिविधियों पर देखा और पाया कि वैसे बच्चे जो उत्तर याद करके प्रश्नों को हल करते हैं, उनके मस्तिष्क का वह क्षेत्र ज्यादा विकसित है जो शाब्दिक सूचनाओं से जुडा है। वही एल्गोरिथ्म द्वारा प्रश्नों को हल करने वाले बच्चे के मस्तिष्क का वह भाग ज्यादा विकसित है, जो दृश्य-स्थानिक प्रसंस्करण से जुड़े थे।

शिक्षक एवं शिक्षण प्रक्रिया के लिए मस्तिष्क संबंधी शोध एक पथप्रदर्शक का कार्य करती है। कभी-कभी शिक्षक इन शोधों के गलत निहितार्थ निकाल लेते हैं, जो बच्चे ोंके लिए हानिकारक होते हैं (ब्रूअर, 1999 Bruer, 1999)। उदाहरण के लिए-कई शिक्षकों का मानना है कि बाएं मस्तिष्क वाले बच्चे अधिक तार्किक होता है तथा दायें मस्तिष्क वाले बच्चे अधिक रचनात्मक होते हैं (सूसा, 1995 Sousa, 1995)। परन्तु वास्तव में बच्चे अपने दैनिक और कक्षा के कार्यो में दोनों गोलार्धो का उपयोग करते हैं। कौन-सा गोलार्ध अधिक क्रियाशील होगा, ये प्रसंस्करण के प्रकारों (जैसे, मौखिक बनाम अशाब्दिक) पर निर्भर करता है। इसलिए तंत्रिका वैज्ञानिक शोध इस तरह के 'मस्तिष्क के किसी विशेष पक्ष की वृद्धि' के लिए शिक्षा देने से बचने की सलाह देते हैं (हुड्ले और नोवाक, 2007 Hudley & Novak, 2007)।

मस्तिष्क के क्षेत्र में हुए शोध अध्ययनों का शैक्षिक निहितार्थ (Educational Implication of Research done in the field of Brain)

मस्तिष्क के क्षेत्र में हुए शोध अध्ययनों का शिक्षण-सीखनाप्रक्रिया में महत्त्व को निम्न लिखित बिन्दुओं से समझ सकते हैं:-

- बच्चे और किशोरों के सीखनाअनुभव मस्तिष्क के न्यूरॉन्स के मध्य सिनैप्टिक कनेक्शन से बदला जा सकता है (नेल्सन, 2011)। न्यूरॉन्स के मध्य सबंध का उपयोग बच्चे ा गणित के अध्ययन में ध्यान केन्द्रित करने एवं याद करने हेतु करते हैं।
- प्रीफ्रंटल कोर्टेक्स का विकास किशोरावस्था तक होता है एवं बच्चे में तर्क, निर्णय लेने की क्षमता आदि संज्ञानात्मक क्रियाओं के लिए उत्तरदायी होता है (नेल्सन, 2011)।
- मस्तिष्क का एमिग्डाला (amygdala) क्षेत्र भावनाओं के प्रसंस्करण के लिए उत्तरदायी होता है। जब यह पूर्णरूप से विकसित हो जाती है तो प्रीफ्रंटल कोर्टेक्स भी अधिक परिपक्व हो जाता है जो बच्चे में पढ़ने, रोजगार चयन आदि के सन्दर्भ में जोखिम की प्रवृत्ति को नियंत्रित करता है (स्टाइनबर्ग, 2009)।
- कर्ट फिशर और मैरी हेलेन इमॉर्डिनो-यांग (2008) के अनुसार हर बच्चे ा एक विशिष्ट पथ चुनता है परन्तु उनका चिंतन सिर्फ एक पथ तक सीमित नहीं रहता है। वे उनके मध्य संबंध भी बनाते हैं, जैसे - गणित में विशिष्ट बच्चा अन्य विषयों के साथ सामंजस्य बिठाता है।
- मस्तिष्क अपेक्षाकृत लचीला होता है, इसलिए समृद्ध, सक्रिय वातावरण और लचीली निर्देशात्मक रणनीति छोटे बच्चे में संज्ञानात्मक विकास और वयस्कों में सीखने के समुचित अवसर देता है।
- मस्तिष्क की संरचना बदल सकती है, लेकिन इसमें समय लगता है, इसलिए शिक्षकों को सुसंगत, धैर्यवान और अपने शिक्षण के प्रति समर्पित होना चाहिए। विभिन्न शिक्षण-सीखनाविधियों के प्रयोग से आवश्यक बदलाव लाये जा सकते हैं।
- कुछ शिक्षण विकारों (learning disorders) का न्यूरोलॉजिकल आधार हो सकता है। न्यूरोलॉजिकल परीक्षण निदान करने में सहायता कर सकता है और इन विकारों के उपचार के साथ-साथ विभिन्न उपचारों के प्रभावों का मूल्यांकन भी करता है।
- मस्तिष्क नई सूचना के साथ सार्थक पैटर्न और कनेक्शन चाहता है, इसलिए शिक्षकों को बच्चे को कुछ भी नया पढ़ाने से पहले के उनके पूर्व ज्ञान का उपयोग करना चाहिए, जिससे मस्तिष्क में नई जानकारी के साथ एक नेटवर्क बने और बच्चे ा आसानी से नए ज्ञान को याद रख सकें।
- शिक्षण-सीखनाप्रक्रिया में कहानियों का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि कहानियाँ मस्तिष्क के विभिन्न हिस्सों (अभ्यास, समस्या को हल करना, संबंध बनाना, इत्यादि) को सक्रिय तथा जानकारी के मध्य एक तार्किक जुडाव बनाये रखती है जिससे उसे याद करना आसान होता है।

- जीवन के प्रत्यक्ष अनुभवों के माध्यम से शिक्षण अधिक प्रभावशाली होता है, क्योंकि इस प्रक्रिया में मस्तिष्क के अधिकतम क्षेत्र एक-दूसरे के साथ सामंजस्यपूर्ण सगंठन में जुड़े रहते हैं।

अभिप्रेरणाः अवधारणा एवं परिभाषा (Motivation : Concept and Definition)

बच्चा स्वभाव से ही क्रियाशील प्राणी है। वह सदा ही क्रियाशील रहता है। बिना प्रयोजन के वह कोई कार्य या व्यवहार नहीं करता है। उसके कार्य का उद्देश्य किसी लक्ष्य विशेष की पूर्ति करना होता है। एक बच्चे ा पूर्ण लगन एवं उत्साह के साथ अपने अध्ययन में लगा रहता है, जबकि दूसरा अध्ययन की ओर उदासीन रहता है। आखिर हम क्यों लिखते-पढ़ते हैं? उद्यम क्यों करते हैं? इन प्रश्नों के उत्तर में यह कहा जा सकता है कि बच्चे के कार्य और व्यवहार को परिचालित करने वाली कुछ प्रेरक शक्तियां हैं जो उसे विभिन्न परिस्थितियों में कार्य या व्यवहार करने की अभिप्रेरणा प्रदान करती हैं।

अभिप्रेरणा बस एक क्रिया का कारण है और जो व्यवहार को उद्देश्य और दिशा प्रदान करती है। अभिप्रेरणा, निश्चित तरीके से व्यवहार करने या किसी विशेष क्रियाकलाप करने के लिए प्रेरित करती है। 'अभिप्रेरणा' शब्द अंग्रेजी शब्द Motivation की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के Motum शब्द से हुई है, जिसका अर्थ है move , motor तथा motion. अभिप्रेरणा के साधारण और शाब्दिक अर्थ के अनुसार हम किसी भी उत्तेजना को अभिप्रेरणा कह सकते हैं, जिसके कारण बच्चा कोई प्रतिक्रिया या व्यवहार करता है। इस प्रकार की उत्तेजना आंतरिक या बाह्य दोनों हो सकती हैं, किन्तु मनोविज्ञान की दृष्टि से अभिप्रेरणा एक मानसिक प्रक्रिया है। यह एक आंतरिक शक्ति है, जिसमें बच्चे अपने अन्दर से किसी कार्य को करने के लिए अभिप्रेरित होता है। इस प्रकार अभिप्रेरणा को 'प्राणी के शरीर यंत्र की चालक शक्ति' कहा जाता है, जो बच्चे को व्यवहार सुसंगठित एवं व्यवस्थित करने के लिए प्रेरणा देती है। इस प्रकार अभिप्रेरणा को एक प्रेरक बल के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसे एक ऐसी प्रक्रिया भी कहा जा सकता है जो विभिन्न गतिविधियों को शुरू कर प्रेरित करती है,चाहे वह भौतिक हो या मनोवैज्ञानिक (जेरिग और जिम्बार्डो, 2006)।

अभिप्रेरणा की विभिन्न परिभाषाएँ हैं और उनमें से कुछ की चर्चा इस प्रकार की गई है:

फेल्डमैन (2015, पृष्ठ 287) ने अभिप्ररेणा को ''उन कारकों के रूप में परिभाषित किया है जो मनुष्यों और अन्य जीवों के व्यवहार को निर्देशित और सक्रिय करते हैं''।

फिस्ट और रोजेनबर्ग (2015, पृष्ठ 397) ने अभिप्ररेणा को ''कार्यो को पूरा करने के लिए लक्ष्यों की ओर बढ़ने का आग्रह'' के रूप में परिभाषित किया।

चमोरो- प्रेमुजिक (2015, पृष्ठ 272) के अनुसार ''अभिप्रेरणा एक आतंरिक स्थिति है जो गतिशील है, क्रिया को प्रेरित करती है, व्यवहार को निर्देशित करती है और सहज और सांस्कृतिक जरूरतों और लक्ष्यों दोनों को पूरा करने की ओर उन्मुख होती है''।

क्विक, नेल्सन और खंडेलवाल (2013, पृष्ठ 172) ने अभिप्रेरणा को ''व्यवहार को निर्देशित करने और लक्ष्य बनाए रखने की प्रक्रिया'' के रूप में परिभाषित किया।

उपर्युक्त परिभाषाओं में देखा जा सकता है कि अभिप्रेरणा को मुख्य रूप से एक कारक के रूप में देखा जाता है, जो बच्चा को एक दिशा में बढ़ाता है एवं किसी निश्चित तरीके से व्यवहार करने के लिए प्रेरित करता है। यह एक मनो-शाररिक या आंतरिक प्रक्रिया है। इस प्रकार इसे अंतर्नोद, बल, इच्छाओं, और जरूरतों के संदर्भ में वर्णित किया जा सकता है जो बच्चे को कुछ निश्चित तरीके से व्यवहार करने की ओर संचालित करता है। शिक्षक से प्रशंसा पाने की इच्छा एक बच्चे को कक्षा गतिविधि में अच्छा प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित कर सकती है। एक निश्चित विषय के बारे में अधिक ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा बच्चे को उस विषय में शैक्षिक कार्यक्रम में सहभागिता के लिए प्रेरित कर सकती है। भूख एक बच्चे को बिस्कुट या स्नैक्स खरीदने के लिए प्रेरित कर सकती है। इस प्रकार किसी भी मानवीय व्यवहार को किसी प्रकार की अभिप्रेरणा का परिणाम कहा जा सकता है।

अभिप्रेरणा के घटक (Elements of Motivation)

अभिप्रेरणा के प्रत्यय की चर्चा के दौरान प्रायः आवश्यकता, अंतर्नोद और चालक तथा प्रोत्साहन आदि शब्दों का प्रयोग बहुतायत से किया जाता है। इन्हें प्रेरणा के संघटक या कारक या स्रोत से संबोधित किया जाता है। इन प्रत्ययों की संक्षेप में चर्चा की जा रही है।

आवश्यकताएँ (Need) – जब बच्चे के शरीर में किसी चीज की कमी या अति की अवस्था किसी कारण से उत्पन्न हो जाती है, तो उसे हम आवश्यकता कहते हैं। ये कोशिका की जैविक अवस्थाओं या शारीरिक कमियों से संबंधित हैं जो अंतर्नोद उत्पन्न करती हैं। यह सामान्यतः दो तरह की होती है – एक शाररिक या जैविक दूसरा मनो-सामाजिक। उदाहरण के लिए, व्यक्तियों को जीवित रहने के लिए पानी, भोजन आरै निश्चित रूप से ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है (फिस्ट और राजेनबर्ग, 2015)। यह आवश्यकतायें बच्चे में तनाव उत्पन्न करती हैं और इनकी पूर्ति के लिए बच्चे क्रियाशील हो जाता है। बच्चे तब तक क्रियाशील रहता है जबतक कि उसकी आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो जाती है।

अंतर्नोद (Drive) – फाईस्ट और राजेनबर्ग (2015, पृष्ठ 397) ड्राइव को "तनाव की उन अवस्थाओं के रूप में देखा है जो तब उत्पन्न होती हैं जब हमारे शरीर में कुछ आवश्यकताएं होती हैं और तनाव को दूर करने का आग्रह होता है। जैसा कि हमने आवश्यकता के अंतर्गत चर्चा की थी कि आवश्यकता अंतर्नोद उत्पन्न करती है अथवा अंतर्नोद के लिए बाध्य करती है।

इसलिए जब कोई बच्चे भूखा है तो वह गाने नही माँगेगा। इस प्रकार की आवश्यकता अंतर्नोद उत्पन्न करती हैं और बच्चे को इस तरह से व्यवहार करने के लिए बाध्य करती हैं ताकि उत्पन्न कमी से वह निपट सकें। आवश्यकता से तनाव उत्पन्न होता है, यह तनाव जिस रूप में अनुभव किया जाता है उसे प्रणोद या चालक कहते हैं, जैसे – भूख की आवश्यकता से भूख प्रणोद, उपलब्धि आवश्यकता से उपलब्धि प्रणोद आदि उत्पन्न होते हैं।

प्रोत्साहन (Incentive) – प्रोत्साहन को उद्दीपक भी कहते हैं। यह बाह्य वातावरण से प्राप्त होने वाली वस्तु है जो बच्चे को या पशु अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं तथा जिसकी प्राप्ति से बच्चे की आवश्यकता की पूर्ति तथा प्रणोद में कमी हो जाती है। यह एक वस्तु या एक घटना हो सकती है। एक खेल में जीती गई ट्रॉफी को उस खेल में अच्छा प्रदर्शन करने के लिए एक प्रोत्साहन के रूप में देखा जा सकता है। यहाँ यह स्पष्ट करने की आवश्यकता है की कोई वस्तु प्रोत्साहन तभी कहलाएगी जब वो आवश्यकता (Need) से सम्बंधित हो, जैसे प्यासे बच्चे के लिए पानी प्रोत्साहन है, जो बच्चे को अपनी और आकर्षित केर लेती हैं, जिसकी प्राप्ति से प्यास नामक प्रणोद में कमी हो जाती है। परन्तु यदि प्यासे बच्चे को पानी की जगह भोजन दिया जाता है तो इससे उसके प्यास प्रणोद की संतुष्टि नहीं होगी और ना ही प्रणोद में कमी आएगी।

चित्र संख्या 5.5: अभिप्रेरणा के घटक

इसके अलावा एक और शब्द जिस पर प्रकाश डालना जरुरी है, वह है प्रेरक। अक्सर अभिप्रेरणा और प्रेरकों को अदल-बदल के उपयोग किया जाता है। हालांकि, वे भिन्न होते हैं क्योंकि अभिप्रेरणा एक सामान्य रूप में इस्तेमाल किये जाने वाला शब्द है जबकि प्रेरक एक विशिष्ट शब्द है। प्रेरक एक ऐसी चीज है जो वास्तव में एक बच्चे को कुछ कार्रवाई करने के लिए प्रेरित करती है और अभिप्रेरणा वह प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत प्रेरक किसी बच्चे को कुछ कार्यवाही के लिए प्रेरित करता है।

अभिप्रेरणा के प्रकार (Types of Motivation)

अभिप्रेरणा विभिन्न प्रकार की हो सकती है, इनकी चर्चा निम्न प्रकार से की गई है:-

1. **प्राथमिक और द्वितीयक अभिप्रेरणा** – अभिप्रेरणा के दो मुख्य प्रकार – प्राथमिक और द्वितीयक अभिप्रेरणा हैं। प्राथमिक प्रेरणा को बुनियादी प्रेरणा भी कहा जा सकता है और मुख्य रूप से भूख, प्यास, नींद, यौन, दर्द से बचने इत्यादि से संबंधित आवश्यकताऐं

शामिल हैं। ये मुख्य रूप से एक बुनियादी स्तर पर किसी बच्चे के व्यवहार को प्रभावित करते हैं और ये आवश्यकताएं स्वयं के संरक्षण की मूल आवश्यकता से भी संबंधित हैं। द्वितीयक अभिप्रेरणा को सीखने की प्रेरणा कहा जा सकता है और ये अलग-अलग बच्चे में भिन्न हो सकते हैं। वे बच्चों को प्राथमिकताओं और मूल्यों से भी संबंधित होते हैं।

2. **बाह्य और आंतरिक अभिप्रेरणा** – यह एक और तरीका है जिसमें अभिप्रेरणा को वर्गित किया जा सकता है। वाह्य अभिप्रेरणा को "ऐसी अभिप्रेरणा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो बच्चे के बाहर से आती है और इसमें आमतौर पर पुरस्कार और प्रंशसा शामिल होती हैं (फिस्ट और रोजेनबर्ग, 2015, पृष्ठ 415)। इनाम, प्रंशसा, पैसा, प्रतिक्रिया इत्यादि बाह्य अभिप्रेरणा के उदाहरण है। इन अभिप्रेरकों द्वारा उन व्यक्तियों से भी कार्य कराया जा सकता है जो इन गतिविधियों को नहीं करेंगे। ये अभिप्रेरक व्यक्तियों को वो संतुष्टि या सुख प्रदान करते हैं जो उन गतिविधियों से प्राप्त नहीं हो सकते हैं। वाह्य अभिप्रेरणा के कई फायदे हैं क्योंकि यह न केवल व्यवहार में वृद्धि के साथ जुड़ा हुआ है, बल्कि प्रदर्शन में भी वृद्धि करता है।

हालाँकि, इसकी आलोचना भी की जा सकती है क्योंकि यदि ईनाम (उदाहरण के लिए) को हटा दिया जाता है तो व्यवहार में भी कमी आ सकती है। और उसी समय यदि इनाम सामान्य रहता है जिसे नहीं बढ़ाया जाता है तो अभिप्रेरणा कम हो जाएगी। बाह्य अभिप्रेरणा उन सरल कार्यों के साथ प्रभावी हो सकती है जिनके लिए रचनात्मक और पार्श्व सोच की आवश्यकता नहीं होती है। इसके अलावा, यह कार्य करने वाले बच्चे की आंतरिक अभिप्रेरणा को भी प्रभावित कर सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी बच्चे को अपने कमरे को साफ और व्यवस्थित रखने में मजा आता है, लेकिन अगर माता-पिता उसी के लिए इनाम प्रदान करना शुरू करते हैं, तो बच्चे ा कमरे को साफ-सुथरा माता-पिता द्वारा दिए गए इनाम के लिए रखेगा न कि मिलने वाले आनंद या आतंरिक अभिप्रेरणा के कारण। एक अन्य उदाहरण के लिए, यदि कोई कर्मचारी सुरक्षा उपकरणों का पर्याप्त रूप से उपयोग करता है क्योंकि वह ऐसा करने के लिए आंतरिक रूप से अभिप्रेरित है और यदि उसका पर्यवेक्षक उसे सुरक्षा उपकरणों के उपयोग के लिए बाह्य अभिप्रेरक प्रदान करता है, तो कर्मचारी सुरक्षा उपकरण का उपयोग वाह्य अभिप्रेरणा के लिये शुरु कर देगा ना कि आंतरिक अभिप्रेरणा के कारण। इसलिए आतंरिक अभिप्रेरणा को "ऐसी अभिप्रेरणा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो किसी बच्चे के भीतर से आती है और इसमें चुनौती, आनंद, निपुणता और स्वायत्तता के तत्व शामिल होते हैं" (फाईस्ट और राजेनबर्ग, 2015, पृष्ठ 416)। उदाहरण के लिए, एक ऐसी गतिविधि जिसे करने में बच्चे आनंद महसूस करे।

आंतरिक प्रेरणा के चार घटक है (फाईस्ट और रोजेनबर्ग, 2015) जिनकी चर्चा निम्नानुसार हैं:-

i. **चुनौती** – यह उत्तेजना की उस सीमा से सम्बंधित है जो किसी नयी चुनौती के साथ आती है।

ii. **आनंद** – यह उस सुख से संबंधित है जो किसी बच्चे को कार्य करने से प्राप्त हो सकता है।

iii. **दक्षता** – यह गर्व और उपलब्धि की भावना से संबंधित है जो एक बच्चे को तब अनुभव हो सकती है जब वह एक कठिन कार्य करता है।

iv. **स्वायत्तता और स्व-निर्धारण** – वह स्वायत्तता जो किसी बच्चे को कार्य करते समय प्राप्त होती है, अर्थात वह स्वतंत्रता जिसके साथ ब्च्चे यह निर्धारित कर सकता है कि क्या किया जाना है और यह कैसे किया जाना है। आतंरिक अभिप्रेरणा उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ व्यक्तियों में रचनात्मकता को बढाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सीखने में अभिप्रेरणा का स्थान (Place of Motivation in Learning)

अभिप्रेरणा सीखने की प्रक्रिया और परिणाम दोनों को प्रभावित करती हैं। अभिप्रेरित बच्चे I सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं, उनके सीखने की गति तीव्र होती है तथा उनका सीखना भी अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है। अभिप्रेरणा सीखने की प्रक्रिया के उचित व्यवस्थापन में केन्द्रीय कारक होता है। किसी प्रकार की अभिप्रेरणा में अवश्य उपस्थित रहनी चाहिए। सीखने की प्रक्रिया में अभिप्रेरणा का अत्यधिक महत्व है। यह 'सीखना' का एक महत्वपूर्ण अंग है। शिक्षा में अभिप्रेरणा के महत्त्व को इस प्रकार दर्शाया गया है:-

1. **सीखने की इच्छा** – बच्चे में स्व:प्रेरणा के माध्यम से किसी भी कार्य को करने की तीव्र इच्छा होने लगती है। अत: शिक्षक का यह कर्त्तव्य है कि वह बच्चे को समस्या से अवगत करायें। परिश्रम का जीवन में क्या महत्व है? इसके सम्बन्ध में बच्चे को जानकारी प्रदान करें। बच्चे के आत्मविश्वास को निरन्तर बनाये रखें तथा बच्चे की प्रगति का मूल्यांकन करने हेतु वैध एवं विश्वसनीय विधि का प्रयोग करें।
2. **निर्देशन** – यदि बच्चे विद्यालय के किसी भी कार्य में रुचि प्रदर्शित नहीं करते, तो यह आवश्यक है कि उनकी विद्यालयीय कार्यों में रुचि उत्पन्न की जाये। इसके लिए बच्चे ोंको प्रेरणा के माध्यम से समुचित निर्देशन प्रदान कर, उनका पथ-प्रदर्शन किया जाए।
3. **आवश्यकताओं का ध्यान** – शिक्षक को शिक्षण आरम्भ करते समय बच्चे की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। वह इस बात को भी ध्यान रखें कि बच्चे पढ़ने वाले पाठ को स्वयं पर आरोपित न समझें। इसके लिए यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम बच्चे की पाठ के प्रति रुचि व ध्यान विकसित किया जाए।
4. **प्रशंसा एवं निंदा** – शिक्षण में इन दोनों का ही महत्व होता है। अत: शिक्षक को प्रशंसा एवं निन्दा का प्रयोग, प्रेरणा के रूप में करना चाहिए। बच्चे के किसी भी कार्य को सफलतापूर्वक कर लेने पर, शिक्षक को उसकी प्रशंसा करनी चाहिए और बार-बार असफल होने पर तत्काल ही उसकी निन्दा करनी चाहिए, तभी इनका प्रयोग प्रभावी हो सकता है।
5. **मूल्यों एवं मान्यताओं का विकास** – शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य बच्चे को सुयोग्य नागरिक बनाना है। बच्चे को सुयोग्य नागरिक बनाने हेतु यह आवश्यक कि उनमें

नैतिक व सामाजिक मूल्यों एवं मान्यताओं का विकास किया जाए। इस उद्देश्य को पूर्ण करने हेतु, बच्चे में प्रेरणा के माध्यम से अनुशासन की भावना का विकास कर उनके व्यक्तित्व एवं चरित्र का भी विकास किया जाये। इसके अतिरिक्त शिक्षण कार्य सुनिर्धारित पाठ्यक्रम के द्वारा किया जाए।

6. **प्रेरणा सीखने का महत्वपूर्ण आधार** – अभिप्रेरणा सीखने का महत्त्वपूर्ण आधार होती है। यह बच्चे ा के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों से सम्बद्ध होती है। अत: शिक्षक को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह बच्चे को नकारात्मक प्रेरणा प्रदान न करे, जैसे – कक्षा में अपमान व निन्दा करना, दण्ड देना आदि क्योंकि कभी–कभी नकारात्मक अभिप्रेरणा से बच्चे की हानि भी हो जाती है।
7. **बच्चे में रुचि एवं प्रवणता का विकास** – प्रेरणा के माध्यम से बच्चे में किसी कार्य के प्रति रुचि एवं अभियोग्यता का विकास होता है। शिक्षक आंतरिक अभिप्रेरणा का प्रयोग कर बच्चे में पढ़ने के प्रति रूचि जागृत कर सकता है। यदि किसी बच्चे को कार्य करने की प्रेरणा प्रदान न की जाये तो वह उस कार्य को रुचि के साथ नहीं सीख सकता। इसी प्रकार यदि बच्चे की विषय–वस्तु एवं पाठ्य–विषयों में रुचि नहीं है, तो वह जो भी ज्ञान अर्जित करेगा वह उनके मस्तिष्क का स्थायी अंग नहीं बन पायेगा। परिणामस्वरूप, उनका मानसिक विकास, पूर्णरूप से नहीं हो सकेगा। अत: यह नितान्त आवश्यक है कि शिक्षक सर्वप्रथम पाठ के प्रति बच्चे में रुचि का विकास करे तभी उसका शिक्षण सफल हो सकता है।
8. **उत्तम शिक्षण विधियों का उपयोग** – अध्यापक उत्तम शिक्षण पद्धतियों के माध्यम से बच्चे को निर्वाध गति से ज्ञानार्जन हेतु अभिप्रेरित कर सकता है।

निष्कर्ष रूप में अभिप्रेरणा सीखने का एक सरल साधन है। इस साधन के द्वारा शिक्षक बच्चे को उनके लक्ष्य की प्राप्ति की ओर उन्मुख कर सकता है और उनके व्यवहार में वांछित परिवर्तन करने में सफल हो सकता है। इस प्रकार शिक्षण–सीखनामें अभिप्रेरणा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। शिक्षण की प्रक्रिया में बच्चे को सीखने के लिये अथवा व्यवहार परिवर्तन के लिये शिक्षक परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है, जिससे उन्हें सीखने के अनुभव प्राप्त होते हैं। इन परिस्थितियों में बच्चे को शारीरिक अथवा मानसिक रूप से अनुक्रिया करनी होती है। इन अनुक्रियाओं को तीव्र करने, बल प्रदान करने और जारी रखने में अभिप्रेरणा का विशेष महत्व होता है। इसके अभाव में बच्चे के द्वारा अनुक्रियायें सम्पन्न नहीं की जा सकती है। अत: बच्चे को अभिप्रेरित करने हेतु शिक्षक को निम्नाकित प्रविधियों का प्रयोग करना चाहिए:–

1. **पुरस्कार एवं दण्ड** – बच्चे को प्रेरित करने के लिए पुरस्कार प्रविधि एक महत्त्वपूर्ण प्रविधि है। बच्चे को अच्छा अथवा सही कार्य करने के लिये कोई उपहार अथवा प्रशंसा पुरस्कार दिया जाता है, जिससे उनको प्रोत्साहन मिलता है। पुरस्कार के विपरीत दण्ड भी बच्चे को प्रेरित करने की एक प्रविधि है। यदि बच्चे को किसी गलत अथवा अवांछनीय कार्य करने के लिये दण्ड दिया जाये, तब वे उस कार्य को नहीं करते

हैं। इस प्रकार इससे अवांछनीय तथा गलत व्यवहारों को रोका जाता है। यह दोनों बाह्य अभिप्रेरणा में सम्मिलित किये जाते हैं।

2. **प्रशंसा एवं निदा** – प्रशंसा एक प्रकार से पुरस्कार ही है, जिसके द्वारा किसी सही अथवा अच्छे कार्य करने की सम्भावना बढ़ जाती है और उसे अच्छे काम करने के लिये प्रोत्साहन मिलता है। निन्दा भी अभिप्रेरणा की एक प्रविधि है। यदि इसका उपयोग आवश्यकतानुसार किया जाये तो इसका अनुकूल प्रभाव पड़ता है। यदि गलत अथवा अवांछनीय कार्यो की निन्दा की जाये तो उनको करने की सम्भावना कम हो जाती है। प्रतिभाशाली बच्चे के लिये निन्दा का प्रभाव अनुकूल होता है। परन्तु कमजोर बच्चे के लिये निन्दा का प्रयोग नहीं करना चाहिये। इस प्रविधि का रूप शाब्दिक होता है। यह भी बाह्य-अभिप्रेरणा में सम्मिलित की जाती है।
3. **सफलता एवं असफलता** – बर्नार्ड का कथन है कि सफलता से बच्चों में आत्मविश्वास का विकास होता है। इसके आधार पर बच्चे अपनी योग्यतानुसार लक्ष्य निर्धारित करते हैं। सामान्य बुद्धि के बच्चे के लिये सफलता विशेष रूप से प्रेरक का काम करती है। सफलता सभी को प्रेरणा देती है। असफलता सफलता के विपरीत होती है। परन्तु कभी-कभी प्रेरक का कार्य करती है। प्रतिभाशाली बच्चे ा असफलता को चुनौती के रूप में स्वीकार करते हैं जिससे उन्हें कार्य करने के लिये प्रोत्साहन मिलता है। इन्हें आन्तरिक तथा बाह्य अभिप्रेरणा में सम्मिलित किया जाता है।
4. **प्रतियोगिता एवं सहयोग** – विद्यालयों में सामान्यतः बच्चे में प्रतियोगिता तथा सहयोग की प्रवृत्ति देखी जाती है। बच्चे एक-दूसरे से अधिक अंक प्राप्त करना चाहते हैं। शिक्षक प्रतियोगिता के माध्यम से अधिक परिश्रम करने की प्रेरणा देता है। प्रतियोगिता में बच्चे को पहले से अधिक अंक प्राप्त करने की प्रेरणा दी जाती है। सामूहिक प्रतियोगिता से बच्चे में सहयोग की भावना जाग्रत होती है और सामूहिक रूप में कार्य करने को प्रोत्साहन मिलता है। मनोविज्ञान की दृष्टि से सहयोग की प्रेरणा का अधिक महत्त्व है। सामाजिक कौशल में सहयोग की प्रेरणा अधिक प्रोत्साहन प्रदान करती है। इससे प्रजातान्त्रिक भावना का विकास किया जा सकता है।
5. **प्रगति का ज्ञान** – प्रगति का ज्ञान बच्चों के अहं की सन्तुष्टि करता है तथा उनके व्यवहार की गति को तीव्र और दृढ़ कर देता है। प्रगति का ज्ञान प्रदान करने के कई तरीके हैं। अनुदेशन में इस प्रविधि को ध्यान में रखा जाता है। अध्यापक बच्चे को उनकी प्रगति बताता रहता है। विद्यालयों में बच्चे की मासिक परीक्षाओं के विवरण के लिये प्रगति चार्ट बनाये जाते हैं जिससे उनको लगातार अपनी प्रगति का ज्ञान होता रहता है। इससे उन्हें अधिक परिश्रम के लिए प्रेरणा मिलती है। अभिक्रमित अनुदेशन में बच्चे ंको स्वयं बोध होता है, जिससे उन्हें पुनर्बलन लगातार मिलता रहता है।
6. **नवीनता** – बच्चे को अपने वातावरण के साथ समायोजन की आवश्यकता होती है और नवीनता इस आवश्यकता की सन्तुष्टि करती है। बच्चे को नवीनता से प्रेरणा मिलती है और नवीनता से कार्य में रुचि अधिक होती है। नवीनता प्रविधि का प्रयोग करते समय यह आवश्यक है कि उनका सम्बन्ध परिचित वस्तुओं से या ज्ञान से हो। शिक्षक अचानक

कोई नवीन विधि का प्रयोग आरम्भ कर दें तब बच्चे में प्रयोग होने के स्थान ह्रास होता है। इस प्रकार यदि परिवर्तन और विविधता का सम्बन्ध जीवन से हो तो उसे नवीनता कहते हैं। इसके प्रयोग से बच्चे के व्यवहार को प्रोत्साहित किया जाता है।

7. **आकांक्षा का स्तर** – किसी वस्तु को पाने की आकांक्षा का स्तर, वातावरण और बच्चे की योग्यताओं पर निर्भर होता है। जो बच्चे की वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए आकांक्षा के स्तर का निर्धारण करता है, तब वह जीवन में सफल होता है अन्यथा नहीं। आकांक्षा स्तर पिछली निष्पत्तियों पर आधारित होता है। यह प्रेरणा का एक रूप है। शिक्षक का कर्त्तव्य होता है कि बच्चे के आकांक्षा स्तर को ऊँचा उठाये, जिससे बच्चे कार्य में अधिक रुचि लें। इसके अतिरिक्त बच्चे की अभिवृत्ति एवं अभिरुचि भी उनके व्यवहारों को प्रोत्साहित करती है। प्रश्नों की सहायता से भी बच्चे को प्रेरणा दी जाती है। दृश्य–श्रव्य सहायक सामग्री के प्रयोग से भी बच्चे को प्रेरणा मिलती है और वे कार्य में अधिक तत्पर हो जाते हैं और रुचि लेने लगते हैं।

अवधान का अर्थ (Meaning of Attention)

हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ प्रतिदिन अनेक उद्दीपनों द्वारा प्रभावित होती हैं। परन्तु हम इन सभी उद्दीपनों के प्रति अनुक्रिया नहीं करते हैं। अपनी अभिरुचि, मनोवृत्ति एवं आवश्यकता के अनुसार हम उनमें से कुछ उद्दीपनों को चुन लेते हैं तथा उसके प्रति अनुक्रिया करते हैं। मनोविज्ञान में एस तरह की चयनात्मक प्रक्रिया को अवधान की संज्ञा दी जाती है। उदाहरण के लिए — एक बच्चे ा कक्षा में शिक्षक की बात को ध्यानमग्न हो कर सुनता है। इस अवस्था में वह सिर्फ शिक्षक तथा उनकी बातों को ही अपने चेतना केंद्र में ला पता है हालांकि कक्षा में अन्य वस्तुएं भी हैं, सहपाठी हैं। यहाँ बच्चे ा इन सभी उद्दीपकों में से खास उद्दीपक (शिक्षक) को चुनता है और प्रतिक्रिया देता है। अतः अवधान को हम इस प्रकार से परिभाषित केर सकते हैं, 'अवधान एक चयनात्मक प्रक्रिया है जिसमें ब्च्चे ेएक विशेष शारीरिक मुद्रा बनाकर किसी वस्तु को चेतना का केंद्र में लाने के लिए तत्पर रहता है।'

अवधान की प्रमुख विशेषताएँ (Major characteristics of Attention)

अवधान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चा कुछ उद्दीपनों को अपने चेतना केंद्र में लाता है ताकि उसका प्रत्यक्षण ठीक ढंग से कर सके। अतः अवधान की प्रक्रिया पहले होती है और प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रिया बाद में। अवधान की प्रमुख विशेषताएँ निम्लिखित हैः-

1. अवधान चयनात्मक (selective) होता है।
2. अवधान में शारीरिक मुद्रा (body posture) होती है।
3. अवधान में तत्परता या अनुक्रियशिलता (responsiveness) की स्थिति होती है।
4. अवधान उद्देश्यपूर्ण (purposive) होता है।
5. अवधान का विस्तार सीमित (limited span) होता है।
6. अवधान में अस्थिरता (fluctuation) तथा उच्चलन (shifting) का गुण होता है।

7. अवधान में विभाजन का गुण होता है।

अवधान का शैक्षिक निहितार्थ (Educational Implication of Attention)

अवधान की प्रक्रिया का महत्त्व शिक्षा में काफी है। इससे शिक्षक एवं बच्चे ा दोनों को अपनी-अपनी भूमिकाओं के निर्वहन करने में मदद मिलती है। शिक्षा में अवधान के हम निम्लिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझ सकते हैं:-

1. कक्षा में शिक्षक को चाहिए कि वो शिक्षण-सीखाने की प्रक्रिया में बच्चे का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करे। इसके लिए वो ध्यान के वाह्य कारक जैसे उद्दीपन में परिवर्तन, उद्दीपन की पुरावृत्ति, इसके आकार में परिवर्तन, इत्यादि का उपयोग कर सकते हैं। इनकी मदद से शिक्षक अपने शिक्षण को अधिक रुचिकर बना सकते हैं और बच्चे ा अपने आप ही ध्यान देने लगते हैं।
2. कक्षा में शिक्षक में सकारात्मक वातावरण का निर्माण करना चाहिए जिससे बच्चा किसी डर या बाध्यता का अनुभव नहीं हो सकता है। इसलिए बच्चे का ध्यान बनाये रखने के लिए शिक्षक को खुशनुमा माहौल बनाने रखना चाहिए।
3. शिक्षकों को कक्षा में बच्चे को विशेषकर जब बच्चे छोटे हों, तो उन्हें अपनी और आकर्षित करने हेतु खेल, चित्र, खिलौने एवं कहानियों का उपयोग कर सकते हैं।
4. बच्चे ा शिक्षक की बातों में और अपनी पठन-सामग्री में अधिक रूचि दिखाये एवं उसकी ओर अधिक ध्यान दे। इसके लिए अवश्यक है कि कक्षा की भाषा सुगम हो क्योंकि अवधान का नियम यह होता है कि बच्चे ा जिन चीजों या वस्तुओं का अर्थ बच्चे द्वारा नहीं समझ पाता है यब उस पर ध्यान नहीं दे पाता है।
5. शिक्षक को बच्चे का ध्यान अपने और आकर्षित करने हेतु सहभागितापूर्ण शिक्षण विधियों जैसे कोपरेटीव शिक्षण विधि, प्रयोगशाला विधि, मस्तिष्क उद्देलन विधि इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए।

इस तरह स्पष्ट है कि ध्यान की प्रक्रिया का शिक्षण-सीखनाप्रक्रिया में बहुत महत्त्व है। यदि शिक्षक अपने कक्षा में ध्यान सबंधी निर्धारक कारकों को दृष्टिगत रखे तो बच्चे को शिक्षण में रूचि उत्पन्न होगी और सीखनाकी प्रक्रिया में गति आयेगी।

स्मृति का अर्थ एवं परिभाषा (Memory: Meaning and Definition)

आप ने मनुष्यों को एक बच्चे या तरुण के विषय में यह कहते सुना होगा कि वह अच्छी स्मरण-शक्ति रखता है। इस बात के कहने से उनका स्पष्ट तात्पर्य क्या है, यह विचार योग्य है? हम इस बात को सुनकर समझने लगते हैं कि बच्चे ा या तरुण बड़ी सुगमता से किसी वस्तु को सीख लेता है, या वह उसे लम्बी अवधि तक स्मरण रख सकता है, अथवा जिस वस्तु को उसने सीखा है, उसको बड़ी आसानी से पुन:स्मरण कर सकता है। अत: अच्छी स्मरण-शक्ति से हमारा अर्थ सीखना, याद करना अथवा पुन:स्मरण है। मनुष्य सभी जीवधारियों में श्रेष्ठ है क्योंकि उसमें

अपने मन में पूर्व अनुभवों को संचित कर रखने की शक्ति होती है। मन में अनुभवों को संचित कर रखने वाली यह शक्ति जब चेतना से युक्त होती है तब उसे स्मृति कहते हैं। स्मृति के द्वारा बच्चे अतीत की अनुभूतियों अथवा घटनाओं को अपनी वर्तमान चेतना में लाता है। इस प्रकार स्मृति की क्रिया में निरन्तर अतीत विद्यमान रहता है। स्मृति में वैयक्तिक भिन्नता होती है। प्रौढ़ की अपेक्षा बच्चे की स्मृति तीव्र होती है। कुछ बच्चों को वर्षो पहले की बातें ज्यों-की-त्यों याद रहती हैं और कुछ बच्चे बहुत ही भुलक्कड़ होते हैं।

अनेक मनोवैज्ञानिकों ने स्मृति की परिभाषायें दी हैं। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं:-

1. **स्टाउट के अनुसार,** "स्मृति एक आदर्श पुन:स्मरण है, उस सीमा तक जहाँ तक, कि यह हमारे पूर्व अनुभवों यथासम्भव उसी रूप और क्रम में पुन: याद करता है जिसमें कि उनका पहले अनुभव किया गया।"
2. **वुडवर्थ के अनुसार,** "स्मृति उस वस्तु को, जिसे कि पहले सीखा गया है, स्मरण रखने से सम्बन्धित होती है।"
3. **स्पीयरमैन के अनुसार,** "स्मृति, ज्ञानात्मक अनुभूतिपूर्ण घटनाएँ हस्तान्तरित होने पर ऐसे संस्कारों को विकसित करती हैं जो उन घटनाओं को पुन:स्मरण करने में सफलता प्रदान करते हैं।"
4. **मैकडूगल के अनुसार,** "स्मृति का तात्पर्य भूतकालीन घटनाओं के अनुभव को कल्पना में लाना और यह पहचान कर लेना है कि वे अपने ही भूतकालीन अनुभव हैं।"

स्मृति की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकती है। फिर भी हम कह सकते हैं कि स्मृति यथावत् प्राप्त पूर्व अनुभवों को उसी क्रम में पुन: याद करने से सम्बन्ध रखती है। यह एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें संस्कारों को स्थापित करना, उनका धारण करना और उन अनुभवों को पुन:स्मरण करना, जो हस्तांतरित हो चुके हैं, होता है। इस प्रकार स्मृति को समझने के लिए यह अच्छा होगा कि स्मृति-प्रवृत्ति के अन्तर्गत आए घटकों को समझ लिया जाए। अब हम यहाँ उन घटकों का अध्ययन करेंगे।

स्मृति के घटक (Elements of Memory)

उपरोक्त परिभाषाओं के द्वारा हम बड़ी सरलता से यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि स्मृति के अन्तर्गत चार मुख्य घटक हैं:- सीखना, धारण करना, पुन:स्मरण और पहचानना। इन चारों में से प्रत्येक समान रूप से महत्वपूर्ण है। किसी घटना, अनुभव या क्रिया का पहले बोध होता है, फिर इसको मस्तिष्क में इसी या अन्य रूप में धारण किया जाता है। स्मृति का तृतीय खण्ड 'पुन:स्मरण' हैं जिसके अन्तर्गत भविष्य में किसी भी अवसर पर किसी घटना या अनुभव इत्यादि को, जिसे सीखा या धारण किया जाता है, पहचान लेने से सम्बन्धित है। सीखने का सरल उदाहरण, किसी बच्चे के नाम द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। जब आप किसी बच्चे से रास्ते में मिलते हैं, और पहचानते हैं कि उसका नाम रविन्द्र है, तब आपकी स्मृति को चारों प्रवृत्तियों

के अन्तर्गत कार्य करना पड़ता है। इस बच्चे का नाम आपके द्वारा पहले 'सीखा' जाता है और तब 'धारण' किया जाता है। फिर उसे दुबारा मिलने के समय आप उसके नाम को 'स्मरण' करते हैं और इस प्रकार स्मरण करने से आप 'पहचान' जाते हैं कि उस विशेष बच्चे का नाम, जिससे आप मिल चुके हैं, रविन्द्र ही है। आईये हम संक्षेप में इन घटकों की चर्चा करते हैं:-

1. सीखना या सीखना(Learning)

इसे हम स्मरण करना भी कह सकते हैं। स्मृति के लिए पहली आवश्यक बात यह है कि हम याद करें। जिस वस्तु को स्मरण रखना चाहते हैं, उसका सीखना आवश्यक है। सीखने के समय हम संस्कार ग्रहण करते हैं। यदि किसी वस्तु का संस्कार ही हमारे मन में न पड़ा हो तो उस वस्तु का याद करना असम्भव है। यह संस्कार चाहे जिस विधि से पड़ा हो, किन्तु इसका होना आवश्यक है। स्मृति की यह पहली आवश्यकता है। संस्कार ग्रहण करने के लिए यह आवश्यक है कि ध्यान एकाग्र हो। जब तक हम किसी विषय पर ध्यान एकाग्र नहीं करेंगे तब तक उसका स्मरण होना कठिन है। पाठ याद करते समय थकान का दमन करना चाहिए। यदि हमारा मस्तिष्क थका रहेगा तो हम कुछ याद नहीं कर पाएँगे। अतः मस्तिष्क का तरोताजा होना आवश्यक है। जिस बात को याद करना हो उसे कई इन्द्रियों का विषय बनाना ठीक रहता है। एक पाठ को यदि हम शिक्षक से सुनते हैं तो श्रवणेन्द्रियों का प्रयोग करते हैं, यदि उसे हम पढ़कर अपनी दृष्टि इन्द्रिय का प्रयोग करें तो अधिक अच्छा है और बाद में यदि उस पाठ के मुख्य अंश को लिखकर उसका क्रिया से सम्बन्ध स्थापित न कर दें तो संस्कार और गहरे पड़ जाएँगे।

स्मरण करने की प्रक्रिया में संस्कारों की गहनता का अधिक महत्त्व है। यदि संस्कार गहरे पड़ेंगे तो वे मस्तिष्क में स्थायी छाप छोड़ देंगे नहीं तो वे शीघ्र विस्मृत हो जाएँगे। इसके लिए आवश्यक है कि किसी बात को याद करने के लिए उसकी पुनरावृत्ति की जाए। जिस पाठ को हम कई बार दुहराएँगे, वह हमें शीघ्र याद हो जाएगा और जिस बात को केवल एक बार सीखेंगे वह सम्भव है, भूल जाएँ। रुचिकर बातें हमें अधिक याद रहती हैं और अरुचिकर शीघ्र भूल जाते हैं। जिस बात से हमें क्लेश मिलता है, उसे हम भुला देना चाहते हैं। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि पाठ्यवस्तु में हमारी रुचि उत्पन्न हो जाए।

याद करना दो प्रकार का होता है। एक तो रटकर याद किया जाता है, दूसरे विचारपूर्वक याद किया जाता है। जो बात रटकर याद की जाती है, उसका महत्त्व रटने वाला नहीं जानता। रटने वाला वस्तु को समझता नहीं, उसे तोते की तरह केवल रट लेता है। इसका परिणाम यह होता है कि रटने का उपयोग व्यावहारिक दशा में हो नहीं पाता। विचारपूर्वक याद करने में बच्चे ा याद करने वाली वस्तु को समझकर विचारपूर्वक याद करता है। रटना स्मरण करने की अच्छी विधि नहीं है।

2. धारण (Retaining)

स्मृति बहुत बड़ी मात्रा में, धारण करने की शक्ति पर निर्भर रहती है। किसी चीज को सीखने के पश्चात् उसे मस्तिष्क में धारण कर लिया जाता है। धारण करने की शक्ति भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न होती है। ऐसा कहा जाता है कि स्मृति 11 वर्ष की उम्र तक बड़ी तेजी से बढ़ती रहती है, और बढ़ने की क्षमता 16 वर्ष तक अनवरत क्रम से रहती है और इसके पश्चात सबसे अधिक मात्रा 25 वर्ष की आयु पर पहुँच जाती है, फिर यह शिथिल पड़ जाती है। इसके पश्चात् इसकी वृद्धि नहीं होती वरन् इसमें अवनति प्रारम्भ हो जाती है। प्रायः यह प्रश्न उठता है कि कुछ भी सीखा जाता है। उसे धारण किस प्रकार किया जाए? शरीर शास्त्र के दृष्टिकोण से जिस व्याख्या को किया गया है, वह यह है कि जब किसी पाठ या अन्य वस्तु को सीखा जाता है तब मस्तिष्क की उस चेतना के कुछ कण मस्तिष्क में शेष रह जाते हैं तो वे पोषक मस्तिष्क पर भी, संरचनात्मक रूपान्तर के रूप में, जो कि शरीर-सम्बन्धी अवस्था कहलाती है, कुछ निशान छोड़ देते हैं, यही निशान 'स्मृति चिन्ह' कहलाते हैं। धारण करने की क्रिया अनवरत क्रिया के रूप में नहीं होती है वरन् यह मस्तिष्क की संरचना का रूपान्तरण है, यही रूपान्तरण 'स्मृति चिन्ह' होते हैं। इस स्मृति-चिन्हों की प्रकृति का पता नहीं लग पाया है, क्योंकि इनका कोई सीधा परीक्षण सम्भव नहीं। जब तक ये चिन्ह हमारे मस्तिष्क में विद्यमान रहते हैं, हम किसी वस्तु को स्मरण कर सकते हैं, पर जैसे ही वह लुप्त हो जाते हैं, हम उसे भूल जाते हैं। इस विचार से लगभग सभी मनोवैज्ञानिक सहमत हैं। परन्तु मनोविश्लेषणवादी उस विचार को नहीं मानते। वे कहते हैं कि किसी भी वस्तु को, जिसे सीखा गया है, पूर्णरूपेण कभी नहीं भुलाया जा सकता है। स्मृति-चिन्ह खो नहीं जाते, वरन् उसको अचेतन मस्तिष्क में फेंक दिया जाता है। वहाँ से वे चेतन मस्तिष्क में स्वयं कभी नहीं आ सकते। किसी वस्तु को भूल जाने का यही कारण है। परन्तु सम्मोहन की अवस्था में वे वहाँ से दोबारा बुला लिये जाते हैं। इस प्रकार धारण करने की शक्ति मस्तिष्क, स्वास्थ्य, रुचि तथा विचार तथा तर्क पर निर्भर रहती है।

धारण-शक्ति को तीन विधियों द्वारा प्रमाणित किया जा सकता है:-

i. जब हम किसी परीक्षा को दे रहे हैं, तो पाठ के मुख्य तत्वों का स्मरण करते हैं। जब लेख के प्रकार की परीक्षा में कोई प्रश्न पूछा जाता है तो तुरन्त एक प्रकार का उत्तेजक बहुत जल्दी सीखे हुए उत्तर का स्मरण कराता है। लेकिन यह स्मरण करने की क्रिया उसी समय सम्भव है जब मस्तिष्क के अन्दर उस पाठ को धारण कर लिया गया हो।
ii. वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में हमसे उन उत्तरों के सामने 'स' लिखने के लिए कहा जाता है जो सही है, और 'ग' उनके सामने, गलत हैं। इसे करते हुए हम सीखे हुए पाठ से लिए गए विवरण को पहचानते हैं और उन विवरणों में से जो पाठ के अन्दर नहीं है उनको 'स' जो पाठ के अन्तर है, अलग करते हैं। यह पहचानने का कार्य तभी तक सम्भव है जब तक सीखा गया पाठ मस्तिष्क के अन्दर धारण किया हुआ है।
iii. किसी पुस्तक के उस अंश को, जो बिल्कुल भुला दिया गया है, दुबारा सीखने में हम समय की बचत करते हैं। यह समय की बचत केवल इसी प्रकार पर होती है कि जो

कुछ भी सीखा गया है, मस्तिष्क के अन्दर किसी न किसी रूप में धारण कर लिया गया है। इस प्रकार प्रमाणित हो जाता है कि धारण-शक्ति मनुष्य के अन्दर विद्यमान होती है।

3. प्रत्यास्मरण (Recalling)

प्रत्यास्मरण उन अनुभवों की मानसिक चेतना-शक्ति है, जिन्हें सीखा जा चुका है। यह धारण-शक्ति पर निर्भर रहता है। यह स्मृति-चिन्हों का याद करना होता है। यदि किसी वस्तु को अच्छी तरह सीखा गया है और उचित रूप से धारण कर लिया गया है तो इसे बड़ी आसानी से स्मरण किया जा सकता है। परन्तु प्रायः ऐसा होता है कि जिस विचार को पूर्णतः अच्छी तरह से धारण कर लिया है, किसी विशेष समय पर उसे स्मरण करना सम्भव नहीं होगा। ऐसा कभी-कभी संवेगात्मक तनाव की वजह से होता है। उदाहरणार्थ, यदि एक बच्चे ा अध्यापक से डरता है तो वह किसी प्रकार अपने पाठ को अच्छी तरह सीख तो लेता है, लेकिन जब अध्यापक इस पाठ के विषय में कक्षा के अन्दर कोई प्रश्न पूछता है, तो वह उसे पुनर्स्मरण करने में असमर्थ रहता है। कभी-कभी परीक्षा के समय हम सम्पूर्ण उत्तर को पुनर्स्मरण करने में असफल रहते हैं, यद्यपि हमारा मस्तिष्क इस बात को कहता है कि हम इस उत्तर को, जिसे हमने सीखा है, अच्छी तरह जानते हैं। यह सब परीक्षा से आशंकित होने की वजह से है।

प्रत्यास्मरण दो प्रकार से होता है:- अनायास तथा स्वाभाविक। स्वभाविक प्रत्यास्मरण, ख्याली-पुलाव की स्थिति में, जब हम अपने विचारों को पूर्ण स्वतन्त्राता प्रदान कर लेते हैं, देखा जा सकता है। सोने के समय या खाना खाने के पश्चात हम ऐसे प्रत्ययों और विचारों से भर जाते हैं, जो भूतकाल के अनुभवों से सम्बन्धित होते हैं। इस प्रकार ऐसा प्रत्यास्मरण, जिसके लिए हमें कोई प्रयास नहीं करना पड़ता, अनायास प्रत्यास्मरण कहलाता है। ऐसा प्रत्यास्मरण, जिसके अन्तर्गत हमें अनुभव आदि को याद रखने के लिए चैतन्य होकर प्रयास करना पड़ता है, स्वाभाविक प्रत्यास्मरण कहलता है। परीक्षा के समय जब हम किसी प्रश्न के उत्तर को स्मरण करने के लिए प्रयास करते हैं तो वह विमर्शपूर्ण प्रत्यास्मरण होता है।

4. पहचानना (Recognition)

पहचानना उस वस्तु या उद्देश्य का जानना होता है जिसे पूर्व समय में धारण लिया गया है। पहचानने में एक प्रकार की चेतना होती है, जिसके द्वारा जिस चीज को पहले जाना जा चुका है, उसे फिर जान लिया जाता है। पहचानना, सामान्यता की अनिर्दिष्ट भावना के रूप में हो सकता है। किन्तु वस्तु को देखकर आपके मन में यह विचार उठता है कि आपने इस वस्तु को, जब आप इसे नहीं जानते थे, कहीं देखा है और इसे जाना है, या पहचानना किसी वस्तु का पूर्व-निश्चित परिचय पाना हो सकता है। आप किसी बच्चे से मिलते हैं और अपने एक गहरे दोस्त की तरह उसे पहचानते हैं। यह मौलिक होता है, क्योंकि यह निम्नवर्गीय प्राणियों की मानसिक क्रिया-दक्षताओं को विशिष्टता प्रदान करता है। सुस्पष्ट पहचानना मानसिक उद्भव की

उच्च श्रेणी को प्रस्तुत करता है, क्योंकि यह उच्चवर्गीय प्राणियों की मानसिक क्रियाओं को विशिष्ट बनाता है।

पहचानने और स्मरण करने की दोनों प्रवृत्तियों में भिन्नता है। पहचानने के अन्तर्गत अनुरूप अनुभव के भाव-बोध द्वारा उद्देश्य की सहायता मिलती है, पर स्मरण करने में नहीं। पहचानना किसी वर्तमान वस्तु का स्मरण करना तथा जैसे आपने पहले इस वस्तु को नहीं देखा है, पूरी तरह समझना होता है। खूब अच्छी तरह पहचानना, पूर्व बोधों की परिस्थितियों के स्मरण करने को अन्तर्ग्रस्त करता है। अनुरूपता की भावना पहचानने की शक्ति का अवलम्बन और पहचानने के कार्य में एक आवश्यक भाग होती है। लेकिन इस बात का स्मरण रखना चाहिए कि अनुरूपता की इस भावना की अपेक्षा, पहिचानने का कार्य अधिक है। यह तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक कि पहचानी हुई वस्तु को हमारे अतीत के अनुभव के अन्दर स्थापित नहीं कर दिया जाता।

स्मृति के प्रकार (Types of Memory)

व्यक्तिगत विभिन्नताओं के कारण सभी बच्चे की स्मरण करने, धारण करने तथा पहचानने की क्षमता एक जैसी नहीं होती है। कोई बच्चा किसी चीज को जल्दी याद कर लेता है और याद की गई बातों को बहुत लम्बे समय तक याद रखने में सक्षम होता है और कोई बच्चा ऐसा नहीं कर पाता। स्मृति के सभी पहलुओं पर विचार करते हुए मनोवैज्ञानिकों ने स्मृति के निम्नलिखित रूप निश्चित किए हैं:-

1. **संवेदी स्मृति (Sensory memory)** - संवेदी स्मृति वैसी स्मृति संचयन को कहते हैं जिसमें सूचनाओं को सामान्यतया एक सेकेण्ड या उससे कम अवधि के लिए ब्च्चे ेरख पता है। यह दो तरह की होती है – प्रतिमा-सबंधी स्मृति एवं प्रतिध्वनिक स्मृति जिसमे क्रमशः 1 सेकेण्ड तक की देखे गए ब्च्चे ेएवं वस्तु का दृष्टि चिह्न (visual trace) तथा सुनी गयी ध्वनि का श्रवण चिह्न (auditory trace) अपने मन में रख पाते हैं।
2. **लघु-अवधि स्मृति (Short-term memory)** - इसे विलियम जेम्स ने प्राथमिक स्मृति भी कहा है। इसमें किसी विषय एवं घटना को अधिक-से-अधिक 20 से 30 सेकेण्ड तक धारित करके रखा जाता है तथा इसके विषय को बच्चा एक या दो प्रयासों में ही सीखे हुए होते हैं, जैसे - अपरिचित फोन नंबर।
3. **दीर्घ-अवधि स्मृति (Long-term memory)** - विलियम जेम्स ने इसे गौण स्मृति भी कहा है। इस तरह की स्मृति में ब्च्चे ेकिसी पाठ, घटना आदि को कम-से-कम 30 सेकेण्ड तक याद किया रहता है तथा अधिक-से-अधिक दिनों तक याद रखता है, जैसे - अपना जन्मदिन, नाम आदी। घटनाओं एवं अनुभूतियों के स्वरुप के आधार पर ट्वेलिंग ने दीर्घ-अवधि स्मृति को दो प्रकार बताये हैं:-

i. **प्रासंगिक स्मृति (Episodic memory)** - इस तरह की स्मृति में वैसी व्यक्तिगत अनुभूतियाँ एवं घटनाएँ होती हैं जो अस्थायी रूप से बच्चे के साथ घटित हुई होती हैं, जैसे - किसी पार्क या सिनेमा इत्यादि की स्मृतियाँ।

ii. **अर्थगत स्मृति** (Semantic memory) – इस तरह की स्मृति में बच्चे I शब्दों, संप्रत्यय तथा किसी तथ्य के अर्थ को संचित करके रखता है, जैसे – सामान्य Boy का अर्थ लड़का, 2+2 = 4, आदि अर्थगत स्मृति की श्रेणी में आता है।

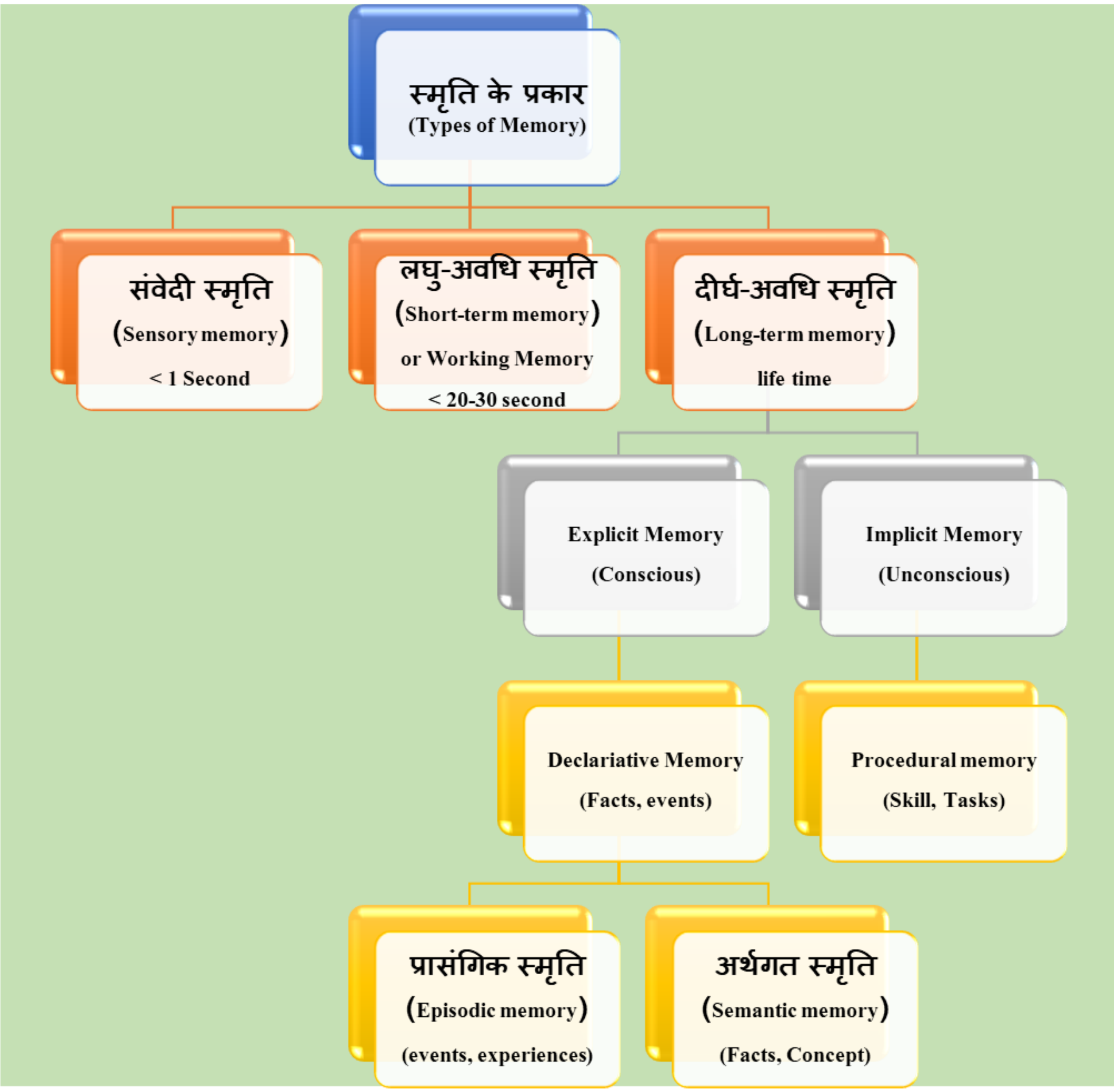

चित्र संख्या: 5.6. स्मृति के प्रकार

स्मृति की विशेषताएँ (Characteristics of Memory)

1. **शीघ्र समझ लेना** – जिस बच्चे की स्मरण शक्ति अच्छी होती है, वह किसी भी बात को बहुत जल्दी समझ लेता है।
2. **शीघ्र पुनःस्मरण** – जिस बच्चे की स्मृति अच्छी होती है, वह किसी पूर्व अनुभव की आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त याद कर लेता है।
3. **शीघ्र पहचान लेना** – अच्छी स्मृति वाला बच्चा पूर्व प्राप्त अनुभव से सम्बन्धित बच्चा या स्थान को शीघ्र पहिचान सकता है।

4. **धारण का स्थायित्व** – अच्छी स्मृति की एक विशेषता यह है कि कोई बच्चा कितने समय तक किसी बात को याद रख सकता है।
5. **व्यर्थ की बातों को भूल जाना** – निरर्थक बातों को भूल जाना अच्छा होता है। इसलिए ब्च्चे ेको केवल उन्हीं बातों को याद रखना चाहिए जो भविष्य के लिए उपयोगी हों।

शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में स्मृति के कार्य (Function of memory in Educational Context)

स्मृति मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण प्रत्यय है। मानव जीवन में इसकी अहम् भूमिका है। मनुष्य का अस्तित्व स्मृति पर ही आश्रित है। जीवन के सभी प्रकार के कार्य, अपनी पहचान अन्य मित्रों तथा सम्बन्धियों की पहचान स्मृति पर ही निर्भर है। जब कभी किसी बच्चे की स्मृति नहीं रहती तब किसी सम्बन्धी तथा स्थान को नहीं पहचान पाता है। शिक्षा ग्रहण करने योग्य वही होता है जिसकी स्मृति सामान्य होती है। मनुष्य ने संसार में महान कार्य सभी जीवन क्षेत्र में स्मृति के आधार पर किये गए हैं। बच्चे की स्मृति की योग्यता का विस्तार भी विशाल होता है। स्मृति के कार्यो का विस्तार भी अधिक व्यापक है। मनोविज्ञान तथा शिक्षण सीखनाकी दृष्टि से स्मृति के प्रमुख चार कार्यो का उल्लेख किया है, यह कार्य इस प्रकार हैं-

1. **स्मृति एक मानसिक योग्यता** – स्मृति मानसिक योग्यता का एक प्राथमिक कारक है। थर्स्टन ने अपने अध्ययन में 'प्राथमिक मानसिक योग्यताओं' के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इन्होंने छः योग्यताओं को दिया जिसमें शाब्दिक तथा स्मृति योग्यताओं का शिक्षा की प्रक्रिया में विशेष महत्व है। यह स्मृति योग्यता मानसिक योग्यताओं के रूप में लगभग 18 वर्ष की आयु तक पूर्ण विकसित होती है। बुद्धि-लब्धि की गणना में स्मृति योग्यता को भी सम्मिलित किया जाता है। इसे जन्म-जात मानते हैं, आयु की वृद्धि के साथ विकसित होती है। शिक्षा प्रक्रिया हेतु स्मृति योग्यता पूर्व आवश्यकता मानी जाती है।
2. **स्मृति एक सीखनाकी प्रक्रिया** – क्रियाओं के करने तथा अनुभव से सीखनाहोता है। सीखनाकी प्रक्रिया औपचारिक तथा अनौपचारिक रूप से जीवनपर्यन्त चलती रहती है, जिसमें हम सभी स्मरण करते हैं। जो बच्चा जितनी जल्दी स्मरण कर लेता है और अधिक समय तक स्मरण रखता है, उसे उतना ही योग्य माना जाता है। स्मरण करने और स्मरण रखने की प्रक्रिया में स्मृति योग्यता की ही अहम् भूमिका रहती है। अवस्थाओं और परिस्थितियों के अनुसार स्मरण की प्रक्रिया व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से चलती है। शोध अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि रटने की क्षमता का बुद्धि-लब्धि से कोई सम्बन्ध नहीं होता है कम बुद्धि का बच्चे ा भी अधिक रट लेता है। रटने की प्रक्रिया का सम्बन्ध अभ्यास से अधिक होता है। यह आवश्यक नहीं कि अधिक स्मृति योग्यता का बच्चे ा अधिक रट ले।
3. **स्मृति एक शिक्षण का स्तर (हरबर्ट)** – शिक्षण की प्रक्रिया को सीखनाकी दृष्टि से तीन स्तरों में विभाजित किया गया है। प्रथम शिक्षण का स्तर स्मृति होता है। शिक्षण प्रक्रिया का आरम्भ स्मृति स्तर से होता है। उसको हरबर्ट ने दिया। इसमें पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण पर अधिक बल दिया जाता है। प्रत्ययों, तथ्यों, नियमों आदि को बच्चे बिना

समझे रट लेते हैं। रटने की क्षमता का बुद्धि से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। बोध स्तर पर पाठ्यवस्तु के स्वामित्व को विकसित किया जाता है। चिन्तन स्तर पर सौन्दर्यानुभूति स्मरण समाधान की क्षमताओं का विकास किया जाता है। व्यवहारिक दृष्टि से शिक्षण–प्रक्रिया में स्मृति को अधिक महत्त्व दिया जाता है जो बच्चे ा, तथ्यों, प्रत्ययों, नियमों, सिद्धान्तों इत्यादि को सीख लेता है वहीं अधिक अंक प्राप्त करता है। इस प्रकार शिक्षण की प्रक्रिया में स्मृति की अहम् भूमिका रहती है। स्मृति स्तर के शिक्षण में हरबर्ट की 'पंचपदीय योजना' का उपयोग किया जाता है। इसमें अभ्यास, प्रस्तुतीकरण से रटने में सहायता मिलती है। साथर्क तथ्यों को सीखनामें सुगमता होती है। पाठ्यवस्तु के तत्वों को मनोवैज्ञानिक क्रम में व्यवस्थित करने से भी सीखनासरल होता है।

4. **स्मृति एक शैक्षिक उपलब्धि** – प्रत्ययों एवं तथ्यों को रटने की प्रक्रिया के साथ यह एक शैक्षिक उपलब्धि भी है। शिक्षण व सीखनाकी प्रक्रियाओं की प्रभावशीलता का मापन शैक्षिक परीक्षणों द्वारा किया जाता है। शैक्षिक परीक्षण सामान्यतः तीन प्रकार के हैं–(1) मौखिक परीक्षण, (2) लिखित परीक्षण तथा (3) प्रयोगात्मक परीक्षण।

इन परीक्षणों में ऐसे प्रश्न दिये जाते हैं जिनका उत्तर बच्चा प्रत्यास्मरणय करके देता है। जिन तथ्यों व प्रत्ययों को रट लिया है उन्हीं को बच्चा मौखिक तथा लिखित रूप में प्रस्तुत करता है। वे जितना सही रूप में प्रत्यास्मरण कर लेता है उसकी शैक्षिक उपलब्धि उतनी ही अधिक होती है। यदि किसी बच्चे की स्मृति योग्यता अधिक है, परन्तु वह तथ्यों व प्रत्ययों को सीखकर सही रूप में प्रत्यास्मरण नहीं कर पाता है, तब उसकी शैक्षिक उपलब्धि अधिक नहीं होगी। शैक्षिक उपलब्धि में अभ्यास तथा सीखने का विशेष महत्व है।

शैक्षिक परीक्षणों से रटने तथा स्मरण रखने की क्षमताओं का मापन किया जाता है। इस सन्दर्भ में निदानात्मक परीक्षणों का भी उपयोग करते हैं जिससे स्मरण न रखने के कारणों को ज्ञात किया जाता है। स्मरण क्षमताओं के विकास एवं सुधार हेतु सुझाव भी दिये जाते हैं जिससे स्मरण की क्षमताओं को अधिक विकसित करने का प्रयास किया जाता है।

समेकन (Summary)

खंड की यह अंतिम इकाई चार महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं पर केन्द्रित है – मस्तिष्क, अभिप्रेरणा, अवधान, स्मृति। हमने इस इकाई की शुरुआत में मस्तिष्क के संरचना एवं उसके विकास पर चर्चा की। तदुपरान्त हमने यह जाना की शिक्षण–सीखनाकी प्रक्रिया में मस्तिष्क की क्या भूमिका होती है? इसके बाद अभिप्रेरणा के संप्रत्यय को परिभाषाओं की सहायता से समझने का प्रयास किया। अभिप्रेरणा के प्रमुख तत्वों पर चर्चा भी की गई। साथ–ही बच्चे के लिए अभिप्रेरणा का क्या महत्त्व है? इस बात पर भी विस्तार से चर्चा की गयी। इसके बाद अवधान के संप्रत्यय को स्पष्ट कर उसके शैक्षिक निहितार्थो को समझा गया। इकाई के अंतिम खण्ड में स्मृति के अर्थ, प्रकार एवं प्रमुख घटकों पर विस्तार से चर्चा की गयी तथा शैक्षिक परिदृश्य में स्मृति की विवेचना भी किया गया।

अभ्यास प्रश्न

1. मस्तिष्क के प्रांतस्था (कोर्टेक्स) एवं इसके विभिन्न क्षेत्र का सचित्र व्यख्या कीजिये।
2. मानव मस्तिष्क की बच्चे के सीखनाप्रक्रिया पर क्या प्रभाव पड़ता है? विस्तार से प्रकाश डालें।
3. शिक्षण–सीखनाप्रक्रिया में अभिप्रेरणा के स्थान की विवेचना कीजिये।
4. बच्चे की सीखनाप्रक्रिया में अवधान का क्या महत्त्व है?
5. स्मृति के प्रमुख घटक क्या हैं? शैक्षिणिक परिदृश्य में इनके महत्त्व को भी रेखांकित कीजिये।
6. स्मृति बच्चे की सीखनाप्रक्रिया में किस प्रकार योगदान देता है? व्याख्या कीजिये।

संदर्भ और उपयोगी पठन सामग्री

गुप्ता, एस.पी. एवं गुप्ता, अलका (2004). उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, इलहाबाद – शारदा पुस्तक भवन

ओझा आर.के .(2005), मनोविज्ञान में समकालीन उपगम एवं विचारधाराएँ, आगरा – विनोद पुस्तक मंदिर

शर्मा, गणपतराम व यास, हरिश्चंद्र (2007), सीखनाशिक्षण और विकास के मनोसामाजिक आधार – जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी

भटनागर, सुरेश (2008), शिक्षा मनोविज्ञान तथा शिक्षणशास्त्र, आगरा – विनोद पुस्तक मंदिर

सिंह, अरुण कुमार (2005), मनोविज्ञान, पटना – भारती भवन

सिंह, अरुण कुमार (2001), शिक्षा मनोविज्ञान, पटना – भारती भवन

सिंह, अरुण कुमार (2005), उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, दिल्ली – मोतीलाल बनारसीदास

Anderson, J. R. (1995). Learning and memory: An integrated approach. New York: Wiley.

Bruer, J. T. (1999a). In search of . . . brain-based education. Phi Delta Kappan, *80*, 648-655.

Baars, B. J., & Gage, N. M. (Eds.) (2010). *Cognition, brain, and consciousness* (2nd ed.). New York: Elsevier.

Benjamin Jr, L. T. (2007). *A Brief History of Modern Psychology*. Blackwell publishing.

Baron, R. A. (2001). *Psychology*. 5th Edition. Pearson Education, New Delhi, India.

Buck, R. (1988). *Human Motivation and Emotion*. John Wiley & Sons.

Byrnes, J. P., & Fox, N. A. (1998). The educational relevance of research in cognitive neuroscience. Educational Psychology Review, *10*, 297–342.

Chauhan, S.S) .1990 .(*Advanced Education Psychology* .House, New Delhi : Vikas Publication

Edwards, D. C. (1998). *Motivation and Emotion: Evolutionary, Physiological, cognitive, and Social Influences (Vol. 3).* SAGE publications.

Esgate, A. & Groome, D. (2005). *An Introduction to Applied cognitive Psychology*. Hove: Psychology Press, USA.

Eysenck, M. W. (2013). *Simply Psychology*. New York: Psychology Press.

Feist, G. J and Rosenberg, E. L. (2015). *Psychology: Perspectives and Connections.* New York: McGraw- Hill Education.

Feldman, R. S. (2015). *Essentials of Understanding Psychology*. New York: McGraw- Hill Education.

Gorman, P. (2004). *Motivation and Emotion*. Routledge.

Howard, D.V.) 1983 .(*Cognitive Psychology* .New York, McMillan publishing, Co. Inc.
Hall, N. C., & Goetz, T. (2013). *Emotion, Motivation, and Self-regulation: A Handbook for Teachers*. Emerald Group Publishing.
Heller, K. W., Forney, P. E., Alberto, P. A., Bet, S. E., & Schwartzman, M. N. (2009). *Understanding physical, health, and multiple disabilities* (2nd ed.). Boston: Allyn & Bacon
Hudley, C., & Novak, A. (2007). Environmental influences, the developing brain, and aggressive behavior. *Theory into Practice, 46,* 121–129.
Koehl, M., & Abrous, D. N. (2011). A new chapter in the field of memory: Adult hippocampal neurogenesis. European Journal of Neuroscience, *33,* 1101–1114.
L. First, G. Lister, & A. A. Gersohon (Eds.), *Rudolph's pediatrics* (22nd ed.). New York: McGraw-Hill.
Meece, J. L. (2002). *Child and adolescent development for educators* (2nd ed.). New York: McGraw-Hill.
Nelson, C. A. (2011). Brain development and behavior. In A. M. Rudolph, C. Rudolph,
Nelson, K., & Fivush, R. (2004). The emergence of autobiographical memory: A social cultural developmental theory. *Psychological Review, 111,* 486–511
Neville, H. J., & Bavelier, D. (2001). Variability of developmental plasticity. In J. L. McClelland & R. S. Siegler (Eds.), *Mechanisms of cognitive development: Behavioral and neural perspectives* (pp. 271–287). Mahwah, NJ: Erlbaum
Meichenbaum, D. (1977). *Cognitive-behavior modification: An integrative approach.* New York: Plenum.
Moreno, R. (2007). Optimizing learning from animations by minimizing cognitive load: Cognitive and affective consequences of signaling and segmentation methods. *Applied Cognitive Psychology*, *21*, 1–17.
Moreno, R. (2010) .*Educational Phycology*. New York: John Wiley & Sons.
Moreno, R., & Mayer, R. E. (1999). Cognitive principles of multimedia learning: The role of modality and contiguity. *Journal of Educational Psychology, 91*, 358–368
Santrock, J.W. (2011). *Educational Psychology*. New York: McGraw-Hill,
Sousa, D. A. (1995). *How the brain learns: A classroom teacher's guide*. Reston, VA: National Association of Secondary School Principals.
Steinberg, L. (2009). Adolescent development and juvenile justice. *Annual Review of Clinical Psychology, Vol. 5.* Palo Alto, CA: Annual Reviews.
Toga, A., & Mazziotta, J. (Eds.) (2011). *Brain Mapping.* New York: Elsevier.
Varma, S., McCandliss, B. D., & Schwartz, D. L. (2008). Scientific and pragmatic challenges for bridging education and neuroscience. Educational Researcher, *37,* 140–152.
van Ettinger-Veenstra, H. M., & others (2010). Right-hemispheric brain activation correlates to language performance. *Neuroimage*, *49,* 3481–3488.
Wood, S. E., & Wood, E. G. (1999). *The world of psychology* (3rd ed.). Boston: Allyn & Bacon.
Weinberger, D. (2001, March 10). A brain too young for good judgment. *New York Times,* p. A13.
Woolfolk, A. (2005). ***Educational Psychology***. Landon: Pearson